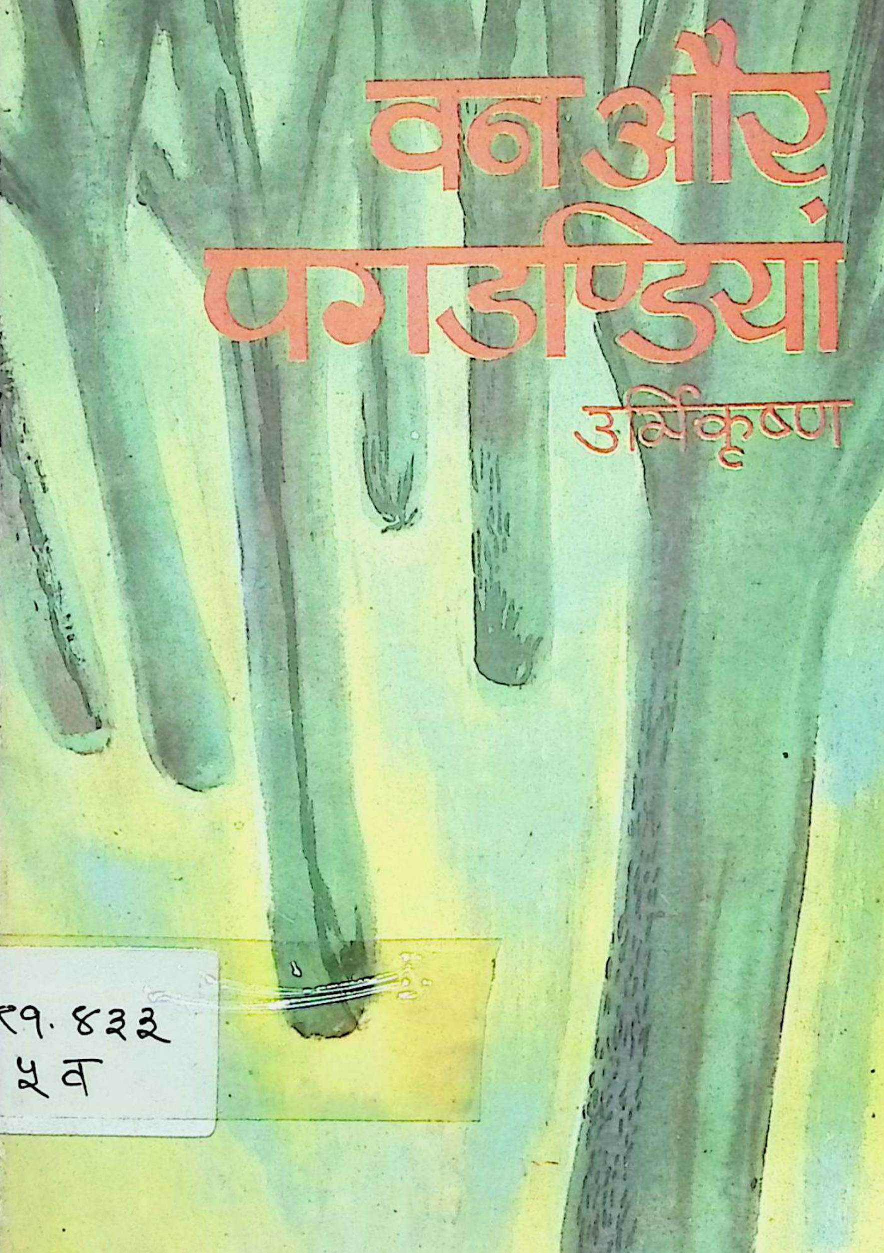

वन और पगडण्डियां

उर्मिकृष्ण

९१.४३३
५ व

वन और पगडण्डियां

डा. डिल्ली रमण रेड्डी
कल्याणी रेड्डी स्मारक
पुस्तकालय

उर्मिकृष्ण

उर्मिकृष्ण

मध्यप्रदेश के हरदा में जन्मी (श्रीमती) उर्मिकृष्ण राजनीति में एम० ए० हैं और साहित्य की अनेक विधाओं में लिखती तथा लगभग सभी हिन्दी की सम्मानित पत्र-पत्रिकाओं में निरन्तर छपती रही हैं। फर्क बस इतना ही है कि पहले कु० उर्मि दुबे के नाम से लिखती थीं और अब उर्मिकृष्ण के नाम से लिखती हैं।

इनकी संवेदनशीलता प्रत्येक मानवीय परिस्थिति का बड़ा ही भावुक स्पर्श करती है और उसका समाधान भावना के धरातल के साथ ही विवेक के स्तर पर भी खोज निकालती हैं। बुकक्लब योजना के अन्तर्गत छठे सेट में प्रकाशित 'वन और पगडंडियाँ, की पाण्डुलिपि हरियाना सरकार द्वारा पुरस्कृत है।

संपर्क सूत्र–
४०/१, महेशनगर,
अंबाला छावनी (हरियाना)

पुस्तकालय

प्रचारक बुक क्लब
हिन्दी प्रचारक संस्थान
पो०बा०१०६,पिशाचमोचन,वाराणसी-२२१००१

डा. डिल्ली रमण रेग्मी
कल्याणी रेग्मी स्मारक
पुस्तकालय

वन और पगडण्डियां

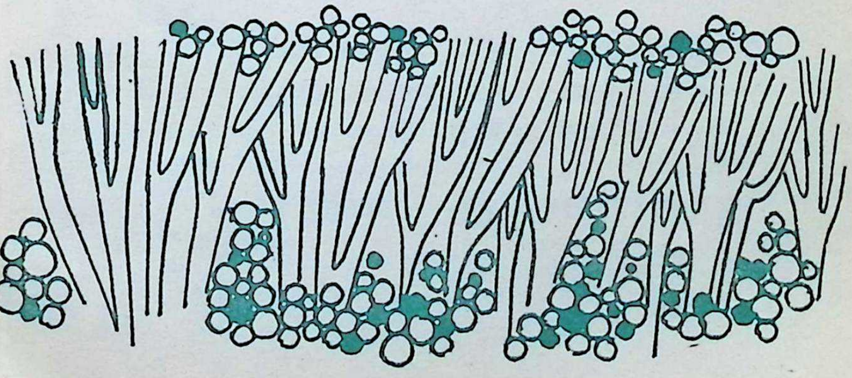

भारत के प्रथम बुक क्लब
प्रचारक बुक क्लब
हिन्दी प्रचारक संस्थान
पो० बा० १०६, पिशाचमोचन, वाराणसी-२२१००१ के लिए
विजय प्रकाश बेरी द्वारा प्रकाशित तथा
कमला मुद्रण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित
सन् १९७७

Urmi Krishna
WAN AUR PAG-
DANDIYAN
Novel

मूल्य : ४.००

१

''मिस दीपिका, प्लीज'''एक मिनट रुकिए जरा। कुछ बात कहनी थी आपसे।''

वह जल्दी-जल्दी क्लास रूम की ओर पग बढ़ा रही थी। रुक कर बोली, कहिए, पर घण्टी बज चुकी है। डॉ० द्विवेदी की क्लास को देर न हो जाए।''

''अधिक समय नहीं लूंगा, मुझे भी अटेण्ड करना है, आप से कुछ बातें करने के लिए समय निश्चित करना चाहता था।''

''बातें करने के लिए समय निश्चित करना चाहते हैं? किन्तु बातें तो हम कभी और कहीं भी कर सकते हैं और प्रायः करते रहते हैं उसके लिए समयादि की औपचारिकता में पड़ने की क्या आवश्यकता है?'' दीपिका ने सहज और मधुर स्वर में कहा।

''नहीं, मैं एकांत चाहता था, जहां हम धैर्यपूर्वक, निश्चिन्त होकर बातें कर सकें।''

''तो जब और जहाँ आप कहें।'' दीपिका कुछ सोच में पड़ गई।

''कल शाम पाँच बजे अजन्ता में आ सकेंगी?''

''ऐसी सार्वजनिक जगह पर तो नहीं मिस्टर रवीन, क्यों न हम कंचन के घर पर मिल लें?''

''मैंने कहा न कि एकान्त होना चाहिए।'' रवीन ने एतराज किया।

''कंचन का अलग अपना स्टडी रूम और ड्राइङ्ग रूम है। वैसे तो कंचन मेरी बहुत विश्वस्त सहेली है। किन्तु आप कहें तो वह भी उपस्थित न रहेगी।'' दीपिका ने आश्वस्त किया।

''तो फिर ठीक है। कल शाम पाँच बजे?'' कहते हुए रवीन ने उसकी ओर प्रश्न-भरी दृष्टि से देखा।

"ठीक।" वह बोली और तेज गति से क्लास-रूम की ओर चल दी। रवीन जानबूझ कर पीछे रह गया।

क्लास शुरू हुए कुछ मिनट बीत गये थे। दीपिका पीछे की सीट पर बैठ गई। पहले तो कुछ देर लेक्चर में वह मन न लगा सकी। रवीन उससे क्यों मिलना चाहता है? यही प्रश्न उसके हृदय और मस्तिष्क को निरन्तर मथित कर रहा था। सहसा उसके उज्ज्वल निर्दोष मुख पर एक मुस्कान बिखर गई। उसके मन से जैसे प्रश्न भार उतर गया और वह शान्त सुस्थिर सजग होकर भाषण सुनने लगी। रवीन अन्त तक नहीं आया। उसके बाद उस दिन वह कॉलेज में दिखाई न पड़ा।

कॉलेज के अतिरिक्त और दूसरे भी अनेक युवक उसके लोभी हैं, दीपिका यह अच्छी तरह जानती है। जैसा आकर्षण साधारणतः युवकों में युवतियों के प्रति होता है, यह उस कोटि का आकर्षण नहीं। अधिकांश युवक उससे इतने प्रभावित हैं कि उसके नजदीक आने का साहस नहीं करते, घनिष्ठता की तो बात ही अलग है। केवल प्रशान्त ही निर्द्वन्द्व होकर उसकी संगति में विचरण कर पाता है। समीर द्विवेदी के साहचर्य को भी दीपिका पसन्द करतो है, किन्तु वह कुछ अन्तर्मुखी प्रकृति का है। वह छात्र-छात्राओं में अधिक नहीं घुलता-मिलता और रवीन? निश्चय ही वह दुःसाहसी है। कुछ-कुछ निर्लज भी। यद्यपि वह इन प्रवृत्तियों को गाम्भीर्य और शिष्टता के आवरण में छिपाए रखता है। विनोद प्रिय है और विकट स्थिति आने पर हास्य का लबादा ओढ़ लेता है।

यह कैसा आकर्षण है दीपिका में कि युवक उसके लिए लालायित होकर भी उसके निकट नहीं आ पाते। निश्चय ही मात्र रूप का आकर्षण यह नहीं। दीपिका सुन्दरी है, पर उस सौन्दर्य को अप्रतिम नहीं कहा जा सकता। उसकी छोटी बहन गीतिका तो उससे अधिक सुन्दर है। उसका रंग भी अधिक गोरा है। और भी अनेक लड़कियाँ हैं। उच्च सम्भ्रान्त वर्ग की अधिकांश लड़कियाँ रूप की स्वामिनी हैं। कंचन, नीलिमा और प्रीति। हेमा और उर्वशी इन

सब में से कई दीपिका से अधिक सुन्दर होंगी। कई आधुनिकतम प्रसाधनों और वस्त्रों के प्रयोग से सुन्दरतम दिखने के प्रयास में लगी रहती हैं।

कहते हैं लड़के प्रखर बुद्धि और मेघावी छात्राओं की ओर शीघ्र ही आकर्षित हो जाते हैं, किन्तु दीपिका और कुछ भले ही हो, अच्छी छात्रा तो कभी नहीं रही। हाँ, फेल कभी नहीं हुई। मुख्यतः तृतीय श्रेणी में, अन्यथा द्वितीय में निकल ही जाती है।

तो ?

पीरियड समाप्त होते ही दीपिका पुस्तकें और पर्स लेकर पहले ही बाहर आ गई। वह एक ओर खड़ी होकर कंचन, नीलिमा और हेमा की प्रतीक्षा करने लगी। तभी प्रशान्त ने आकर पूछा, "दीपिका जी, आपने प्रीति को कहीं देखा ? आज वह डॉ० द्विवेदी की क्लास में भी नहीं आई।"

"मुझे तो वह आज सुबह से नहीं मिली।"

"आप जरा देर से आई थीं न, मैंने सोचा, वह आपको बता कर कहीं चली गई होगी।"

"नहीं, मुझे तो रबीन ने रोक लिया था।"

प्रशान्त उसे धन्यवाद देकर चला गया।

"हेलो दीप···। क्या बातें हो रही थी प्रशान्त से ?" हेमा ने दूर से आते हुए कहा।

"खिड़की में से रबीन और आपका हास्य-विनोद देखने का सौभाग्य मुझे भी प्राप्त हुआ है।" कंचन ने बात आगे बढ़ायी। हेमा ने फिर व्यंग्य किया, "भाई हमसे तो ऐसा मधुर व्यवहार कोई नहीं करता ? खैर, तुम्हारी बात सुनकर ही सन्तोष प्राप्त कर लेंगे, यदि तुम सुनाओ।"

"नाटी गर्ल !" दीपिका ने हेमा की चोटी पकड़ते हुए कहा, "यही सब बताने के लिए तो मैं तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही हूँ और तुम यूँ ही कैंची की तरह जबान चलाए जा रही हो। जाओ, अब मैं कुछ नहीं बताती।"

"हाँ प्लीज···दीपिका, बताओ ना।" हेमा ने अनुरोध के स्वर में कहा।

"चलो उधर, वहाँ पलाश के नीचे बैठेंगे। यहाँ मार्ग में ठीक नहीं रहेगा। नीलिमा कहाँ है ? उसे भी बुला लें।"

नीलिमा भी आ जायेगी अभी, "वह हेमेन्द्र से कुछ नोट्स माँग रही है।" कंचन ने उत्तर दिया।

चारों सखियाँ पलाश के नीचे हरी घास पर पसर कर बैठ गईं। गीतिका भी वहाँ पहुँच गई।

"तुम सबको कल चार बजे तक कंचन के यहाँ पहुँच जाना है।" दीपिका ने कहा।

"मेरे यहाँ ? क्यों मेरे यहाँ कल क्या होने वाला है ?" कंचन ने चकित होकर कहा।

"एक एकांकी नाटक खेला जाएगा।" दीपिका ने छद्म गाम्भीर्य से कहा।

"भाई, पहेलियाँ न बुझाओ। हम तो केवल यह जानना चाहती थीं कि आज रबीन और प्रशांत से क्या बातें हुईं। नाटक-वाटक में तो हमें तभी मजा आ सकता है, जब उसकी नायिका दीपिका जी हों।" हेमा बोली।

"हाँ-हाँ उसकी नायिका दीपिका ही है।" किन्तु उसमें नायक कोई नहीं है। केवल एक खलनायक होगा, रबीन। दीपिका ने उन्मुक्त उज्ज्वल हास्य बिखेरते हुए कहा।

"अच्छा अब साफ-साफ बताओ दीप। हमारा धैर्य टूट रहा है।" नीलिमा बोली।

"बताती हूँ, सब बताती हूँ। डॉ० द्विवेदी की क्लास में आते समय मुझे रबीन ने रोक लिया। कहने लगा तुमसे एक बात कहनी है, कोई समय और स्थान निश्चित कर दो। चाहता था, मैं उससे अजन्ता में मिलूँ। वहाँ जाने से तो मैंने इन्कार कर दिया। मैंने कहा कि हम कंचन के घर पर मिल सकते हैं। पर, वह बार-बार एकान्त पर जोर दे रहा था। तब मैंने कहा, यदि वह चाहे तो कंचन भी उपस्थित नहीं रहेगी। इस पर वह कल संध्या पाँच बजे कंचन के घर आने का वचन पक्का कर गया है।"

"कौन-सी गुप्त बातें करना चाहता है वह एकान्त में ?" सब एक साथ बोल उठीं।

"यह तो मैं भी नहीं जान पायी, पर तुम लोगों के मनोरंजन के लिए इतना किए देती हूँ कि तुम किसी साथ वाले कमरे में चुपचाप सब सुनती रहना। मेरे संकेत करने पर कमरे में आ जाना। पर देखो, रबीन को तनिक भी सन्देह न होने पाए। नहीं तो सब मजा किरकिरा हो जायेगा।"

कंचन ने चुहल करते हुए कहा, "भाई दीप, अपने मन की बात साफ-साफ कह दो। तुम चाहो तो मैं मन्त्रोच्चार और कन्यादान के लिए पण्डित आदि की व्यवस्था कर रखूँ।"

"बको मत, मूर्ख लड़की। मैं तो आज उसी समय रबीन को दुत्कार देती कि मुझे गुप्त वार्तालाप नहीं करना, पर यह सोच कर रह गई कि जरा उसे बनाएँगे। मनोविनोद होगा।" दीपिका ने कहा।

हेमा बोली, "ठीक है, कल चार बजे तक हम सब पहुँच जाएँगी। प्रीति जा रही है कहो तो उसे भी सम्मिलित कर लें इस एकांकी के दर्शकों में ?"

"हाँ-हाँ अवश्य, दर्शक नाटक की सफलता का प्रमाण देते हैं। बस इतना ध्यान रखना कि पहले ही तुम लोग भण्डाफोड़ न कर दो।"

दीपिका ने प्रीति को आवाज देकर बुला लिया, "प्रीति, सुनो। आज तुम क्लास में नहीं आई ? अभी प्रशान्त तुम्हारे लिए पूछ रहे थे।"

"हाँ, भैया मुझे मिल चुके हैं। आज जरा सिर में दर्द था, इसलिए एक सरोडीन लेकर लेडीज रूम में ही बैठी रही।"

"आओ, तुम्हें एक मनोरंजक बात बताएँ। इससे तुम्हारा सिर-दर्द भी ठीक हो जायेगा।"

किन्तु प्रीति को इसमें अधिक रस न आया। बोली, "क्षमा करना, मैं नहीं आ सकूँगी, मैं···मैं···चलती हूँ, देर भी तो हो रही है। भैया राह देखते होंगे।"

"अरे ऐसा मुँह बनाती हो प्रीति जैसे मैंने कोई बेहद कड़वी बात कह दी हो।"

"नहीं जरा सिर में दर्द बढ़ गया है।"

"गई काम से।" कंचन ने ऐसा अभिनय करते हुए कहा कि सब एक साथ खिलखिला पड़ीं। प्रीति मुस्कराने के बजाय और गम्भीर हो आई।

जब राह में दीपिका और गीतिका दोनों अकेले ही रह गईं, तो गीतिका ने कहा, "दीदी क्या सोचतो हो तुम? रबीन तुमसे क्या कहेगा?"

"तुम्हारा क्या विचार है?"

"प्रेम निवेदन करेगा शायद।"

"इसकी सम्भावना अधिक है। यद्यपि निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता।"

"तुम क्या उत्तर दोगी?"

"अरी, उत्तर क्या मैंने अभी से सोच रखा है? न जाने क्या कहना चाहता हो, जैसा अवसर पर उचित समझूंगी, दे दूँगी।"

एक पल रुककर गीतिका ने पुनः प्रश्न किया, "दीदी, तुम्हें लज्जा नहीं आयेगी ऐसे प्रसंग में?"

"मुझे लज्जा क्यों आने लगी? मैं स्वयं तो उससे कोई प्रेम-निवेदन कर नहीं रही—उचित व्यक्ति मिलने पर ऐसा किया भी जा सकता है। वल्कि स्वमेव प्रकट हो जाता है—मैं तो उसे केवल बनाना चाहती हूँ।"

"दीदी, मैं तो ऐसा कभी न कर सकूंगी। मैं तो कल वहाँ आ भी न सकूंगी।"

"पगली।" दीपिका ने उसके गले में हाथ डालते हुए कहा।

वह कुछ और कहना चाहती थी, पर रुक गई।

२

"प्रशांत जी, क्या घर वापस जा रहे हैं ?"

"नहीं अभी तो डॉ० द्विवेदी का पीरियड बाकी है न ।"

"पर वे तो आज आए नहीं, कुछ अस्वस्थ हैं ।"

"आपको कैसे ज्ञात हुआ ?"

"समीर कहता था, वह पहला पीरियड अटैंड करके ही लौट गया । नीलिमा तो सुबह से नहीं आई, उन्हीं की सेवा में लगी होगी ।"

"तो आइए उनका हाल पूछ आएँ, चलेंगी ?"

"इसलिए मैंने आपसे प्रश्न किया था और तो कोई साथ मिला नहीं ।"

द्वार पर समीर ने उनका स्वागत किया ।

नीलिमा किधर है मिस्टर समीर ? और डॉ० साहब को क्या हुआ ? वे तो कभी अस्वस्थ नहीं होते थे ? मैं समझती हूँ कोई साधारण बात होगी । दीपिका ने कई प्रश्न एक साथ कर डाले ।

"नीलू भीतर पिताजी के पास है । उनका सिर सहला रही है । ब्लड प्रेशर है उन्हें, आज अधिक अस्वस्थता अनुभव कर रहे हैं ।"

"ब्लड प्रेशर ? किन्तु पहले तो उन्हें कभी नहीं था । शायद यह पहला अटैक है ?" प्रशांत ने गंभीर होकर कहा ।

"नहीं, इसकी शिकायत तो उन्हें लगभग साल भर से है, पर वे इसकी अधिक चिन्ता नहीं करते । न ही किसी से कहते हैं, आज ही जरा तबियत अधिक बिगड़ गई ।"

प्रशांत और नीलिमा ने एक साथ कहा, "हमें तो अभी तक इसका कुछ पता ही न था ।"

डॉ० द्विवेदी कॉलेज के अत्यन्त लोकप्रिय और श्रद्धेय अध्यापकों में से हैं। वृद्ध हो चले थे। सिर पर बाल गिनने लायक बचे थे। वे भी सर्वथा धवल, किन्तु शरीर पर्याप्त पुष्ट और स्वस्थ था। मुख-मंडल विचार-गरिमा से दीप्त रहता था। उनकी लम्बी सबल देह पर श्वेत खादी का ढीला कुर्ता और धोती खूब फबती थी। दो बार उन्हें प्रिंसिपल बनने का चांस मिला, किन्तु दोनों बार इस पद से अपने को अलग रखा। कहते, "जब तक प्राध्यापक हूँ कुछ अध्ययन-अध्यापन कर लेता हूँ। प्रिंसिपल बनने पर जो भारी कार्यभार आ पड़ेगा, उसमें मेरे अध्ययन की नौका डूबी ही समझो। धनलाभ के अतिरिक्त, प्रिंसिपलशिप से कुछ और मिलने वाला नहीं है। फिर इस पद के लिए और भी अनेक उपयुक्त व्यक्ति हैं। मैं स्वयं को इससे मुक्त रखूँ, यही उचित है।"

वे ज्ञान के अतुल भंडार के स्वामी हैं, केवल अपने विषय पर ही नहीं, वरन् ज्ञान की अनेक शाखा-प्रशाखाओं पर उन्हें अधिकार प्राप्त हैं। परंतु, अपने बुद्धि-वैभव से वे छात्रों को कभी आक्रांत नहीं करते। उनके भाषण सदैव ही बड़े सरल और सुगम होते हैं। जटिल से जटिल विषय को भी वे इतने सरल और संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करते हैं कि छात्रों को कभी हुल्लड़बाजी की शरण में नहीं जाना पड़ता।

समीर, प्रशांत और दीपिका को भीतर ले गया। वे लेटे हुए थे। नीलिमा उनका सिर सहला रही थी। वे उन्हें देखते ही उठ बैठे।

"आओ, आओ," उन्होंने अपनी सुपरिचित मंगल और ममता भरी दृष्टि से उनका स्वागत किया। बोले, "हो न हो तुम मेरी अनुपस्थिति की व्याख्या मांगने ही आए हो वैसे तुम्हें अपने बूढ़े प्रोफेसर का ध्यान क्यों आने लगा।"

"क्यों लज्जित करते हैं सर ?" प्रशांत ने हाथ जोड़ कर कहा।

दीपिका बोली, "हम छात्र तो निठल्ले घूमने के आदी हैं। न ठीक से अध्ययन करते हैं, न और कोई काम-धाम। इसी कारण आपको कष्ट देना उचित नहीं समझते कि आपका समय व्यर्थ जाएगा।"

"कैसी बातें करती हो बेटा ?" डॉ० द्विवेदी ने कहा। जब वे किसी छात्र या छात्रा से अधिक घनिष्ठ हो जाते थे तो उसे 'बेटा' शब्द से संबोधित करने लगते थे। वैसे भी बातचीत करते हुए कुछ ही क्षणों में औपचारिकता की डोर उनके हाथ से छूट जाती और वे ममत्वसूचक 'बेटा' शब्द सहज ही, पर उतर आते। अनजाने ही।

"जानती नहीं, जीवन में मेरी दो ही रूचियाँ हैं-मेरी पुस्तकें और मेरे छात्र। यह समझना कठिन नहीं कि इसमें किसकी प्राथमिकता है······अपने छात्रों को फलते-फूलते देख कर मुझे स्वर्गीय सुख मिलता है। अध्यापन कार्य की मात्र यही तो उपलब्धि है मैं इसको माता के समकक्ष मानता हूँ। यह उसी के सान सृजनात्मक और गौरवमय है।"

प्रशान्त बोला, "जिन छात्रों को आपकी स्नेह-छाया में विकसित होने का अवसर मिला है, वे जीवत-पर्यन्त आपके अनुगृहीत रहेंगे। "पुनः उसने भाव-विभोर होकर कहा, "अब आपका स्वास्थ्य कैसा है ? हम तो यही पूछने आए हैं।"

"स्वास्थ्य ? अरे वह तो आयु को देखते हुए ठीक ही है। और युग के परि-पार्श्व में देखा जाए तो मैं पूर्णतः स्वस्थ हूँ—कहा गया है कि वर्तमान युग में पूर्णतः स्वस्थ होना एबनॉर्मल है।" वे हँसने लगे। फिर बोले, "मुझे हाई ब्लड प्रेशर रहता है। आज जरा अधिक था तो नीलिमा बेटी ने मुझे घर पर ही रोके रखा। कोई विशेष बात नहीं।"

नीलिमा ने कहा, "इनकी बातों पर मत जाइए आप लोग। ये स्वास्थ्य के प्रति बेहद लापरवाह हैं। न कभी डॉक्टर की सलाह मानते हैं न कभी नियम-पूर्वक दवा ही लेते हैं। परिश्रम भी आवश्यकता से अधिक करते हैं।"

दीपिका ने कहा, "सर, यह तो आप अपने स्वास्थ्य के प्रति अत्याचार करते हैं। जीवन के प्रति इस प्रकार निर्मम होना···"

डॉ० द्विवेदी ने उत्तर दिया, "नहीं बेटी, जीवन के प्रति मैं निर्मम कदापि नहीं। जीवन को मैं एक अत्यन्त पवित्र, लगभग पूज्य वस्तु समझता हूँ। उसके

प्रति निर्मम होना तो विकृत मानसिक स्थिति का परिचायक है, हाँ केवल इतनी बात है कि मैं जीवन को अधिक नियमबद्ध और व्यवस्थित नहीं बना पाता। ऐसा करने पर मस्तिष्क पर एक प्रकार के बोझ का अनुभ्व होता है और जीवन के प्रति प्रबल मोह हो, तो भी जीवन का वास्तविक और स्वच्छन्द आनन्द कहाँ रह जाता है।''

सभी मौन हो गए। नीलिमा उनके लिए चाय बनाने चली गया। डॉ० द्विवेदी ने बात आगे बढ़ाई, ''मेरे विषय में चिंता करने का कोई कारण नहीं। जल्दी ही ठीक हो जाऊंगा। तुम लोगों का क्या विचार है भावी जीवन के सम्बन्ध में ? शिक्षा पूरी होने में तो दो-तीन मास ही रह गए हैं। क्यों दीपिका बेटी, तुम्हारे माता-पिता तो वर की तलाश में लगे होंगे ?''

दीपिका ने सकुचा कर सिर घुमा लिया। कुछ पल चुप रह कर उसने विनम्र, किन्तु दृढ़ स्वर में कहा, ''पहले तो पिता जी से यही कहा था कि एम० ए० पूरा करने से पहले विवाह न करूंगी। किन्तु अब तो यही निश्चय किया है कि एक सर्वथा अपरिचित व्यक्ति के साथ विवाह की अनुमति कैसे दे सकूंगी।''

''अपना यह निश्चय माता-पिता को बता दिया है ?''

''अभी ऐसा कोई प्रसंग नहीं उठा।''

''ऐसे कब तक चलेगा ? जानती हो न कि हर माता-पिता को अविवाहित लड़की असह्य भार लगती है। हाँ, तुम्हारे अभिभावक आधुनिक विचारों के हों तब और बात है।''

''सोचती हूँ, कहीं नौकरी कर लूंगी---दो-एक वर्ष के लिए। बाद में विवाह के लिए सोचा जाएगा।''

''और प्रशांत तुम ?''

''मैं तो अब भी 'जय भारत' में पार्ट टाइम काम कर रहा हूँ। आप मेरी परिस्थितियों से परिचित हैं। एम० ए० में कठिनता से ही द्वितीय श्रेणी की आशा कर सकता हूँ। नौकरी प्राप्त करने में इससे कोई विशेष सहायता नहीं

मिल सकेगी। कभी लैक्चरर बनने की आकांक्षा थी, पर अब तो देखता हूँ, कि किरानीगिरी जॉब मिल जाए, तो बहुत है।''

''विवाह नहीं करोगे अभी ?''

''इन आर्थिक परिस्थितियों में तो अभी कुछ वर्ष नहीं कर पाऊँगा सर !''

''प्रीति की चिंता रहती है। तीन-चार साल की मुक्ता है। कठिनता से निर्वाह हो पाता है।''

''अरे हाँ, प्रीति को साथ नहीं लाए ? कैसी तैयारी है उसकी ?''

''इधर कुछ दिनों से वह पढ़ाई में मन नहीं लगा पाती ठीक से,…खैर पास तो हो ही जाएगी।'' कहते हुए दीपिका ने प्रश्न किया, ''समीर जी का क्या विचार है ?''

''ये दोनों भाई-बहन तो अभी पढ़ाई जारी रखने पर तुले हुए हैं। समीर पी. एच-डी. करना चाहता है। नीलिमा की इच्छा एम० ए० करने की है।''

तभी नीलिमा चाय की ट्रे लेकर आ गई।

''मिस्टर समीर, आप कुछ भी नहीं बोल रहे …।''

दीपिका ने चाय का कप लेते हुए कहा, ''मैं आप लोगों का वार्तालाप सुन रहा था न।''

''ठीक ही है, बुद्धिमान बोलते कम, सुनते अधिक हैं।''

''बुद्धि पर तो मेरा दावा नहीं है।'' समीर ने धीरे से मुस्करा कर कहा, ''आपने मुझे बोलने का मौका ही कहाँ दिया।''

नीलिमा ने कहा, ''समीर भैया हमेशा मौन साधे रहते हैं।''

''नीलू, तू बड़ी ढीठ हो गई है। अपने पूज्य बड़े भ्राता के विरुद्ध बोलती है।'' समीर ने कहा।

नीलू उसे अंगूठा दिखा कर चिढ़ाने लगी, ''बड़े बहुत बनते हैं, जरा चलकर इनका कमरा देखो, मैं सुबह सजा कर आई थी, पर अब वह कबाड़खाना बन चुका होगा। किताब, कापियां, कागज, कपड़े बुरी तरह बिखरे पड़े होंगे। कुछ

खरीदने बाजार जाएंगे, तो खाली हाथ वापस आ जाएंगे। जब याद दिलाओ, तो दुबारा भागेंगे।"

समीर स्वयं हंस पड़ा। प्रशांत और दीपिका दोनों मुस्कराने लगे।

नीलिमा उन्हें दरवाजे तक छोड़ने आई।

दीपिका ने पूछा, "कल तो कॉलेज में मिलोगी न ?"

"निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। पिताजी की तबियत जब तक ठीक न हो, मैं कैसे आ सकती हूँ। वे स्वास्थ्य के प्रति बहुत लापरवाही बरतते हैं। मैं न रहूँ तो हद ही कर देंगे, उसका गला भर आया, माता जी नहीं हैं आज, तभी तो······"।

दीपिका ने उसके दोनों हाथ थाम कर कहा, "रोती है नीलू पगली। भला ऐसे घबड़ाया करते हैं? उनकी तबियत खराब थी तो तूने मुझे क्यों नहीं बुला लिया? अच्छा, अब मैं स्वयं ही आ जाया करूँगी। वैसे चिन्ता का तो कोई कारण नहीं। वे एक-दो दिन में अवश्य अच्छे हो जाएंगे।"

नीलिमा ने आँसू पोंछ लिए।

प्रशांत ने राह में कहा, "दीपिका जी क्या आप वास्तव में नौकरी करने की सोच रही हैं? कौन सा काम करना चाहती हैं?"

दीपिका ने उत्तर दिया, "करनी ही पड़ेगी। मैं घर में खाली बैठी रहूँ और विवाह भी न करूं? यह बात लोग सहन करेंगे? यों भी जीविका का कोई स्वतंत्र साधन हो, तो अच्छा ही है। भविष्य में कभी भी उसका सहारा लिया जा सकता है।"

"मध्यम वर्ग की लड़की को ऐसा सोचने में कोई लज्जा नहीं। मैं भी इससे सहमत हूँ। किस ओर है आपकी रुचि, अध्यापन में?"

"नहीं, उसमें तो मेरी रुचि नहीं।"

"क्यों भला?"

"अध्यापन का कार्य पुनीत होते हुए भी हमारे यहाँ ओछा समझा जाता है। इसमें वेतन भी कम मिलता है। वैसे भी मैं समझाती हूँ, अध्यापन-जैसे कार्य

के लिए व्यक्ति को सब तरह से ज्ञानवान होना चाहिए। आने वाले समय की बागडोर उसी के हाथ में रहती है।''

''आपका मतलब, शिक्षक भविष्य-निर्माता होता है ?''

''हाँ, उत्तम शिक्षक के व्यक्तित्व और ज्ञान से छात्रगण प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते।''

''तो आप अपने को इसमें अयोग्य समझने की भूल क्यों कर रही हैं ?''

दीपिका मुस्करा दी।

''फिर कौन-सा कार्य करने को सोचा है आपने ?'' प्रशांत ने प्रश्न किया।

''अभी तो कुछ निश्चित नहीं कर पायी। परीक्षा के बाद देखूंगी।''

प्रशांत दीपिका को काफी समय से जानता था। कालेज के सभी छात्रों में वही उसके अधिक निकट थी। किन्तु, उसके चरित्र का यह पक्ष अभी तक उसके सम्मुख उद्घाटित नहीं हुआ था। कितनी निःसंकोच और सहजचित्त होकर वह अपने विवाह और नौकरी आदि के बारे में बातचीत कर लेती है।

अपना घर आने पर वह उससे विदा लेकर मुड़ने को हुआ।

''दो-चार मिनट को आ जाइए न ?''

''क्षमा कीजिए, आज नहीं। फिर कभी आऊँगी।''

●●●

३

दीपिका घर पहुँची, तो जिस बात की चर्चा हो चुकी थी, वह तुरंत उसके सामने आ गई। गीतिका उसके गले में बाँहें डाल कर उसे एक ओर ले गयी। वह रहस्य और प्रसन्नतामिश्रित स्वर में फुसफुसाती हुई बोली, "दीदी, तुम्हें एक बात बताऊँ?"

"क्या है री? साफ-साफ क्यों नहीं कहती?"

"तुम्हारे ही सम्बन्ध में तो है और तुम ही मुझे डाँटती हो।"

दीपिका अपनी उद्विग्नता छिपा कर बोली, "अब कह दे ना झटपट।"

गीतिका उसे और भी भींच कर बोली, "तुम्हारे विवाह की बातचीत चल रही है। अब शीघ्र ही निर्णय होने वाला है।"

दीपिका मौन हो गई। वह सोच में पड़ गई।

"क्या लाज का अभिनय कर रही हो। मन में तो लड्डू फूट रहे होंगे।" दीपिका ने उसे गुदगुदाते हुए कहा।

"नहीं गीता", दीपिका उससे अलग हटती हुई बोली, "मैंने दृढ़ निश्चय किया है। मैं इस प्रकार विवाह नहीं करूँगी।"

"किस प्रकार? गीतिका ने चकित हो पूछा।"

"एकदम अपरिचित पुरुष से जीवन भर के लिए मैं नहीं बँध सकती।"

"तो क्या तुम प्रेम-विवाह करना चाहती हो?"

"विवाह के सम्बन्व में कुछ अपने निश्चित विचार रखना प्रेम विवाह ही नहीं होता!"

"किन्तु पिताजी कुछ सोच-समझ कर ही तो सम्बन्ध निश्चित करेंगे? क्या तुम्हें उनकी बुद्धि पर भरोसा नहीं?"

"प्रश्न बुद्धि पर भरोसा करने का नहीं। यहाँ तो दूसरे की बुद्धि पर आश्रित होने की बात है। पिताजी जो कुछ देखेंगे उसमें लड़के का रंग, कुल, आर्थिक हालत आदि ऊपरी बातें ही तो होंगी। यही तो अँधेरे में छलांग लगाना है।"

"इसी का क्या निश्चय है कि तुम्हारा चुनाव सही होगा ?"

"निश्चय तो कोई नहीं, किन्तु पछताना ही है तो अपनी भूल पर पछताना, दूसरे की भूल पर पछताने से कहीं अच्छा है।"

"तो तुम्हारा विचार दृढ़ है ?"

"हाँ बिल्कुल।"

"घर में पूछेंगे, तब कह दोगी ?"

"अवश्य।"

गीतिका निराश-सी हो कर चली गई। दीपिका कंचन के घर जाने की तैयारी करने लगी।

"कंचन के यहाँ नहीं चलोगी ?" उसने गीतिका से पूछा।

"नहीं, तुम ही जाओ।"

●●●

४

वह कंचन के घर पहुँची, तो हेमा वहाँ पहले ही उपस्थित थी।

"आओ दीप, नीलिमा को नहीं लेती आई ?"

"वह नहीं आ सकती। डॉ० द्विवेदी की तबियत ठीक नहीं है।"

"अरे, मुझे तो पता ही नहीं।"

"मुझे समीर ने बताया था। मैं प्रशांत के साथ हो आई।"

हेमा ने कहा, "तुम्हारे मजनू नहीं आए अभी तक? साढ़े चार तो बजने को है।"

"मजनू कैसे कह सकती हो उसे, दीप उसके लिए लैला बनी कब बैठी है?" कंचन ने हंस कर कहा।

"कुछ भी कहो, वह तो इसका दीवाना बन चुका है।" हेमा बोली।

"देखो उसकी दीवानगी कैसे झरती है आज।" दीपिका ने कहा।

"क्या सैंडल चलाने का विचार है? जरा दया से काम लेना?" कंचन ने कहा।

"क्या कहती हो तुम। इतनी असभ्य तो मैं नहीं।"

"असभ्य तो नहीं, दुःस्साहसी जरूर हो।"

"अरे, इसमें साहस की क्या बात है? उसने मुझसे समय माँगा और मैंने दे दिया। यह भी नहीं पता कि वह क्या कहना चाहता है?"

"कुछ भी हो। वह कुछ ऐसा है ही, हमेशा लड़कियों के पीछे घूमता रहता है।" कंचन ने कहा।

"बातचीत में तो बड़ा शिष्ट और सभ्य बनता रहता है।" हेमा बोली।

"मिस्साब, एक बाबू आए हैं।" कंचन के नौकर ने आ कर कहा।

"लो भाई आ गए हैं मिस्टर रबीन, मैं और हेमा तो चलें, तुम उसे बुलवा लो।"

"नहीं, हेमा को जाने दो। तुम अभी यहीं बैठो, दो-चार बातें करने के बाद कोई बहाना बना कर उठ जाना।"

"नमस्कार दीपिका जी, नमस्कार कंचन जी।" कहते हुए रबीन ने प्रवेश किया।

"आइए, बैठिए", कंचन ने गंभीर बन कर कहा।

"मैं एक मिनट में आई।"

कंचन चाय के लिए नौकर को कहने भीतर चली गई। फिर बाहर आ कर बोली, "मिस्टर रबीन आप चाय पसंद करेंगे या काफी ?"

"धन्यवाद, मैं तो कुछ नहीं लूंगा इस समय। दीपिका जी की पसंद इनसे पूछ लीजिए।"

"मैं भी कुछ नहीं लूंगी कंचन, बैठ जाओ।"

वह बैठ गई।

"आप बहुत दुबली हो गई हैं कंचन जी। क्या परीक्षा की चिन्ता रहती है ?" रबीन ने प्रश्न किया।

"परीक्षा की चिन्ता नहीं। आजकल मैं डायटिंग कर रही हूँ।"

दीपिका खिलखिला कर हंस पड़ी। रबीन हौले से मुस्कराया। खुल कर हँसना वह शिष्टता के विरुद्ध समझता है।

"आप क्यों दुबले हो रहे हैं ? मेरी समझ से पुरुष तो कभी डायटिंग नहीं करते।"

"मैं और दुबला ? मेरे दोस्त तो कहते हैं तुम मोटे होते जा रहे हो। समझ में नहीं आता, आपका मत ठीक है या उनका।"

कंचन इसी तरह की कुछ हल्की-फुल्की बातें करके उठ गई। रबीन ने कहा, "मिस दीपिका आप मेरी किसी बात का बुरा तो नहीं मानेंगी ?"

"वह तो आपकी बातों पर निर्भर करता है। मुझे आशा है, आप कोई वैसी बात ही नहीं करेंगे।"

"आपका अनुग्रह है। किन्तु······मैं आपके सम्मुख अपने हृदयोगार रखना चाहता हूँ।"

दूसरे कमरे में बैठी हेमा ने कंचन का हाथ दबाया।

"इसमें तो कोई हानि नहीं है, आप प्रसन्नतापूर्वक ऐसा कर सकते हैं।" दीपिका ने उत्तर दिया।

"मैं आपकी बहुत प्रसंशा करता हूँ दीपिका जी।"

दीपिका का मधुर हास्य गूँज उठा, "धन्यवाद। किन्तु इसमें क्या विशेषता है ? निकृष्ट से निकृष्ट व्यक्ति के भी कुछ तो प्रसंशक होते ही हैं।"

"आप समझीं नहीं। मैं इतनी लड़कियों को जानता हूँ किन्तु, उनमें से कोई भी आपकी तुलना में नहीं बैठती। मैं आपको उन सबमें श्रेठ मानता हूँ।"

दीपिका पुनः हँसने लगी। उसने पूछा, "मुझे किसलिए आप सबसे श्रेष्ठ मानते हैं ?"

"आपके रूप, गुण, विचारशील सभी के लिए।"

"थैंक्यू वेरी मच।" कुछ रुक कर बोली, "और सुनाइए आपकी पढ़ाई कैसी चल रही है ?"

रबीन हतप्रभ-सा हो गया। भीतर कंचन और हेमा की हँसी रोके नहीं रुक रही थी।

"क्या आप मेरे मत का कुछ भी मूल्य नहीं समझतीं ?"

"समझती हूँ, अवश्य समझती हूँ तभी तो मैंने आपको धन्यवाद दिया।"

"मिस दीपिका, मैं···मैं···आपसे प्रेम करता हूँ।" रबीन ने साहस करके कह ही दिया।

दीपिका मौन हो गई। यद्यपि वह यही कुछ सुनने की आशा रखती थी, उसने रबीन की आँखों में देखा। फिर सिर झुका कर उत्तर सोचने लगी। शीघ्र ही उसने निश्चय कर लिया।

"तुम कितने अच्छे हो रबीन, मैं तुम्हारी ऋणी हूँ। तुम मुझ-जैसी तुच्छ लड़की से प्रेम करते हो।"

रबीन के मुख पर पसीना झलक रहा था। अब वहाँ सन्तोष और आश्वासन की एक लहर दौड़ गई।

कंचन तथा हेमा और भी ध्यान से सुनने लगीं।

दीपिका, वह फिर कहना आरम्भ किया, "रबीन, मैं अपने भावी जीवन के बारे में बहुत चिन्तित थी। तुमने मुझे उबार लिया।"

"ऐसी क्या बात करती हो दीप...?"

"सच रवीन, न तो मैं सुन्दर हूँ, न ही मेरे पिता धनवान हैं, तुम यह सब जानते हुए भी मुझसे प्रेम करते हो ?" उसने रवीन की ओर प्रश्न-भरी दृष्टि से देखा।

"हाँ दीपिका, मैं तुमसे प्रेम करता हूँ। मेरे निकट इन बातों का कोई मूल्य नहीं।"

"तुम मनुष्य से बहुत ऊपर हो रवीन !" दीपिका ने कृतज्ञता भरे शब्दों में कहा।

"दीपिका, मैं जैसा भी हूँ, तुम्हारा ही हूँ। केवल तुम्हारा। तुम मेरी हो और मेरी रहोगी।" वह बड़े स्थिर और प्यारभरे शब्द बोल रहा था।

कंचन ने धीरे से हेमा के कान में कहा कि दीप यह क्या कर रही है।

तभी दीपिका ने रवीन से कहा, "हाँ रवीन, आओ हम कल ही आर्य समाज में विवाह कर लें। या तुम चाहो, तो सिविल मैरिज कर लें।"

रवीन इसके लिए तैयार न था। वह बातें करते-करते अपनी सीट से खड़ा हो गया था। यह सुन कर वह कई कदम पीछे हट गया। जैसे उसने कोई भयानक वस्तु देख ली हो। दीपिका के इस निमन्त्रण से वह बिल्कुल भौंचक्का रह गया। उसने एक कुर्सी का बाजू थाम लिया।

"विवाह। ...मिस दीपिका...दरअसल...विवाह...। ..." उसकी आवाज लड़खड़ाने लगी।

दीपिका ने ऊँचे स्वर में कहा, "अरे कोई है ? जरा सम्भालना तो मिस्टर रवीन को। देखो इन्हें क्या हो गया ?"

हेमा और कंचन जोर-जोर से हंसती हुई बाहर आ गईं। सारा मामला रवीन की समझ में आ गया था। वह धम से सोफे पर गिर पड़ा। हेमा और कंचन उसकी ओर देख-देख कर हँसती रहीं। रवीन की परेशानी से उनके पेट में बल पड़ रहे थे।

किन्तु रवीन भी एक ही घाघ था। कुछ ही क्षणों में उसने अपने को सँभाल लिया। वह निकटतम स्थिति का सामना अत्यन्त कुशलतापूर्वक

कर सकता था लज्जा और निग्रमता के भाव उसके मुख से तिरोहित हो गए और वहाँ चातुर्यपूर्ण मुस्कान खेलने लगी।

दीपिका ने हँसी रोक कर कहा, अब कैसी तवियत है आपकी ? एकाएक आप बहुत अस्वस्थ हो उठे थे। लगा, गश्त आने वाला है। लड़कियों, तुम क्यों हँसे जा रही हो ? इनके लिए ठंडा पानी-वानी मँगाओ जरा। देखो मुँह कैसा उतर गया।''

कंचन बोली, ''यह आपको क्या हो गया था ? हम तो बहुत डर गई थी। क्या पहले भी आपको ऐसा आया है ?''

''नहीं, यह पहला अवसर है।'' रवीन ने दृढ़ता से कहा, ''मेरा प्रेम निवेदन करने का। लगता है, इससे आप लोगों का काफी मनोरंजन हुआ।''

हेमा ने कहा, ''मनोरंजन नहीं, हमें तो अपनी सखी के भाग्य पर ईर्ष्या हो रही है···तो कब कर रहे हैं आप उससे विवाह ?''

''आप ही निर्णय दीजिए। क्या इस विषय में आपकी सखी मिस दीपिका, आवश्यकता से अधिक शीघ्रता नहीं दिखा रही हैं, कम-से-कम परीक्षा तक तो विवाह की बात ही उठाना अनुचित है।''

दीपिका को नीचा दिखाने की दृष्टि से उसने आगे कहा, ''खैर, इससे मुझे इतना विश्वास तो हो गया कि मेरा प्रेम एकांगी नहीं है। वे मेरा प्रेम शीघ्राति-शीघ्र पाने को व्याकुल हैं।''

दीपिका कुशल अभिनेत्री की भाँति, स्थिति के अनुसार सजग किन्तु अविचल बैठी थी। उसने तुरन्त प्रतिवाद किया, ''क्षमा कीजिए मिस्टर रवीन, मैं आपसे केवल विवाह करने को प्रस्तुत हूँ और उसी प्रकार आप मुझसे केवल प्रेम करते हैं किन्तु मैं नहीं करती। आप विवाह नहीं, प्रेम के लिए प्रस्तुत हैं और मैं प्रेम नहीं, विवाह के लिए प्रस्तुत हूँ।''

''तो आप प्रेम न होने पर भी विवाह कर सकती हैं ?''

दीपिका ने उत्तर दिया, ''बुजुर्ग कह गए हैं कि स्त्री में विवाह के बाद पति के प्रति प्रेम स्वयं जाग्रत हो जाता है।''

"मुझे नहीं पता था कि आपके विचार इतने रुढ़िवादी हैं।"

"रुढ़िवादी तो मैं नहीं। किन्तु आपके अत्याधुनिक विचारों की तुलना में रुढ़िवादी विचारधारा ही अधिक सुविधाजनक है।" दीपिका बोली। रवीन निरुत्तर हो गया।"

जब वह वहाँ से निकला, तो भीगी बिल्ली बना हुआ था। बड़े बेआबरू होकर तेरे कूचे से हम निकलने वाली बात हुई। जीवन में इतनी करारी हार उसने कभी न पायी थी। न कभी इतना भारी अपमान सहन किया था। यह तो वह जानता था कि दीपिका इतनी सुगम-सुलभ लड़की नहीं है, बल्कि इसी कारण वह उसकी ओर आकर्षित भी हुआ था। उसे इतनी आशंका नहीं थी कि वह अपनी सखियों के सामने उसे इतना लज्जित करेगी। इतनी निर्भिकता, इतना दुस्साहस उसने लड़कियों में कम ही देखा था। जो लड़कियाँ तेजमिजाज थी वे भी उसके वैभव और समृद्धि से प्रवाहित थीं। उसके पिता नगर के प्रमुख उद्योगपति थे और उनका बहुत सम्मान तथा दबदबा था। रवीन को किसी बात की चिन्ता न थी। न भविष्य की, न वर्तमान की। वह यों ही कालेज में आता था। वह इस प्रकार रहता था कि कोई उसे आवारा और निकम्मा न समझे अपने अंतरंग मित्रों के वृत्त के बाहर वह अधिक वाचाल नहीं बनता था। यहाँ तक कि अध्यापक वर्ग भी उसे चरित्रवान् और सदाचारी युवक समझता था।

प्रायः वह पिता की कार लेकर ही कॉलेज आता और स्वयं ड्राइव भी करता। अक्सर प्रोफेसरों और दूसरे छात्रों को लिफ्ट देता रहता।

इसी कुलीनता और शालीनता के बल पर उसने दीपिका की ओर बढ़ने का साहस किया था। यों तो उसकी कई लड़कियों से मित्रता और कुछ से घनिष्ठता भी थी। पर दीपिका कभी उसके चंगुल में न आती थी। बातचीत में वह सावधानी रखती और निर्भय होकर बोलती। कभी औपचारिक विषयों से आगे न बढ़ती, जिससे रवीन को कुछ कहने का अवसर मिल सके। प्रशांत और समीर के अतिरिक्त उसने उसे किसी लड़के से खुल कर बातें करते न देखा था। वह नहीं कि वह संकोच अथवा झिझक करती हो बोलती थी तो बड़े साहस-

पूर्वक और स्वाभाविक ढंग से, किन्तु अधिक सम्बन्ध न बनाती, सिवाय आवश्यक कार्यों में।

वह मन-ही-मन अपनी असफलता और अपमान पर जलता रहा। उसे अधिक दु:ख इस बात का था कि हेमा और कंचन के सम्मुख उसका अपमान हुआ। कुछ दिन पहले तक हेमा से उसकी काफी निकटता रही थी। उसके साथ बिताए मधुर क्षणों की याद अभी वेग न हुई थी। वह उसके लिए क्या सोचेगी ?

हेमा एक बड़े अफसर की पुत्री थी और उच्च वर्ग में अपना सम्मान बनाये रखने की रबीन को विशेष चिन्ता रहती थी। कंचन के पिता मोटरों का व्यापार करते थे। उसके भाई भी अपने स्वतन्त्र मोटर-व्यवसाय चला रहे थे। वह निकट भविष्य में ही कंचन से घनिष्ठता बढ़ाने का इच्छुक था, किन्तु अब तो निश्चित ही दीपिका की धृष्टता के कारण वह इन लड़कियों की दृष्टि में गिर गया होगा। वे स्वयं इतनी समझदार न थीं कि उसके वास्तविक चरित्र को समझ पाती। पर, दीपिका ने तो जैसे उसे सबके सामने उसका नकाब ही उतार दिया था और भी न जाने किस-किस के बीच वह उसकी बात करें।

प्रतिशोध ? हाँ प्रतिशोध लेना चाहिए, किन्तु कोई मार्ग उसे नजर नहीं आता था। गीतिका ?···वह तो बड़ी डरपोक लड़की है। कभी अपने खोल से बाहर नहीं निकलती।

●●●

५

डॉ० द्विवेदी का स्वास्थ्य ठीक होने पर नीलिमा कॉलेज आई थी। उसने दीपिका से मिलते ही पूछा, "जरा उस दिन का रवीन के साथ का ऐडवेंचर तो सुनाओ, मैं तो उस दिन आ न सकी।"

दीपिका ने कहा, "कंचन और हेमा को सब पता है। उनसे पूछना अच्छा रहेगा। मुझे तो इस व्यक्ति से बड़ी घृणा-सी हो गई है। मैं तो उसके विषय में अब कुछ भी बात नहीं करना चाहती। उसके बारे में कुछ सुनना भी अच्छा नहीं लगता।"

नीलिमा बोली—"नहीं भाई, पूरा आनन्द तो तुमसे सुनने में आवेगा, जो इस नाटक की नायिका थी। हेमा और कंचन तो मात्र दर्शक थीं।"

"सुना दूंगी कभी सुनाने में मुझे कोई आपत्ति नहीं, हाँ, तुम्हारी पढ़ाई कैसी चल रही है?

"ठीक है।"

"सर की तबियत कैसी है अब?"

"अब तो बहुत अच्छे हैं। हाँ, तुम अपना काण्ड सुनाओ।"

प्रशांत ने नमस्ते करते हुए कहा, "क्षमा करेंगी, मैं आपको डिस्टर्ब कर रहा हूँ। आप यहाँ मार्ग में खड़ी हैं।"

दोनों ने प्रशांत की ओर देख कर उसके अभिवादन का उत्तर दिया।

प्रशांत ने फिर कहा, "आपत्ति न हो तो उधर लॉन में चलिए; वहाँ बैठेंगे।"

"आपत्ति के लिए आप दीपिका से पूछिए, ये मुझे अपना एक एडवेंचर सुनाने वाली थीं।" नीलिमा दुष्टतापूर्ण मुस्कान के साथ बोली।

"ऐडवेंचर वगैरह कुछ नहीं, एक साधारण-सी बात थी, वह कोई गोपनीय भी नहीं। किन्तु उसे अधिक प्रसारित करना मि० रबीन के पक्ष में अच्छा न होगा।"

दीपिका से प्रशांत वह वृत्तान्त सुन कर चिंतित-सा हो गया। वह उस पर कुछ भी प्रतिक्रिया व्यक्त किए बिना उठ कर चला गया।

घर आ कर उसने अपनी बहन प्रीति से कहा, "प्रीति, आज मैं तुमसे एक बात करना चाहता हूँ।"

प्रीति ने भाई की ओर प्रश्न-भरी नजरों से देखा।

"माता-पिता की मृत्यु के बाद तुम्हारा भार मुझ पर ही है। मुझसे जहाँ तक बन पड़ता है, अपना कर्तव्य निभा रहा हूँ। मेरे पास न अनुभव है, न धन।" कहते हुए प्रशांत चुप हुआ, तो प्रीति बोली, "इससे कौन इन्कार करता है भैया......मगर आज आप ऐसी बातें क्यों कर रहे हैं ?......क्या आप और मेरा अधिक भार नहीं उठा सकते ?...प्रश्न के साथ ही प्रीति का गला भर आया।

"नहीं प्रीति, तुम्हें भार कौन समझता है ? मैं तो वैसे ही एक विषय पर तुम्हें परामर्श देना चाहता हूँ। विषय बहुत गंभीर है।"

"भैया किसी भी विषय पर आपकी आज्ञा मुझे मान्य होगी।"

"देखो प्रीति, मैंने हुम्हें कभी अनुचित नियंत्रण में नहीं रखा। यह मेरे सिद्धांतों के विरुद्ध है। किन्तु तुम्हारी समझ अभी इतनी परिपक्व नहीं हुई है कि व्यक्ति के गुण-दोषों को परख सके। इसलिए मैं तुम्हें बताना चाहता हूँ कि तुम अवांछनीय व्यक्तियों की संगति छोड़ दो।"

प्रीति के अवयवों में सिहरन दौड़ गई। उसने सिर झुकाए-झुकाए ही कहा, "आपका संकेत किस ओर है भैया ?"

"दो-तीन मास से रबीन के साथ तुम्हारी काफी घनिष्ठता हो गई है। वैसे तो मैं पहले भी समझता था कि वह अच्छा व्यक्ति नहीं, किन्तु आज की घटना से तो निश्चय हो गया कि वह धूर्त्त और लंपट है। उसकी संगति तुम्हारे लिए बदनामी का कारण हो सकती है।"

प्रीति अपने आँसुओं को रोकने का प्रयत्न करने लगी। उसने धरती कुरेदते हुए धीमे स्वर में कहा, "मैंने तो पहले ही उससे मिलना-जुलना छोड़ दिया है भैया।"

"यही उचित है, दीपिका से उसके व्यवहार का तुम्हें पता नहीं।"

"वह भी जानती हूँ भैया, हेमा से सब सुन लिया है।" कहकर वह फूट-फूट कर रो पड़ी।

प्रशांत बड़ी दुविधा में पड़ गया। प्रीति का यह व्यवहार वह समझ न सका। उसे चुप कराने को प्रयत्न करते हुए उसने कहा, "क्या मेरी सलाह से तुम्हें बहुत दुःख हुआ है प्रीति ?"

प्रीति उसके पाँवों से लिपट गई। बोली, "मुझे क्षमा कर दें भैया, मुझे क्षमा कर दें।" बहन की अस्रुधारा ने भाई के पाँव भिगो दिए।

प्रशांत आश्चर्यचकित था, उसके मन में अनेक शंकाएं जन्म लेने लगी थीं। बड़ी कठिनता से उसने प्रीति को चुप करा कर कुर्सी पर बिठाया। उसकी नन्हीं-सी बहन मुक्ता यह देख कर घबरा गई और 'दीदी-दीदी' कह कर वह भी रोने लगी। अंत में वह यह समझ कर रह गया कि प्रीति बहुत भावुक हृदय वाली है और रवीन के झूठे प्रेम से उसे काफी चोट लगी है। वह अपने, प्रीति और मुक्ता के भविष्य के चिंतन में डूबने-उतराने लगा।

उसके माता-पिता की मृत्यु चार वर्ष पूर्व एक दुर्घटना में हो गई थी। मुक्ता उस समय चार माह की ही थी। प्रशांत और प्रीति ने बी० ए० प्रथम वर्ष में प्रवेश ही पाया था कि यह विपत्ति उनसे आ भिड़ी। सबसे बड़ी कठिनाई मुक्ता की थी। उसके लिए चाय का प्रबन्ध करना मुश्किल हो पाया था। आर्थिक समस्या मुँह बाये खड़ी थी। पिता का फंड आदि मिला था पर अनुभवहीन बच्चों को भविष्य की चिन्ता खाए जा रही थी। सम्बन्धियों का सहारा लिया, पर वे उल्टा उन्हें ही लूट कर खाना चाहते थे। ऐसी अवस्था में प्रशांत ने बड़े धैर्य और समझदारी से काम लिया। उसने पार्ट टाईम काम करना आरम्भ कर दिया। इससे पढ़ाई में तो अवश्य बाधा पड़ी, किन्तु इसके सिवा अन्य कोई

चारा नहीं था। उसने प्रीति की पढ़ाई भी न छूटने दी। घर का काम और मुक्ता की देखभाल के लिए एक नौकर रख लिया था। जैसे-तैसे करके वह अब तक गाड़ी खींचता चला आया था।

× × ×

कंचन बाजार से चली जा रही थी। हेमेन्द्र ने उसे देख दूर से ही पुकार लिया। कंचन को बीच बाजार में इतने जोर से नाम ले कर पुकारा जाना बहुत खला, किन्तु हेमेन्द्र, कवि हेमेन्द्र 'समन्वय'—का व्यवहार सदा लोक से हट कर ही हुआ करता था। उसके आवाज़ देने पर वह रुक गई। उसने पूछा, "कहाँ से आ रही हैं कंचन जी?"

"जरा शापिंग करने गई थी हेमा के साथ।"

"हेमा तो कहीं दिखाई नहीं दे रही?"

"वह उधर से ही चली गई। मैं घर जा रही हूँ। आप किधर?"

"मैं तो यों ही सड़क नापता हुआ लोगों की खरीद-फरोख्त देख रहा था।"

कंचन चुपचाप चल रही थी। हेमेन्द्र फिर बोला, "लाइए, यह बैग मैं उठा लूँ?"

"धन्यवाद, बैग में बोझ ही कितना है?"

"बोझ तो नहीं, किन्तु आप लोग इसे शान के खिलाफ समझती हैं न।"

शिष्टता नाम की वस्तु से हेमेन्द्र का कोई परिचय न था, उसकी बातें धनी व्यक्तियों के साथ सदा इसी तरह कड़ुवी होती थी। अक्सर वह यह न जान पाता कि उसकी बात का ढंग श्रोता को चुभ रहा है। यदि जान भी पाता, तो भी वह अपनी वाणी में कोई अन्तर न करता। वह स्वयं समन्वयवादी था, किन्तु समृद्ध लोगों को पूंजीवाद के सभी दोष गिनाना वह अपना कर्त्तव्य समझता था। फलतः लोग उससे कतराते और बचकर निकल जाने की कोशिश करते। यों-वह कवि के नाम से जाना जाता था, पर लिखता कभी-कदार ही था। वह भी मिनि कविताएं ही।

कंचन को उसके साम्यवादी सिद्धान्तों से काफी सहानुभूति थी। 'समन्वय' उसके वर्ग की मान्यताओं की आलोचना करने और इस प्रकार उसको भावनाओं को ठेस पहुँचाने में एक क्रूर हिंसात्मक आनन्द की अनुभूति करता था। कंचन को भी जैसे इस पीड़न में तृप्ति मिलती थी। वह घण्टों मुग्ध भाव से उसका प्रताप सुनती रहती, चाहने पर भी वहाँ से उठ न पाती। वह सम्मोहन के एक ऐसे रहस्यमय जाल में जकड़ी हुई थी, जिसे तोड़ देने में वह अपने को असमर्थ पाती थी। सबसे अधिक कष्ट उसे हेमेन्द्र की बोलने की शैली से होता था। वह साधारण से तथ्य को भी कांटे की भांति पीड़ादायक बना कर प्रस्तुत करता था। कई बार वह उसके व्यंग्यपूर्ण बातें सुन कर रो पड़ती, किन्तु हेमेन्द्र का हृदय न पसीजता। वह कभी खेद भी प्रकट न करता, बस उसे रोती छोड़ कर चला जाता।

उसने अनुभव किया कि वह हेमेन्द्र के प्रेमजाल में बँधती चली जा रही है। किन्तु हेमेन्द्र के लिए उसका अस्तित्व एक श्रोता और अपने साम्यवादी आक्रमण के लिए एक लक्ष्य से बढ़ कर कुछ और न था। वह स्वयं बड़े सुख और वैभव में पली थी। कभी किसी ने उसे कटु शब्द कहने का साहस न किया था। घर में माता-पिता, भाई और नौकर-चाकर उसे हाथों हाथ लेते थे। भरे-पूरे धनी परिवार की वह एक ही कन्या थी। जरा जी बात पर उसके आंसू छलक पड़ते थे। पर वही कंचन हेमेन्द्र से उनके निर्धन, शोषित वर्ग की नारकीय जिन्दगी, उनके अभावों और उनके भयंकर दारिद्र्य का रोमांचक वर्णन उसकी जीवन्त भाषा में सुनती रहती। यही नहीं, हेमेन्द्र उनकी शोचनीय दशा के लिए पूंजीवादियों को ही उत्तरदायी ठहराता। वह स्पष्टतया कहता कि कंचन भी उसी शोषक वर्ग का एक अंग है। वह सदा पूंजीवादी वर्ग के नाश की ही कामना करता रहता।

कंचन यह सब सुनती और अपनी ऐश्वर्यमय जीवन की तुलना निम्न वर्ग के इन घिनौने, बिलबिलाते कीड़ों-जैसे अस्तित्व के लोगों से करती। विचारों में डूबती-

उतराती अन्त में हेमेन्द्र के लिए उसके मन में श्रद्धाभाव और सम्मान उमड़ पड़ता।

कंचन को चुपचाप चलते देख वह बोला, "आज आप पैदल आ रही हैं, गाड़ी नहीं लाईं ?"

"गाड़ी आज पिताजी के एक मित्र ले गये हैं। और कभी-कभी पैदल चलने में मुझे मजा आता है। मैं पैदल भी चल सकती हूँ और बैग भी उठा सकती हूँ। इससे भारी हो तब भी, कंचन ने बहुत सी बातें एक साथ कह डाली।

"आइए किसी रेस्तराँ में बैठ कर एक-एक कप काफी ही पी ली जाए।"

कंचन कुछ सोच में पड़ गई, तो हेमेन्द्र फिर बोला, "आपको कोई आपत्ति हो, तो रहने दें।"

"नहीं, नहीं, चलिए।"

हेमेन्द्र उसे एक साधारण से रेस्तराँ में ले जाने लगा।

कंचन ने कहा, "इतनी घटिया जगह में तो मैं बैठ नहीं सकती, किसी अच्छे से होटल में चलिए ना।"

हेमेन्द्र ने फिर अपनी व्यंग्य-भरी वाणी में कहा, "मिस कंचन, देश के नंगे, भूखे लोग जिस होटल के द्वार को लाँघने का साहस नहीं कर सकते, वह मेरे लिए भी निषिद्ध ही समझिए, फिर मेरे पास उतना धन भी तो नहीं।"

कंचन का मुँह फिर उतर गया। वह एक उदास हँसी हँस कर बोली, "बिल मैं चुका दूँगी, उसकी चिंता आप न कीजिए।"

हेमेन्द्र ने बिना झिझके उत्तर दिया, "तब ठीक है।"

वे अजंता की ओर बढ़ने लगे। तभी रबीन ने उनके पास जाकर एकदम अपनी कार रोकी, "हैलो पोयट, ओ, मिस कंचन, क्या हाल-चाल है ?"

हेमेन्द्र ने फिर अपनी भड़ास निकाली, "तुम्हें हमारे हालचाल से क्या मतलब ? बस जी रहे हैं।"

रबीन ने उसकी बातों पर कोई ध्यान न देकर कहा, "आज आप मेरी ओर से काफी का निमंत्रण स्वीकार कीजिए।"

"मैं तो पहले ही निमंत्रित पर हूँ।"

"कोई बात नहीं, मिस कंचन का पर्स फिर कभी हलका कर लीजिएगा।"

तीनों रेस्तराँ में चले गए। केबिन में बैठ कर बैरे को काफी लाने का आर्डर दे दिया।

रबीन ने हेमेन्द्र को छेड़ने की दृष्टि से कहा, "कहिए समन्वय जी, इधर आपने साम्यवाद पर कोई रचना लिखी अथवा नहीं ?"

"साम्यवाद पर क्या, अब तो नक्सलवाद पर लिखना चाहिए।" कंचन ने कहा।

हेमेन्द्र ने कहा, "आप मुझे गलत समझ रहे हैं। मैं न साम्यवादी हूँ न नक्सलवादी, मैं तो केवल समन्वयवादी हूँ।"

"यह तो आपके उपनाम से ही पता चलता है।" रबीन ने कहा।

"यह आपका समन्वयवाद है क्या ?" कंचन प्रश्न कर बैठी।

"मेरा समन्वयवाद किसी एक को अपना इष्ट मानकर उसके पीछे नहीं भागता। मेरे समन्वयवाद में प्लेटो, अरस्तू, बेंथम, कार्ल मार्क्स, एंजिल, लेनिन, तिलक तथा गाँधी सभी को बराबर का स्थान प्राप्त है। मेरा वाद अध्यात्म को स्वीकारता है। वह प्रेम, सौंदर्य और कला का भी बहिष्कार नहीं करता।"

रबीन को न यह बातें समझ आ रही थी न आनन्द ही आ रहा था उनमें। वह टेबुल पर उंगलियों से धीमे-धीमे ताल देता हुआ बैरे की प्रतीक्षा करने लगा।

काफी आ जाने पर तीनों पीने लगे। घूंट उतार कर रबीन ने पूछा, "कहिए कहाँ से आ रहे हैं। आप लोग ?"

कंचन ने अपने बैग की ओर संकेत करते हुए कहा, "शापिंग करने आई थी, हेमा के साथ। रास्ते में ये मिल गए।"

हेमेन्द्र ने प्रश्न किया, "क्या खरीद लायी हैं आप ?"

कंचन आशंकित हो गई। हेमेन्द्र फिर कुछ चोट करेगा। फिर भी उसने बैग हेमेन्द्र के सामने खोल दिया। मुंह से कुछ नहीं कहा।

हेमेन्द्र ने उसमें झाँक कर देखा—रक्षा, लिपिस्टिक, पाउडर, ब्रो पेंसिल, काजल, शैम्पू......"मुझे तो सब वस्तुओं के नाम भी याद नहीं।" उसने ऐसे मुंह बनाया जैसे कोई कड़वी वस्तु निगल ली हो।

रवीन हेमेन्द्र के इस व्यवहार से खूब तमतमाया। वह महिलाओं के समक्ष ऐसी अशिष्टता की कल्पना भी नहीं कर सकता था। उसने तनाव को टालने के इरादे से कहा, "यह महिलाओं का निजी मामला है। इसमें हमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।"

हेमेन्द्र काफी का घूंट उतार कर कुछ बोले, इसके पहले ही रवीन ने प्रश्न कर दिया, "कहिए, इधर आपने कौनसी नई कविता लिखी?"

"अभी लिखी तो नहीं, मगर अब लिखूंगा। विषय अच्छा मिल गया है।"

"कौन सा?"

"यही कि अब किसी लड़की को निराश नहीं होना चाहिए कि वह असुन्दर है।" इस पर कंचन ने लज्जा भाव से सिर झुका लिया। तभी हेमेन्द्र कुछ रुककर फिर बोला, "यह बात मैं केवल उच्च वर्ग की महिलाओं के ही लिए कह रहा हूँ। हाँ, उनके लिए नहीं, जो खेतों में और सड़कों पर पसीना बहाती हैं। असल में तो ये सारे प्रसाधन उन्हीं के पसीने से निर्मित हैं। न वे कठिन परिश्रम करें और न उच्च वर्ग को यह सब उपलब्ध हो! जहाँ देश में मुँह धोने को पानी मिलना कठिन हो रहा है, वहाँ देश का एक वर्ग इन बेकार की वस्तुओं पर कितना खर्च कर रहा है?"

हेमेन्द्र की बातों से कंचन अपने को बहुत अपमानित अनुभव कर रही थी। वैसे न भी करती, पर रवीन के सम्मुख हेमेन्द्र का प्रलाप उसे जरा भी नहीं रुच रहा था। उसने पहले हेमेन्द्र की बातें अकेले में ही सुनी हैं, किसी तीसरे की उपस्थिति में नहीं। रवीन और हेमेन्द्र दोनों भिन्न-भिन्न विचारों और रुचियों के व्यक्ति हैं। बात आगे बढ़ी, तो वह उन्हें कैसे सँभाल पाएगी? अतः अन्त में जो उसे डर था, वही हुआ। रवीन बोला, "मिस्टर हेमेन्द्र, आप भद्रता की सीमा लाँघ रहे हैं। आपको किसी महिला पर ऐसे व्यक्तिगत आक्षेप करने का कोई हक नहीं।"

"इसे व्यक्तिगत आक्षेप नहीं कह सकते मिस्टर रबीन ! यह तो विचार है, जो किसी विशेष व्यक्ति की बात से उत्पन्न हुआ है।"

"पर आप आगे कुछ न कहें, तो ही उचित होता।"

"आप मुझे धमकी देना चाहते हैं ?"

"धमकी भी नहीं देना चाहता और आपका यह निरर्थक प्रलाप भी नहीं सुनना चाहता। मैं समझता हूँ, मिस कंचन भी यही चाहती हैं।"

"किन्तु आप मुझे रोकने वाले कौन हैं ?"

हेमेन्द्र आगे कुछ कहे इसके पहले ही रबीन कंचन का बैग उठाकर बोला— "चलिए मिस कंचन, इन्हें समझाने का प्रयत्न व्यर्थ है।"

कंचन अत्यन्त विकट परिस्थिति में थी। वह इससे मुक्ति पाना चाहती थी। दूसरी ओर रबीन के सौजन्य और नारी के प्रति उच्च सम्मान की भावना से वह प्रभावित हुई थी। अतः हेमेन्द्र का मानापमान का विचार किए बिना वह रबीन के साथ चल दी। हेमेन्द्र के प्रति उसकी सहानुभूति भी उसे रोक न पायी। यों रबीन के चरित्र की एक झलक उसे पहले मिल चुकी थी। अब तक उसे वह भूल भी नहीं सकी थी, बल्कि वह स्वयं रबीन के लिए अपमानजनक, उस घटना का जिम्मेवार अपने को मानती थी, रबीन के सुमधुर व्यवहार ने उसे अभिभूत कर दिया। उसने यह भी सोचा, रबीन स्वयं बड़ा उदार हृदय है और अब तक उस घटना को भुला चुका होगा।

हेमेन्द्र की आँखों के सामने वह उसकी कार में बैठ कर चली गई। हेमेन्द्र का समन्वयवाद तड़प उठा, वैसे ही, जैसे कार का पहिया फिर जाने पर कोई सजीव प्राणी तड़प उठे।

●●●

६

दीपिका प्रशांत से नोट लेकर आई ही थी कि गीतिका ने कमरे में प्रवेश करते हुए कहा, "दीदी, आज वे लोग फिर आए थे।"

दीपिका न जाने किस विचार में उलझी थी। उसने लापरवाही से पूछा, "कौन लोग ?"

"वे ही लोग, जिनके यहाँ तुम्हारे विवाह की बातचीत चल रही है। तुमसे इस विषय में किसी ने कुछ कहा नहीं ?"

"नहीं।" दीपिका ने संक्षिप्त-सा उत्तर दिया।

"काफी बड़े व्यापारी हैं। पुत्र ने भी अलग से अपना एक जनरल स्टोर खोला है। सुना है, लड़का सुन्दर भी है। नामधाम तो कुछ पता न चला। तुम चाहो, तो पता भी कर सकती हो।"

"मुझे इसमें कोई रुचि नहीं। पिताजी व्यर्थ ही इतनी दौड़ धूप कर रहे हैं।" दीपिका ने कुर्सी पर बैठते हुए कहा।

गीतिका ने साँस रोक कर पूछा, "तो तुम्हारा निश्चय अटल है दीदी, वर पक्ष में चाहे कोई त्रुटि न हो तब भी ?"

"त्रुटियाँ तो कब किसी की कौन देख पाया है ? वे तो सम्पर्क और अनुभव से ज्ञात होती जाती है। मेरे अपने चुनाव के लिए भी मैं दावा नहीं कर सकती कि वह सही होगा। किन्तु यहाँ तो बात सिद्धान्तों की है।"

"भाग्य तो अवश्य होता है दीदी ! सिद्धान्त तो उसके साथ मेल खा ही जायँगे, यह कैसे कहा जा सकता है ?"

"कहा जाता है कि भाग्य अदृश्य होता है। किसी सीमा तक यह सच भी है। किन्तु जानबूझ कर अदृश्य को निमंत्रित करना कहाँ की बुद्धिमानी है ?"

गीतिका मौन हो गई। फिर थोड़ा रुक कर बोली, "तो ऐसे कब तक बैठी रहोगी दीदी ?"

दीपिका ने हँस कर उत्तर दिया, "अरी तू अपनी सोच न, मेरी चिन्ता क्यों करती है।" फिर कुछ गंभीर होकर बोली, "कब तक बैठी रहूँगी ? यह कोई आतुर प्रतीक्षा थोड़े ही है ? यह तो जीवन का स्वाभाविक श्रम है। दो-चार वर्ष भी लग सकते हैं अथवा दो-चार मास भी। पर इस ओर से निश्चिन्त रहो कि आजीवन कुआरी रहने का व्रत मैंने नहीं लिया है और खाली तो मैं बैठूंगी नहीं कि माँ-बाप के सिर पर भार बनूं। कुछ-न-कुछ तो करूँगी ही सही।"

क्या करोगी, कहीं नौकरी ?"

"हाँ, सोचा तो यही है।"

"आजकल नौकरियाँ इतनी आसान कहाँ है दीदी ?"

"प्रयत्न से सब कुछ हो जाता है।"

× × ×

गीतिका ने जब दीपिका के विचारों से मां को अवगत कराया, तो वह सन्न रह गईं। यह तो वह जानती थीं कि दीपिका स्वतन्त्र तथा आधुनिक विचारों वाली लड़की है, किन्तु वह विवाह के लिए इन्कार कर देगी, इसकी उन्हें कल्पना नहीं थी। उन्होंने तो सोचा था, दीपिका से सलाह ले ली जाएगी। वह वर पसन्द कर लेगी, तभी विवाह होगा। एक नहीं, तो दूसरा लड़का खोजा जा सकता है। पर, वह तो इस विषय में माता-पिता का हस्तक्षेप ही नहीं चाहती। कहती है, नौकरी करेगी और स्वयं अपनी पसन्द से विवाह करेगी।

उसके पिता एक सरकारी दफ्तर में क्लर्क थे। वेतन ढाई सौ से अधिक न था। उनके कुल में दो ही सन्तानें थीं—दीपिका और गीतिका। दोनों पुत्रियों को उन्होंने बड़े लाड़-प्यार से पाला। आधुनिक विचारों से प्रभावित होकर उन्होंने लड़कियों को भी लड़कों की तरह पढ़ाया-लिखाया था। वे पिछड़े हुए विचारों के तो न थे, किन्तु इतने आधुनिक भी नहीं कि विवाह के सम्बन्ध में

भी वे पुत्री को स्वतन्त्रता दे दें। लड़की नौकरी भी कर ले और फिर प्रेम-विवाह भी कर ले यह उनकी कल्पना से परे था।

जब दीपिका का निर्णय उन्हें ज्ञात हुआ, तो वे दिल थाम कर बैठ गए। वे जानते थे कि दीपिका ने जो निर्णय ले लिया है, वह बदलने का नहीं। अतः उन्होंने उसे समझाने-बुझाने की कोशिश भी नहीं की। पैसा तो उनके पास अधिक न था, तब भी बेटी के व्याह के लिए उनके हृदय में बड़े अरमान थे, जिनका निकलना अब सम्भव प्रतीत न होता था। उन्होंने देखा, परिस्थितियों के सामने झुकना ही होगा।

पर मां इतनी शीघ्र मानने वाली न थी। वह मन-ही-मन दीपिका और गीतिका की तुलना करती। काश, दीपिका भी गीतिका-जैसी ही आज्ञाकारिणी होती। उन्हें अपना बेटा न होने का भी इस समय बड़ा दुःख हुआ। शायद बेटा उनके अरमान पूरे करता या वह भी हाथ से निकल जाता, कौन जाने ?

दीपिका को मार्ग पर लाने के लिए वे उसके पास आईं, बोलीं—"यह मैं क्या सुन रही हूँ बेटी ? क्या गीतिका ने जो कुछ मुझे बताया है, वह सब सत्य है ?"

दीपिका विनम्र स्वर में बोली, "हाँ मां।"

मां वहीं बैठ गई और बोली, "बेटी, तुम मुझसे अधिक बुद्धिमान और अपने पिता से भी चार क्लास आगे पढ़ी-लिखी हो। पर, तुम्हारी समझ अभी कच्ची है। तुम में बचपना भरा है। तुम्हें अभी जीवन और जगत का कुछ अनुभव नहीं। समाज की मर्यादाओं और मान्यताओं को यों तोड़ना अनुचित है। विवाह एक सामाजिक और अनिवार्य संस्कार है। जिस रूप में समाज में उसका विधान होता है, उसका वही रूप उचित है। नयी लीक पर चलना संकटप्रद होता है।"

दीपिका ने धीमे स्वर में कहा, "कोई इतनी नई बात तो मैं नहीं करने लगी हूँ मां।"

"तुम्हारे लिए भले ही नयी न हो, हमारे लिए तो नयी ही है। कॉलेज में तो बहुत सी लड़कियाँ पढ़ती हैं, पर तुम्हारी तरह कितनी अपनी जिद पर अड़ती हैं ? सभी के विवाह उनके माता-पिता ही तो तय करते हैं।"

दीपिका मौन रह गयी।

मां ने फिर कहना आरम्भ किया, "जरा इसके दूसरे पहलू पर भी तो सोचो। तुम एम० ए० तक पढ़ी हो। इतने पढ़े-लिखे वर आसानी से नहीं मिलते। पैसा भी वे अपनी शिक्षा के अनुरूप ही माँगते हैं। यह तो हमारा भाग्य समझो कि वे लोग मान गए। अधिक पैसा माँगते, तो हमारे लिए बड़ी विपत्ति की बात होती। तुम्हारे पिताजी का वेतन ही कितना है। तुम्हारी शिक्षा-दीक्षा पर भी बहुत सारा खर्च कर चुके हैं। यह सम्बन्ध कहीं तुम्हारी भूल के कारण टूट गया, तो बाद में न जाने कितना देना पड़े।"

दीपिका ने मां से दृष्टि मिला कर पूछा, "कितना माँगते हैं ये लोग ?"

मां ने उत्तर दिया, "पाँच हजार पर बड़ी कठिनता से मनाया है तुम्हारे पिताजी ने।"

दीपिका आवेश में आकर खड़ी हो गयी। बोली, "तब तो यह सम्बन्ध कभी न हो सकेगा। मेरा अन्तिम निर्णय है। पाँच हजार तो नकदी ही हैं। फिर पांच-सात हजार ऊपर से समझो। और इतना ही गीतिका के लिए भी चाहिए। इतना तो पिताजी ने जन्म भर में न कमाया होगा। हम दोनों बेटियाँ क्या इसलिए पैदा हुई हैं कि अपने पिता को वृद्धावस्था में कंगाल बना कर चली जाएँ ? इतनी क्रूर और कृतघ्न तो मैं नहीं बन सकती मां।"

"तुम गलत समझ रही हो बेटी। हमारे पास जो कुछ है, तुम लोगों के लिए ही तो है। और हमें करना ही क्या है ?"

"मुझे क्षमा कर दो माँ। मैं पिताजी से भी क्षमा मांग लूंगी। किन्तु विवाह के सम्बन्ध में मैं किसी की आज्ञा नहीं मान सकूंगी।" दीपिका ने तेज स्वर में कहा।

माँ हार कर चली गईं।

●●●

७

रवीन अपना मन जैसे-तैसे पढ़ने में लगाने का प्रयत्न कर ही रहा था कि उसका मित्र मोहन लाल आया और कहने लगा, "हर वक्त किताबें चाटते रहते हो। थोड़ी देर तो दुकान पर आकर शकल ही दिखा जाया करो।"

रवीन ने उत्तर दिया, "देखते तो हो परीक्षा बिल्कुल सर पर आ गई है। सोचा अब तो थोड़ा सा पढ़ ही डालूँ। दो बार तो ड्राप दे चुका हूँ। क्या तुम चाहते हो कि इस बार भी रह जाऊँ।"

रह भी जाओ तो कौन सा अँधेर हो जाएगा। तुम तो अभी चार-छः साल बड़ी आसानी से कालेज में निकाल सकते हो। जल्दी एम० ए० करके कौन तुम्हें नौकरी करनी है ?

रवीन ने उसके कंधे पर हाथ मार कर कहा, "खुद बच्चू थर्ड क्लास में ग्रेजुएट होकर बनियागीरी करने लगे। हमें भी उसी में घसीटना चाहते हो ?"

"बनियागीरी कहता है उसे ? शहर के सबसे बड़े जनरल स्टोर पर साहबों की सी शान से बैठता और शाम को गड्डी भर नोट गिन कर घर आता हूँ।"

"अबे जा। आमदनी को कौन देखता है। स्टेट्स चाहिए, स्टेट्स।"

"तू बी० ए० हो जाए या एम० ए०। तुम्हें अकल नहीं आने की। दुनिया की सबसे महत्वपूर्ण बात 'आमदनी' को तू बेकार कहता है ?"

"छोड़ यार। तू आया कैसे, यह बता ?"

"बस तुझसे एक मामले में सलाह लेने आया हूँ।"

"हाँ बच्चू तुम असली बिजनेसमेन हो, बिना काम के क्यों आने लगे...... अच्छा बता काम ?"

"यूं समझ लो कि मावदौलत की शादी होने जा रही है।" मोहन ने हंसकर कहा।

रवीन ने फिर जोर से उसके कंधे पर हाथ का पटाखा बजाते हुए कहा, "कौन है हमारी भाभी साहिबा? अभी तक तूने बात की हवा तक न लगने दी।"

"अभी तो केवल बातचीत हुई है। उन्होंने अभी वचन नहीं दिया है।"

"भाभी गोरी है या काली? कहाँ तक पढ़ी है? कम-से-कम देखने के लिए तो हमें साथ ही ले जाता।"

"अरे यार देखा किसने है अभी? इसलिए तो तुम्हारे पास आया हूँ। सुना है, तुम्हारे कॉलेज में ही पढ़ती है।"

"कौन सी इयर में, नाम क्या है?

"यही तो कुछ नहीं मालूम। माँ-बाप से कैसे पूछूं? अभी तो सिर्फ इतना पता लगा है कि दो बहनें हैं। बड़ी फाइनल में पढ़ती है और छोटी प्रिवियस में।"

रवीन के दिमाग में बिजली सी कौंधी, "बाप क्या करता है?"

"बाप, सुना है डाकखाने में हैं।"

"तब तो दीपिका ही है।"

अब मोहन की बारी अकुलाने की थी। बोला, "नाम तो बड़ा सुन्दर है। जल्दी बता, देखने में कैसी लगती है?"

"बहुत सुन्दर। गेहुँआ रंग है, पर खूब जँचती है।" रवीन बोला। उसकी बातों में ठंडक समाती जा रही थी।

"पर तूने मुंह क्यों लटका लिया? क्या मुझसे ईर्ष्या होने लगी?"

"इर्ष्या तो नहीं, पर तेरे भविष्य के बारे में चिन्ता हो रही है।" रवीन ने गम्भीर हो कर कहा।

"क्या मतलब?" मोहन ने घबड़ा कर पूछा।

"बड़ी तेज-तर्रार लड़की है। नाक पर मक्खी नहीं बैठने देती प्यारे।"

"अरे इन बातों में क्या दम है। औरत तेज-तर्रार होकर कहाँ तक जाएगी ?"

"बेटा, वह साधारण नहीं। तुम्हें नाकों चने चबवा देगी।"

"अबे जा। तुम कॉलेज के छोकरे हो। औरत को कैसे रखना चाहिए तुम नहीं जानते। आने दो मेरे चंगुल में, उसकी सारी तेजाई न निकाल दी, तो मेरा नाम मोहन लाल नहीं।"

"अब तेजाई उसकी निकलते हैं या तुम्हारी, यही देखना है।"

"तुम्हें न मिल सकी, इससे जलते हो ?"

"मेरे गिर्द तो ऐसी बीसियों लड़कियाँ मँडराती हैं। फिर मैं इतने छोटे घराने में शादी की बात सोच ही नहीं सकता था।" रबीन ने सगर्व कहा।

"सुना है, तुम तो कालेज में गुड़ के ढेले हो, जिस पर लड़कियाँ चींटियों की तरह मँडराती हैं।" मोहन लाल की बात सुन कर रबीन सगर्व मुस्कराया।

"आजकल किससे इश्क फरमा रहे हो। यही दीपिका से ही तो नहीं ?"

"चाहा तो था कि कुछ समय उसके साथ मजा मारूँ, पर……"

"जनाब के हाथ न आई होगी वह।"

"ऐसी कोई बात नहीं। मैंने तेरे लिए छोड़ दिया। रबीन ने बात मजाक में उड़ा दी।"

"फिर किससे साँठ-गाँठ चल रही है ?"

"क्या फालतू बात करता है।"

"नहीं-नहीं, कोई-न-कोई तो जरूर होगी। मैं तुम्हारी नस-नस पहचानता हूँ।"

"जमनादास मोटर वाले हैं। उनकी लड़की से दोस्ती गाँठने की कोशिश में हूँ। पर, वह आजकल एक कवि के चक्कर में है।"

"वह बहुत बड़े आसामी की बेटी है। जरा सम्हल कर रहना प्यारे।"

"जा वे, तू मुझे अकल न सिखा।"

"अच्छा चलता हूँ। तूने मुझे चेतावनी दे दी। अब जैसा भी फैसला होगा तुझे बतलाऊँगा। बाई, बाई। मोहन ने कहा।"

"बाई, बाई।"

● ● ●

६

"नमस्ते मिस दीपिका।"

"नमस्ते मिस्टर प्रशांत। क्या बात है, आज प्रीति आपके साथ नहीं आई?"

"आज उसकी तबियत जरा ढीली है।"

पीरियड शुरू होने में अभी कुछ देर थी। वे दोनों लॉन में आकर एक बेंच पर बैठ गये। प्रशान्त शान्त था, कुछ विचारमग्न भी। दीपिका ने सामने कॉलेज बिल्डिग को देखते हुए कहा, "अब हमें कॉलेज में एक सप्ताह ही और आना है, बस।"

"हाँ जब शीघ्र ही जिन्दगी का एक अध्याय पूरा होने जा रहा है।" प्रशांत का स्वर बहुत धीमा था।

"सच कहूँ प्रशांत, इस जीवन से विदा माँगते हुए मन में एक टीस सी उठती है। यद्यपि मैं इतनी भावुक नहीं हूँ। भविष्य अपने सुनहले पंखों में हमें

बुला रहा है। फिर भी ये झाड़, ये पेड़, यह लॉन, ये ब्रेचें, क्लास रूम, लायब्रेरी, कैंटीन, लड़के-लड़कियों का कोलाहल सबका एक सम्मोहन है, जो नहीं छूटता। इस भवन का पत्थर और इसकी भूमि का कण-कण मुझे अपने आकर्षण में बांधे हुए है। बहुत सी मृदुल स्मृतियाँ इसके साथ जुड़ी हैं। हम यहाँ कोरे आए थे और कितना कुछ लेकर जा रहे हैं।"

"तुम सच कह रही हो, दीपिका। यहाँ के जीवन की सुमधुर स्मृतियाँ मुझे भी व्यथित करती रहेंगी। पर तुम कहती हो, भविष्य के सुनहले पंख बुला रहे हैं। मुझे तो भविष्य अथाह सागर दीख रहा है। एक अदृश्य यात्रा है वह जो कहीं समाप्त भी होगी, कहा नहीं जा सकता।"

"उस अदृश्य यात्रा को हम निराशा से ही क्यों आरम्भ करें, प्रशांत।"

कुछ देर दोनों चुप बैठे रहे।

"दीपिका ने विषय बदल कर कहा, "आज डॉ० द्विवेदी तो आए नहीं। सोचती हूँ, वापस चली जाऊँ।"

"आज मिसेस धावन 'आधुनिक नारी' विषय पर लेक्चर देंगी। सुनना तो सही।"

"तब तो रह जाऊँगी।"

तभी नीलिमा ने आ कर एक समाचार सुनाया, "पिताजी का ट्रांसफर हो गया है। मदीनापुर।"

सुनकर दीपिका को काफी दुख हुआ। बोली, "नीलू, मुझे उनसे सदा पिता का सा स्नेह मिला है। अनेक उलझनों में मैंने उनसे मार्ग दर्शन भी पाया है। अब मुझे उनसे स्नेह वंचित होना पड़ेगा। ······कॉलेज जीवन छूटने के साथ तुम लोगों का साथ भी छूट गया।"

प्रशांत ने कहा, "नीलिमा जी, मेरे हृदय के उद्गार हैं, वह कॉलेज में सर्वश्रेष्ठ अध्यापक और व्यक्ति थे। उनके चरित्र और ज्ञान से सभी लाभान्वित हुए हैं।

उस दिन मिसेस धावन ने अपने भाषण में आधुनिक नारी के केवल दोष ही गिनाए। उन्होंने नारी को फैशनपरस्त और अपने कर्त्तव्य-पथ से हटती हुई बताया। इससे छात्राएँ प्रभावित तो नहीं हुईं, उन्हें दुःख भी लगा। सभी छात्र भीतर-ही-भीतर कुछ कहने को कुलबुला रहे थे, पर एकदम साहस नहीं कर पा रहा था कोई। कुछ यह भी समझ रहे थे कि मिसेस धावन को कुछ भी कहना व्यर्थ है। वे प्रौढ़ महिला थीं और नई पीढ़ी से बेहद असंतुष्ट भी।

किन्तु दीपिका से नहीं रहा गया। वह अपने स्थान से उठ कर बोली, "आपके मत की आलोचना तो मैं नहीं करना चाहती मैडम, किन्तु इतना जानती हूँ कि आज की नारी केवल अवगुणों की खान ही नहीं है, बल्कि वह अधिक साहसी और बुद्धिमान भी हो गई है। आज वह घर और बाहर दोनों क्षेत्र सम्हाल लेने में समर्थ हो गई है। मैडम, अफसोस तो मुझे यह है कि आप स्वयं नारी होकर केवल उसके अवगुण ही देख रही हैं।"

सारे छात्र तालियाँ बजा उठे। मिसेज धावन अपने को अपमानित-सी अनुभव करती हुई रोष-भरे स्वर में बोलीं, "आज की नारी के एक दुर्गुण का परिचय तो यहीं मिल गया कि वह आज्ञाकारिणी नहीं है।"

क्षमा करेंगी मैडम, नई पीढ़ी को प्राचीन परम्पराओं के घेरे में कैद रखना और उसके विवेक स्वातन्त्र्य का इस प्रकार अपरोक्ष रूप से अपहरण करना क्या न्यायोचित है? क्या इस प्रकार हमारी प्रगति के द्वार बंद नहीं हो जाते? हमारी स्वतंत्र बुद्धि का कुछ भी महत्व रह जाता है क्या?"

छात्र फिर तालियाँ बजा उठे। मैडम धावन रोष-भरे शब्दों में दीपिका को "एक बिगड़ी हुई पाश्चात्य विचारों की लड़की कह कर' पैर पटकती बाहर चली गईं। सभी दीपिका की ओर प्रशंसायुक्त दृष्टि से देखने लगे। वह कंचन, हेमा और नीलिमा से घिरी बाहर आई। रवीन ने यह अवसर नहीं चूका। उसने दीपिका के पास आकर कहा, "ऐसे मौके पर नारी समाज का पक्ष लेकर आपने प्रशंसनीय कार्य किया है मिस दीपिका, मैं आपके विचारों से पूर्णतया सहमत हूँ।

दीपिका उसे धन्यवाद देकर लायब्रेरी की ओर बढ़ी।

डा. डिल्ली रमण रेड्डी

प्रशांत ने आकर कहा, "मिस दीपिका, आपने मैडम धावन का विरोध कर सभी विद्यार्थियों के विचारों का प्रतिनिधित्व किया है।"

"इसमें कुछ बड़ाई की बात नहीं प्रशांत, जो मैंने अनुभव किया, बस वही कह दिया।"

"पर मिसेस धावन को तुम्हें बिगड़ी हुई लड़की नहीं कहना चाहिए था।" कंचन ने कहा।

"इससे मेरा कुछ नहीं बिगड़ा कंचन, केवल मैडम धावन के उत्कृष्ट विचारों और व्यवहारों का ही पता चला। इस प्रकार कुछ भी कह कर कोई भी बुजुर्ग हम पर अपने विचार थोप तो नहीं सकता।"

"हाँ, थोप तो नहीं सकता। पर, डाँट-डपट तो कर ही सकता है।" कंचन ने कहा।

"अन्तिम हथियार तो वही है। उनके पास।" दीपिका बोली।

"पर मैं समझती हूँ, इस प्रकार तो वे अपने बालकों को उच्छृङ्खल बनाने में ही सहायक होते हैं।"

"क्या भाषण चल रहा है दीदी ?" गीतिका ने पास आते हुए पूछा।

"तुम्हारी दीदी को शिकायत है कि उनके स्वतंत्र विचारों का मूल्य नहीं आंका जाता।" हेमा ने दीपिका के कुछ कहने से पहले ही कह डाला।

"मुझे ही क्यों, यह शिकायत तो सभी लड़कियों को हो सकती है। इस बुद्धि और कार्यक्षेत्र में बराबरी के अधिकार में अवश्य आ गई हैं, पर घर में, अभिभावकों के सम्मुख, और समाज में कितना मूल्य है, हमारा और हमारे विचारों का ? जीवन का सबसे महत्वपूर्ण और मधुर पग 'विवाह' तक में तो लड़कियों को कोई महत्त्व नहीं दिया जाता। अगर अभिभावक बहुत ही आधुनिक बनेंगे, बस यहाँ तक कि किसी लड़के के सामने उसे चाय देने के लिए बैरे के समान पेश कर देंगे। कुछ ही इसके अपवाद हो सकते हैं। पर, कितने ?"

"दीदी, तुम मैडम धावन के प्रति अपनी खोज अपने अभिभावकों तक खींच ले आई ?" गीतिका को अभिभावकों पर चोट जरा अच्छी नहीं लग रही थी।

इसी समय कंचन ने एक समाचार सुनाया, "उन्नीस मई को उर्वशी की शादी है। सभी लड़कियाँ अपनी विचार गोष्ठी भूल कर उसे छेड़ने लगीं।

● ● ●

९

कंचन कार में बैठ कर घर जा रही थी कि रास्ते में हेमेन्द्र को देख उसने कार रुकवा दी। सिर बाहर निकाल कर बोली, "आइए हेमेन्द्र जी आपको घर तक छोड़ दूँ, धूप बहुत तेज है।"

हेमेन्द्र ने कार में आते हुए कहा, "धन्यवाद आपको। वैसे तो मैं धूप में चलने का अभ्यस्थ हूँ। साधारण जनता के लिए धूप-छाँव का क्या महत्व? वह तो आप जैसे भाग्यशालियों के लिए है।" उसने अपना चिरपरिचित भाषण आरम्भ कर दिया।

कंचन उससे यह सब सुनने की अभ्यस्थ थी। हेमेन्द्र के चुप होते ही उसने दूसरी बात छेड़ दी, "आप कल कॉलेज नहीं आए? मिसेस धावन की क्लास में बड़ा रोचक काण्ड हो गया।"

"क्या हुआ? मुझे कुछ पता नहीं चला।"

"मिसेस धावन ने कल 'आधुनिक नारी' पर लेक्चर दिया था, जिसमें उन्होंने उसके सब दोष ही गिनाए। दीपिका ने जब उसका प्रतिवाद किया,

तो वे रोष प्रकट करती चल दीं। सभी छात्र-छात्राओं में मिसेस धावन के प्रति बड़ा रोष है।"

"मैडम धावन का विरोध कर दोपिका जी ने बहुत अच्छा किया। ऐसा तो कभी न कोई युग था और न कभी आएगा ही, जिसमें नारी या पुरुष कोई भी सर्वगुणसम्पन्न रहें या रहे हों। समय के अनुसार गुणों की परिभाषा भी बनती-बिगड़ती चलती है। सत्य तो यही है मिस कंचन कि नारी को जितना कागजों और भाषणों में उछाला गया है, उतना वह कुछ भी नहीं बन पायी है। नारी-स्वातन्त्र्य, नारी-जागरण, नारी-साहस ये सारी बातें हमें पढ़ने को अधिक मिलती हैं, देखने को नाममात्र ही। आज भी बुजुर्ग और शक्तिशाली पुरुष वर्ग उस पर अपने आधिपत्य को जताए रखने में अपनी शान समझता है। आधुनिक सभ्य समाज की नारी से अधिक स्वतन्त्र तो कबीले की और आदिवासी स्त्रियाँ हैं। वैसे आज की नारी को हम अधिक साहसी और बुद्धिमान कह सकते हैं। वह केवल अर्न्मुखी या बहिर्मुखी नहीं। वह तो अब दोनों क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम है। पर कुछ वर्गों में आज भी उसका जीवन बड़ा खोखला और निरुद्देश्य-सा ही है।"

"हाँ दीपिका भी बहुत कुछ ऐसी ही बातें कर रही थी।"

"हाँ, वह भी सत्य कहती थी। कुछ वर्ग, खासकर उच्चवर्ग की स्त्रियों का जीवन अधिक निरुद्देश्य है। वे अपना अधिकाधिक समय शृङ्गार प्रसाधनों में ही लगा देती हैं।"

हेमेन्द्र अपने मूल विचारों पर आ गया था बोला, "फिर भी कइयों का समय नहीं कटता, तो सौ-सौ रुपयों की नौकरी करने लगती हैं। सौ रुपये की नौकरी के लिए वे डेढ़-डेढ़ सौ की साड़ियाँ पहन कर जाती हैं। इस प्रकार गरीब वर्ग की जरूरतमन्द औरतों का हक छीनती हैं।"

कंचन को उस दिन की याद आ गई, जब वह सौंदर्य प्रसाधन खरीद कर लायी थी और हेमेन्द्र ने उसकी आलोचना की थी। कंचन को लगा, वह उसी की आलोचना कर रहा है। बातचीत में एकाध बार उसने कॉलेज छोड़ने के बाद

नौकरी कर लेने की इच्छा भी व्यक्त की थी। उसने विषय बदलने के इरादे से पूछा, "परीक्षा की तैयारी कैसी चल रही है आपकी ?"

हेमेन्द्र ने उत्तर दिया, तैयारी करने के लिए समय मिले तभी तो। पास हो जाऊ, यही बहुत है।"

कंचन ने आश्चर्य से उसकी ओर देखते हुए पूछा—"क्यों, समय क्यों नहीं मिलता ?"

"आपको ज्ञात नहीं शायद, मैं काम भी करता हूँ। न कमाऊँ तो खाऊँ कहाँ से और पढ़ाई भी कैसे हो ? पहले सोचा था कि परीक्षा के पहले थोड़े पैसे बचा कर रख लूंगा और परीक्षा के समय निश्चिन्त होकर पढ़ूंगा। लेकिन पैसा तो जैसे न रुकने की प्रतीज्ञा करके आता है।"

कंचन जानती थी कि हेमेन्द्र के पिता अवकाशप्राप्त व्यक्ति हैं और उससे छोटे पाँच भाई बहन हैं। उसका हृदय द्रवीभूत हो उठा। हेमेन्द्र की स्पष्ट-वादिता से वह बहुत प्रभावित थी। बोली, "हेमेन्द्र जी, आप बुरा न माने तो एक बात कहूँ ?"

"कहिए।"

"अब आप अवश्य ही काम छोड़ दीजिए। परीक्षा में रह गये तो भविष्य पर बुरा असर होगा। दो-चार सौ रुपये मुझसे ले लीजिए, ताकि खर्च चलता रहे।"

हेमेन्द्र चकित भाव से उसकी ओर देखने लगा। उसने इस दृष्टि से तो कंचन को अपनी कठिनाई नहीं बतलाई थी ? न ही उसे इस प्रस्ताव की आशा थी। वह सहज ही कोई उत्तर नहीं दे पाया। उसका आत्मदर्प भी जाग्रत हो आया। उसने कहा, "आपकी हितेच्छा के लिए धन्यवाद मिस कंचन ! मैं किसी से भी आर्थिक सहायता नहीं लेता।"

"सहायता न सही, आप ऋण के रूप में ही ले लें। उसमें तो कोई बुराई नहीं। संसार के बड़े-बड़े कार्य ऋण के बल पर चलते हैं।"

"किन्तु मैं ऋण कैसे चुका पाऊँगा मिस कंचन, पैसा तो कभी बचता ही नहीं।"

कंचन विवश-सी हो गई। वह उसकी सहायता अवश्य करना चाहती थी, पर कैसे करे, उसकी समझ में नहीं आ रहा था। कुछ देर वह बड़े असमन्जस में पड़ी रही। फिर सहसा हेमेन्द्र का हाथ पकड़ कर बोली, "प्लीज हेमेन्द्र, अपने भविष्य का द्वार आप इस प्रकार पैसों की कमी से बन्द मत करिए। क्या हमारा पैसा प्रतिभाओं के काम नहीं आ सकता? आप यदि थोड़ा समय और मन लगा कर पढ़ेंगे, तो अवश्य ही प्रथम आ सकते हैं! प्लीज हेमेन्द्र, क्या आप पर मेरा कुछ भी अधिकार नहीं?"

हेमेन्द्र ने पहले भी लक्ष्य किया कि कंचन उसकी ओर आकर्षित है। पर, उसने इस तथ्य को देख कर भी अनदेखा कर दिया था। उसे इसकी जरा भी परवाह नहीं थी। आज अकस्मात् कंचन के व्यवहार से वह द्रवित हो गया। कंचन के हाथ के मृदु स्पर्श ने जैसे उसके जीवन की कठोरता क्षणांश के लिए मिटा ही दी। अब कंचन के अनुरोध को ठुकराने का वह साहस न कर सका। वह कुछ उलझ-सा गया। उसने कहा, "मिस कंचन, किसी को यह बात मालूम हो इसे मैं अपना अपमान समझता हूँ। अतः मैं आपसे ऋण नहीं ले सकूँगा? क्षमा करिए।"

"आप इससे निश्चिन्त रहिए। इतने रुपए तो मेरे पास हमेशा ही रहते हैं। मैं भला किसी को क्यों बताने लगी?"

"पर मुझे इस अनुरोध को मानने के लिए विवश न कीजिए मिस कंचन।"

कंचन निराश हो गई।

• • •

१०

मोहन लाल ने रबीन से आकर कहा, "यार तुम सच कहते थे। वह तो बड़ी घमण्डी लड़की है।"

"क्यों, क्या हुआ ?"

"कहती है, मैं किसी अनजान लड़के से शादी नहीं करूंगी। हमारा तो बड़ा अपमान हुआ। पिताजी सारी बात तय कर चुके थे। मेरा उसे देखना ही बाकी रह गया था।"

रबीन ने गर्व से कहा, "कहो बेटा, हमने क्या कहा था ?"

"पिताजी बहुत क्रोधित हुए। अब वे लोग कहते हैं कि छोटी वाली से शादी कर लो। उसके बारे में तुम्हारी क्या राय है ?"

"लड़की तो वह भी गजब की खूबसूरत है। है भी बहुत सीधी। गैया बन कर रहेगी।"

"तो फिर कभी दिखा दो न उसे।"

"अब तो मुश्किल है। परीक्षा की छुट्टियाँ हो गई हैं। कॉलेज चालू होते, तो दिखा भी देता। उसे उसके घर ही देख आओ न।"

"वह तो है ही। पर अभी न जाने कितने दिन लगें ?"

"एक बात कहूँ, वहाँ जावोगे तो बड़ी के सामने मत पड़ना, नहीं तो भगवान जाने वह कैसा स्वागत करे तुम्हारा।"

"अरे जा बे, मेरे हत्थे नहीं चढ़ी नहीं तो तीर की तरह सीधी करके रख देता।" फिर कुछ रुक कर बोला, "मुझे शक है यार, जरूर पहले उसकी किसी से आँख लड़ गई होगी। नहीं तो हममें ही ऐसा क्या बुरा था ?"

हो सकता है। रबीन ने उत्तर दिया, "एक प्रोफेसर का लड़का है। अक्सर उसके साथ दिखाई पड़ती है।"

"और तुम अपनी सुनाओ ? क्या नाम बता रहे थे उस मोटर वाली लड़की का ?"……?"

"वह भी अजीव मूर्खा है। उस टुटपूँजिए कवि के पीछे लट्टू हो रही है, जिसे न तो वात करने की तमीज है न जेब में कभी कानी कौड़ी भी होती है। सदा अपने बाप के संतानों के कारण दुःखी रहता है। ये लोग अपने घर में जनसंख्या बढ़ा लेते हैं और फिर पूँजीपतियों को गरीवी के लिए कोसते रहते हैं।"

"अरे यार, दिन रात की घिसने वाली बात कि प्रेम अंधा होता है, तू नहीं जानता क्या ?"

रबीन जोर से हँस दिया……तो तुम कब करा रहे हो शादी ? रबीन ने पूछा।

"देखो कब तक फैसला हो। प्रश्न यही है कि बड़ी लड़की के इन्कार करने पर घर की छोटी लड़की से व्याह होना उचित होगा क्या ? कहीं यह भी उसी की तरह निकले तो ? वैसे तुम कह ही रहे हो कि वह गाय है।"

"इसमें शक की गुन्जाइश नहीं।"

"खैर, फैसला तो पिताजी को करना है। हमें कौन पूछता है दोस्त ?"

"तुम्हें साले, कभी कोई पूछने का नहीं। तुम्हें तुम्हारी बीबी भी नहीं पूछेगी।" कह कर रबीन ने उसके कंधे पर जोर का हाथ मारा।

× × ×

कंचन सुबह का नाश्ता लेकर स्टडी में बैठी ही थी कि नौकर ने आकर कहा, "मिस्साब आपका फोन आया है।"

फोन उठा कर बोली, "हेलो, मैं कंचन बोल रही हूँ।"

उधर से हेमा का स्वर सुनाई दिया, "हेलो, कंचन डार्लिङ्ग, मैं हूँ हेमा। सुनाओ, क्या कर रही हो ?"

"अभी पुस्तक लेकर बैठी थी।"

"अच्छा तो स्टडी चल रही है जोरदार।"

"जोरदार-ओरदार कुछ नहीं, बस किताब रहती है सामने। कुछ पढ़ा-पढ़ाया नहीं जाता।"

"सच कंचन, कॉलेज बन्द होने के बाद से तो मैं भी बहुत बोर हो गयी।"

"आज मेरे यहाँ आ जाओ न हेमा। दीप से भी मिल आएँगे। इधर कोई भी नहीं मिल सकी है। दीपिका, नीलिमा, प्रीति, उर्वशी कोई भी नहीं।"

"मैं आ जाऊँ? तुम्हीं क्यों नहीं आ जाती कंचन, तुम्हारे पास गाड़ी है। मुझे तो बस के लिए इन्तजार करना होगा।"

"अच्छा तो मैं गाड़ी भेज देती हूँ तुम ही आ जाओ।" कंचन ने आग्रह किया।

"तो मैं तैयार रहूँ?"

"हाँ···जा पर, हमारा ड्राइवर आज छुट्टी पर है···देखो भैया से पूछ कर बताती हूँ। दो मिनट रुको।"

कंचन ने अपने भाई का फोन मिलाया, फिर हेमा से फोन मिला कर बोली, अच्छा हेमा, राजेन्द्र भैया दूकान से लौटते समय तुम्हें लेते आएँगे। आधे घण्टे में तैयार रहना। बड़ी मुश्किल से उन्हें मना पायी हूँ। कहते थे, मुझे तो संकोच होता है। तुम्हें तो संकोच नहीं होगा न उनके साथ आने में?" कह कर कंचन हँसने लगी।

हेमा ने उत्तर दिया, "तुम बहुत नटखट लड़की हो, मेरा तो उनसे कोई परिचय ही नहीं, बस देखा भर है।"

"चिन्ता मत करो, अच्छी तरह परिचय करा दूँगी। वैसे तो राह में परिचय हो ही जायेगा। राजेन्द्र भैया तो तुम्हारी खूब प्रशंसा करते रहते हैं।"

"शटअप, शैतान कहीं की।" हेमा ने कहा।

"अच्छा मैं तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही हूँ।" कह कर कंचन ने फोन रख दिया।

राजेन्द्र हेमा के साथ कंचन के कमरे में प्रवेश करते हुए बोला, "लो कंचन, अपनी सखी को सम्भाल लो।"

कंचन हेमा को कंधों से पकड़ते हुए बोली, "धन्यवाद भैया, यह बिल्कुल सुरक्षित है।"

हेमा बोली, "मेरी ओर से भी अपने भैया को धन्यवाद दे दो कंचन।"

"इनसे कह देना कंचन, मैं अपने श्रम के लिए किसी तीसरे व्यक्ति के माध्यम से दिया गया धन्यवाद नहीं स्वीकारता।" राजेन्द्र ने कहा।

हेमा हाथ जोड़ कर खड़ी हो गई। राजेन्द्र की ओर दृष्टि डाल कर बोली, "आपका शतशः धन्यवाद।"

वे तीनों हँसने लगे।

कंचन ने कहा, "यह माजरा क्या है ? मैं समझ नहीं पाई। तुम लोग तृतीय पुरुष के माध्यम से क्यों बातें कर रहे हो ? क्या कार में तुमने किसी के माध्यम से विचारों का आदान-प्रदान किया था ?"

राजेन्द्र ने उत्तर दिया, "उसकी आवश्यकता ही नहीं पड़ी, इनकी चुप्पी से मुझे लगा शायद आज इनका मौन व्रत हो।"

"कंचन से आपने कहा था न कि मुझे संकोच होता है। मैंने सोचा, आपको संकोच में क्यो डालूँ।"

कंचन ने कहा, "भैया, तुम इस लड़की को मौन-व्रत रखने वाली समझ कर भूल कर रहे हो। जरा घंटा भर इसके साथ बैठ लो, तो कह उठोगे कि इससे तो मौन-व्रत भी डर कर भाग गया। और हेमा, तुम भी भैया को संकोची मत समझो। ये बनते अधिक हैं।"

तीनों हँसते हुए ड्राइंग रूम में आ बैठे। कॉफी पीते हुए कंचन बोली, "हेमा, भैया संकोची तो नहीं हैं, किन्तु विवाह करने से बहुत घबड़ाते हैं। मम्मी-डैडी दोनों कह कर हार गए। मेरी तो बड़ी इच्छा है कि भैया जल्दी ही एक प्यारी-प्यारी सुन्दर सी भाभी ले आएं।"

"तो क्या ये तुम्हारी इच्छा पूरा न करने पर ही तुले हैं ?" हेमा ने कहा।

कंचन बोली, "कितनी ही लड़कियों ने स्वयं ने प्रपोज किया। पर यह माने ही नहीं। भला उनके हृदय पर क्या बीती होगी ?"

"इसमें क्या विशेषता है।" राजेन्द्र ने कहा, "कहा गया है न कि प्रत्येक स्त्री को विवाह कर लेना चाहिए और प्रत्येक पुरुष को विवाह से बचना चाहिए। उसी के अनुसार वे अपने पथ पर चल रही हैं और मैं अपने पथ पर।"

"किसके हैं ये शब्द ? कहीं कवि समन्वय के तो नहीं ?" कह कर हेमा हँस दी।"

"हैं किसी लेखक या कवि के ही।" कुछ रुक कर राजेन्द्र ने फिर कहा, "मिस हेमा, आप ही बताइए, इस समस्याओं और अनिश्चितताओं से भरे युग में विवाह करना क्या बुद्धिमानी होगी ? मेरा मतलब है पुरुष के लिए।"

हेमा ने उसकी ओर कटाक्ष करके कहा, "बड़ा गर्व है आपको अपने पुरुषत्व का।" किन्तु यह शब्द कहते-कहते वह लजा गई और अपनी कमीज का पल्ला ठीक करने लगी।

कंचन ने इसे लक्ष्य न किया। वह बोली, "अभी इन्हें कोई मिली नहीं है न, जरा भाभी को आ जाने दो घर में, तब पूछूंगी कि तुम्हारे सिद्धान्त क्या हुए ?"

"कदाचित ही कोई पुरुष ऐसा होता है कंचन, जिसके कर्म उसके सिद्धान्त के अनुरूप हों।"

राजेन्द्र ने एक कुटिल रहस्यपूर्ण मुस्कान के साथ कहा, "हेमा जी, आपका कथन सत्य और अति महत्वपूर्ण है। मैं इससे पूर्णतया सहमत हूँ।" फिर वह सहसा उठ कर चला गया। हेमा उसके इस कथन का अर्थ सोचती रह गई।

राजेन्द्र के चले जाने पर सोफे पर पैर फैला कर बैठते हुए कंचन से हेमा ने पूछा, "कहो कंचन, तुम्हारे कवि महोदय का क्या हाल है ? उनसे भेंट होती है न ?"

''मेरे कवि महोदय कैसे ? बस यूँ ही जान-पहचान है ?''

''अब मुझसे न बनो कंचन, तुम्हारा घंटों जो एकांत में वार्तालाप होता रहता है, क्या उसे मैं नहीं जानती ? तुम वास्तव में उससे प्रेम करती हो न ।''

कंचन ने उसके मुँह पर हाथ धर दिया । ''बोली, हिश पगली, क्या बकती है । वह तो अपनी कविताएँ सुना-सुना कर बोर किया करता है । कोई श्रोता नहीं मिलता बेचारे को । वैसे मुझे उससे सहानुभूति अवश्य है । वह निर्धन अवश्य है, पर दिल का बहुत साफ है । हम जितने ऊपरी आडम्बरों के जाल में जीते हैं, उतना उसके पास कुछ नहीं । इसीलिए मैं कभी उसकी बात का बुरा नहीं मानती ।''

हेमा ने कहा, ''पर वह कभी भद्र पुरुषों जैसी बातें नहीं करता । न जाने तुम उसे कैसे सहन कर पाती हो । मैं तो एक मिनट न सह सकूँ । निर्धनता का यह अर्थ तो नहीं कि वह व्यावसाविक भी न रहे और हर समृद्ध व्यक्ति पर विष उगलता फिरे ।''

तभी बाहर एक कार आकर रुकी । दोनों का ध्यान उधर गया । रबीन ने प्रवेश करते हुए कहा, ''नमस्ते मिस कंचन, अरे यहाँ तो मिस हेमा भी उपस्थित हैं ।''

''नमस्ते हेमा जी ।''

''हेमा ने भी नमस्ते का उत्तर दे दिया ।''

''कंचन ने उसे सोफे पर बैठने का इशारा करते हुए पूछा, ''कहिए कैसे कष्ट किया आज ?''

रबीन साफ झूठ बोल गया, ''सोचा आपके पास डॉ० द्विवेदी के लिखवाए नोट्स होंगे । मुझसे तो अब तक कुछ भी नहीं पढ़ा गया ।''

वैसे वह यों ही आ गया था, यही सच है ।

''नोट्स तो मेरे पास कोई नहीं है, क्षमा कीजिए ।''

' खैर आपकी तैयारी कैसी चल रही है ? और मिस हेमा आपकी ?''

हेमा ने उत्तर दिया, "क्या करें पढ़ाई में मन ही नहीं लगता। मैं तो बेहद बोर हो उठी हूँ। लाइफ बहुत डल गुजर रही है। कॉलेज छूटा तो सखी-सहेलियाँ, मनोविनोद, सभा सोसायटी, पिक्चर, पिकनिक सभी छूट गए। लगता है कल तक छात्रा थी, आज प्रौढ़ा हो गई हूँ। हर वक्त, हर ओर किताबें-किताबें। मैं तो बोर हो गई।"

"वास्तव में बड़ा नीरस जीवन हो गया है। इन परीक्षाओं का चक्कर बुरा है। बस कालेज चलते रहें। मैंने तो एक माह से कोई फिल्म नहीं देखी है। आपने देखी कोई ?" रबीन ने कहा।

"एक देखी थी भैया के साथ।" कंचन ने उत्तर दिया।

"मैंने भी एक ही देखी है इन दिनों।"

रबीन फिर झूठ बोला, "आप चाहें तो आज चलिए। आज मेरे पास चार पास आए हैं। साथ न मिलने के कारण मैं तो जा ही नहीं रहा था।"

कंचन ने हेमा से पूछा, "क्या विचार है ?"

"हमें अवश्य चलना चाहिए कंचन।" पुस्तकें चाटते-चाटते हमारा दिमाग ही चला जाएगा। मनोरंजन हुए बिना हम पढ़ नहीं पाएँगे।

"तब ठीक है।"

रबीन ने कहा, तब आप तैयार रहें, मैं ठीक छः बजे गाड़ी लेकर आ जाऊंगा।

कंचन ने हेमा की ओर देखते हुए कहा, "राजेन्द्र भैया को भी साथ ले लें ?"

"अवश्य।"

रबीन चला गया।

हेमा ने कहा, "दीपिका काण्ड के बावजूद मैं यही कहूँगी कि रबीन एक भद्र पुरुष है। उसका शिष्ट आचरण निर्दोष है, उसका मधुर व्यवहार प्रसन्नतादायक है।"

कंचन मन-ही-मन हेमेन्द्र के साथ रबीन की तुलना करने लगी। उसे पुनः रबीन के सामने ही हेमेन्द्र द्वारा किया गया अपना अपमान याद आ गया।

वह बोली, "तुम सत्य कहती हो हेमा।"

शाम को नियत समय पर रबीन आ गया। कंचन ने कहा, "आपको अपने भैया से मिलवा दूँ। वे भी पिक्चर चलने के लिए राजी हो गए हैं।"

वह राजेन्द्र को बुला लायी और दोनों का परिचय करवा दिया। परस्पर अभिवादन के थोड़ी ही देर बाद वे अच्छे मित्रों की तरह बातें कर रहे थे। एक ही व्यवसाय और रुचि के व्यक्ति जो थे।

राह में कंचन ने हेमा से फुसफुसाकर कहा, "आज अच्छी तरह भैया से परिचय प्राप्त कर लो। वे तुम्हें बहुत चाहते हैं।"

हेमा ने चिकोटी लेकर कहा, "धत्त !"

वे दोनों कार की पिछली सीट पर बैठी थीं। इसलिए सुगमतापूर्वक बातें कर सकती थीं। थोड़ी देर बाद हेमा ने कंचन के कान में मुंह ले जा कर कहा, "एक बात पर ध्यान देना, रबीन हेमेन्द्र की अपेक्षा बहुत अच्छा व्यक्ति है।"

कंचन के मुख पर हास्य की एक क्षीण रेखा दिखाई दी। दूसरे ही क्षण वह गम्भीर हो गयी, फिर बोली, "तुम तो उसे काफी पहले से जानती हो न ?"

हेमा ने उत्तर दिया, "हाँ, हम अच्छे मित्र थे।"

● ● ●

११

दीपिका अपने विवाह के सम्बन्ध में माँ को अपना निर्णय सुनाने और मिसेज धावन से बहस होने के बाद से काफी उद्विग्न थी। बौद्धिक आधार की दृष्टि से उसे विश्वास था कि उसका निर्णय अनुचित नहीं। किन्तु अनुभव, व्यावहारिकता एवं वास्तविकता के सम्बन्ध में उसे अपनी सीमाएं ज्ञात थीं। उसे डॉ० द्विवेदी की याद हो आयी। प्रत्येक उलझन और विकट परिस्थिति में उसने उनसे सम्मति और मार्गदर्शन पाया था। उसने सोचा—अब भी वह उनसे सलाह ले। वे शहर छोड़ कर जाने वाले भी थे। अतः उन्हें विदा देने एवं मिलने जाना भी आवश्यक था।

डॉ० द्विवेदी उस समय अपने घर के सामने के छोटे से बगीचे में बैठे अखबार देख रहे थे। दीपिका को देखते ही अखबार एक ओर रखते हुए बोले, "आओ दीपिका, कैसे आ गई इधर ?"

दीपिका नमस्ते करके वहीं घास पर बैठ गयी। डॉ० द्विवेदी नीलिमा को पुकारते हुए बोले, "देखो बेटी नीलिमा, दीपिका आयी है।"

नीलिमा भी वहीं आकर बैठ गयी।

दीपिका ने कहा, "नीलिमा ने समाचार दिया था कि आपका ट्रान्सफर हो गया है। बहुत दुःख हुआ सुन कर। आपके स्नेह और प्रेम से वंचित रह जाऊँगी।"

"ट्रान्सफर तो मैंने स्वयं ही करा ली। मदीनापुर हरियाली से घिरा छोटा स्थान है। मेरे स्वास्थ्य के लिए अच्छा रहेगा। फिर आजकल कॉलेजों में होने वाले दिन-रात के उपद्रव भी मुझसे सहे नहीं जाते। छोटी जगहों में आन्दोलन

कम ही होते हैं। वैसे इस प्रकार जाना ठीक नहीं। पर स्वास्थ्य गवाही नहीं देता। क्या करूँ? तुम लोगों से बिछड़ते हुए मुझे भी बहुत दुःख होता है।"

दीपिका चुप थी। डॉ० द्विवेदी थोड़ी देर रुक कर फिर बोले, "तुम्हारी पढ़ाई कैसी चल रही है?"

"ठीक ही है।"

"दीपिका, मुझे तुमसे सदा यही शिकायत रही कि तुमने कभी अध्ययन की ओर ध्यान नहीं दिया। नहीं तो तुम-जैसी प्रतिभावान लड़की का प्रथम श्रेणी में आना कोई बड़ी बात नहीं रहती।"

दीपिका मुस्कुरा दी। फिर नीलिमा से बोली, "तुम सुनाओ नीलिमा, डट कर पढ़ाई कर रही हो न?"

उत्तर डॉ० द्विवेदी ने दिया, "यह भी तुम्हारी सखी ही है न। हाँ, समीर को रुचि है। पढ़ने के कारण वह तो आजकल कमरे से बाहर ही नहीं निकलता।"

नीलिमा ने हँसते हुए कहा, "आप इतना पढ़े हैं पिता जी, भैया इतना पढ़ते हैं। अब मेरे लिए अधिक पढ़ना आवश्यक नहीं। यह कहाँ का नियम है कि परिवार के सारे सदस्य महापण्डित ही हों।"

डॉ० द्विवेदी हँस दिये, "जैसी तेरी मरजी बेटी। मैं तो तुमसे कभी कुछ कहता ही नहीं।"

नीलिमा उठ कर चाय बनाने चली गयी। दीपिका ने डॉ० द्विवेदी से कहा, "आपसे एक विषय पर सम्मति लेने आयी थी सर···।"

"कहो।"

"उस दिन आपसे मिल कर गई, तो जो प्रसंग उठा था, संयोग से वही प्रश्न बन कर सामने आ गया। गीतिका ने सूचना दी कि पिताजी मेरे विवाह की बात चला रहे हैं, मैंने इस विषय में उन्हें अपनी धारणा बता दी। माँ को मालूम हुआ, तो वे मुझे समझाने लगीं। किन्तु उनसे भी मैंने अपना निर्णय स्पष्ट कर दिया। माँ इससे बहुत दुःखी हुइं। पिताजी भी बहुत चिंतित हैं,

हालांकि मुझसे कुछ नहीं कहा। मैं समझ नहीं पाती कि अपने निर्णय पर स्थिर रहूँ अथवा उसे बदल दूँ। शंका उठती है कि स्वतंत्र आचरण का जो पथ मैंने अपनाया है, वह कल्याणप्रद होगा या नहीं।''

डॉ० द्विवेदी ने उत्तर दिया, ''बेटी कल्याण की तो कामना ही की जा सकती है, निश्चय नहीं। जो भविष्य है उसे तुम भाग्य कहो अथवा अदृश्य या कर्मफल। वह अज्ञान के काले पर्दे से ढँका है। इसमें हाथ डालते हैं इसी इच्छा से कि मणि निकलेगी किन्तु कौन जानता है कंकर ही निकले अथवा कांटा ही चुभ जाए। रही माता-पिता के दुःख की बात, तुम कोई बुरा काम तो कर नहीं रही, जिससे वे सदैव दुःख का ही अनुभव करते रहें। आज वे क्षुब्ध हैं अवश्य, किन्तु यह क्षोभ स्थायी नहीं होगा। परिवार या समाज में जब भी कोई नई चीज अपनाता है, तो उसे सहज ही लोक-सहयोग की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए, बल्कि उसे तो विरोधों से जूझने के लिए अपने को दृढ़ रखना चाहिए। व्यक्ति युगों से जिन परिस्थितियों, रीति-रिवाजों में पलता और रहता आया है, उनके प्रति उसे मोह हो जाता है। उसके इस मोह को जब कोई भंग करने की बात भी कहता है, तो यह उसे सहनीय नहीं होती है। इसमें तो भविष्य के परिणाम ही उन्हें दिलासा देते चलेंगे। तुम्हारा मार्ग यदि उचित है तो एक-न-एक दिन मां-बाप को उससे सुख अवश्य उपजेगा। फिर भी वही बात, कि यह सब अनिश्चित है, अज्ञात है, सिद्धान्तः तुम्हारा मार्ग उचित है और तुम उसका पालन कर सकती हो···तुमने यह नहीं बताया कि विवाह न करके तुम किस प्रकार का जीवन अपनाना चाहती हो?''

''मैंने तो यह कभी नहीं कहा सर!''

''मेरा तात्पर्य वही है। तुम स्वयं अपने विवाह का प्रबन्ध कैसे करोगी?''

''अभी परीक्षा देने के पश्चात् तो नौकरी करने का विचार है।'' कह कर दीपिका ने सर झुका लिया।

डॉ० द्विवेदी उसके संकोच को समझ कर बोले, ''यही कहना चाहती हो न कि उचित वर मिलने तक प्रतीक्षा करोगी, पर यह समझ लो कि यह विधि

सुगम नहीं है। हमारे समाज का ढाँचा उस प्रकार का नहीं। यहाँ पुरुषों से अधिक-से-अधिक परिचय मात्र स्थापित किया जा सकता है। उसमें भी कभी-कभी लड़कियों के चरित्र पर शंकाएँ उठती रहती हैं। वैसे भी जैसा कि मैं पहले भी कह चुका, नई राह पर संकट और कठिनाइयाँ अधिक हैं, जो लीक बन चुकी है। जो पगडंडी है, वह सीधी और सुरक्षित है पर नई राह तो तुम्हारा अपना उत्तरदायित्व है। इसलिए उसमें अधिक सावधानी की आवश्यकता है। जरा सी भावुकता, कोई गलत निर्णय, कोई भूल तुम्हे विपत्ति में डाल सकती है।''

''सर, आपने मुझे सावधान कर दिया—धन्यवाद !''

''मेरी शुभकामनाएँ सदा तुम्हारे साथ रहेंगी बेटी······सदा सतर्क रहना।''

वह थोड़ी देर नीलिमा के पास बैठ कर और समीर से मिल कर चलने लगी। दरवाजे पर ही प्रशांत मिल गया। उसने कहा, ''नमस्ते मिस दीपिका। इधर कैसे आई थी ?''

''यों ही डाक्टर साहब से मिलने आ गई थी। आप सुनाइए।''

''मैं भी डाक्टर साहब से मिलने ही आया था। आप शायद नीलिमा के पास बैठी थीं।''

''हाँ। समीर से भी मिली······आप तो बड़ी जल्दी चल दिए।''

''जल्दी क्या, परीक्षा का समय है न। इन लोंगों का अधिक समय नष्ट नहीं करना चाहिए।''

दीपिका ने साथ-साथ चलते हुए प्रशांत से पूछा, ''पढ़ाई कैसी चल रही है आपकी ? और हाँ, प्रीति के क्या हाल है ? अब तो वह मिलती भी नहीं।''

प्रशांत का मुखड़ा एकदम उदास हो आया। बोला, ''ठीक ही चल रहा है सब।''

दीपिका ने प्रशांत की उदासी को लक्ष्य करके कहा, ''क्या बात है प्रशांत जी, आप उदास और कुछ चिंतित से नजर आ रहे हैं ?''

''कुछ विशेष नहीं। कुछ दिनों से प्रीति का स्वास्थ्य खराब है। कुछ पढ़ नहीं रही। लगता है, उसका यह वर्ष बेकार जाएगा।''

"ओफ ! तो क्या वह बहुत बीमार है ?"

"बीमारी तो कोई खास नहीं, सिर दर्द वगैरह है पर पढ़ाई में उसका मन जरा भी नहीं लगता है।"

बड़ी विचित्र बात है यह। परीक्षा इतना समीप हो और पढ़ाई में मन न लगे। चलिए, मैं आपके साथ उसे देखने चलूं।"

"हाँ, अवश्य चलिए।" प्रशान्त ने उत्तर दिया। किन्तु दीपिका ने देखा कि उसके मुख पर पीड़ा की गहरी रेखाएँ बनती जा रही हैं।

वह उनके घर पहुँची तो देखा, प्रीति पलंग पर पेट के बल लेटी पड़ी है। उसके बाल अस्त-व्यस्त थे। लगता था, आज उसने कपड़े भी नहीं बदले हैं। दायीं ओर मेज पर एक पुस्तक खुली पड़ी थी। प्रशान्त ने उसे आवाज देकर कहा, "देखो प्रीति, मिस दीपिका आई हैं।"

प्रीति ने सिर ऊपर उठा कर देखा। एक फीकी सी मुस्कान उसके चेहरे पर फैल गई। उसने बैठते हुए कहा, "आओ दीप, आज हमारा याद कैसे आ गई ?"

उसकी अवस्था देख कर दीपिका को बहुत दुःख हुआ। पास जाकर उसने प्रीति का हाथ पकड़ कर कहा, "तुमने यह क्या हाल बना रखा है अपना ?"

उसने प्रीति के चेहरे को ध्यान से देखते हुए कहा, "क्या तुम रोती रहती हो दिन भर ? देखो गालों पर आँसु ढुलकने के चिह्न बन रहे हैं।"

"नहीं, कुछ तो नहीं। यों ही जरा तबीयत ढीली रहती है। तुम तो अब कभी नहीं आती।" प्रीति ने पीड़ा भरी मुस्कान से उत्तर दिया।

"पर तुम्हें हुआ क्या है ? हाय, कितनी कमजोर हो गई हो।"

प्रीति शून्य दृष्टि से उसकी ओर ताकती रही। जैसे उसका प्रश्न ही न समझ सकी हो।

दीपिका ने फिर प्रश्न किया, "किसी डाक्टर को दिखाया है ? स्वास्थ्य के प्रति इतनी लापरवाह तो मत बनो प्रीति। अब तो परीक्षा भी सिर पर आ गई है।"

"मैं···मुझे कह रही हो ? डाक्टर को दिखाया था, किन्तु······।"

प्रशांत ने उसकी बात पूरी कर दी,···"कहते हैं एनिमिया है। तीन-चार माह में ठीक हो जायेगा।"

दीपिका ने फिर प्रीति से कहा, "तुम बिलकुल नहीं पढ़ रही आजकल ? परीक्षा तो सिर पर आ रही है।"

"पढ़ कर अब क्या होगा दीप··मुझे अब बचना थोड़े है। भैया तो यों ही कहते हैं··प्रीति की रुलाई एकदम छूट गई है।"

प्रशांत ने कहा, "बस यह ऐसे ही बकती रहती है, हर समय इसे कोई बड़ी बीमारी नहीं। जल्दी ही ठीक हो जायेगी। यह बिल्कुल निराश हो गई है और पढ़ाई भी बिल्कुल छोड़ बैठी है।"

दीपिका कुछ भी न समझ पायी। प्रशांत और प्रीति दोनों का व्यवहार आज उसे अबूझ और विचित्र लगा। प्रशांत प्रीति की शिकायत तो कर रहा था, पर स्वयं उसके मुख से घोर निराशा और उदासी टपक रही थी। लगता था जैसे मृत्यु की भयावनी छायाएँ उनके चारों ओर डोल रही हैं। तभी उनकी छोटी सी चार वर्षीया बहन मुक्ता आ गई। वह बाहर से ही कहती आई, "दीदी, मेरी फ्रॉक धूल में गन्दी हो गई है। बदल दो। पर अचानक दीपिका को देख कर चकपका गई। दीपिका ने उसे गोद में उठा कर उसका मुँह चूम लिया, और कहा, मुक्ता, हमें नमस्ते नहीं करोगी ? भूल गई क्या अपने इस दीदी को ?"

"मुक्ता ने अपने नन्हें-नन्हें हाथ जोड़ कर धीरे से कहा, "नमस्ते।"

"हमारे साथ चलोगी ?"

"नहीं। उसने प्रीति की ओर संकेत करके कहा, "दीदी के पास रहूँगी।"

"तुम्हारी दीदी तो बड़ी खराब हो गई है आजकल।"

उस नन्हीं सी बच्ची ने अपनी दीदी का मुँह देख और उसके चेहरे पर भी विषाद की काली रेखाएं अंकित हो गईं। बोली, "दीदी रोती रहती है।"

वह दीपिका की पीठ पर झुक कर खेलने लगी। उसका रिबन अपने हाथ में पकड़ते हुए बोली, "हमारा रिबन लाल है। तुमने पीला क्यों बाँधा दीदी ?"

"हमारे पास लाल रिबन नहीं है मुक्ता। तुम दे दो न।"

"ले लो।" उसने प्रीति की ओर देखते हुए कहा, "दीदी के पास और रखे हैं।"

दीपिका ने चलते हुए प्रशांत से कहा, "प्रीति का इलाज सावधानी से कराइए प्रशांत जी। इसे न जाने क्या हो गया।"

"कराऊँगा······करा ही रहा हूँ।" प्रशांत बोला उसके मुख पर फिर स्याही सी पुत गई।

●●●

१२

दीपिका ने सोचा, अब वह एकाग्रचित्त होकर अध्ययन में लग जाएगी। डॉ० द्विवेदी के परामर्श से उसे संतोष था। कुछ बातें विचारणीय अवश्य थीं, किन्तु उन्हें उसने परीक्षा तक के लिए छोड़ दिया। माता-पिता उसकी ओर से खिंचे हुए थे। उसने सोचा, यदि वह अपना आचरण संयत रखेगी, तो वे अवश्य पिघल जाएंगे।

उसकी पढ़ाई में एक और आघात पड़ गया।

गीतिका परीक्षा करीब होने पर भी पढ़ाई में ध्यान नहीं दे रही थी। उसने गीतिका से कहा, "गीता, तू ढंग से पढ़ती क्यों नहीं है? अब तो परीक्षा के लिए मुश्किल से एक माह भी नहीं रहा है।"

"मैं परीक्षा में नहीं बैठूंगी दीदी।" गीतिका ने धीरे से उत्तर दिया।

"क्या पागल हो गई है? यह रइसों के पूतों-जैसा ड्रॉप करने का क्या विचार कैसे उठा?"

"माँ ने मना कर दिया है।" उसने सिर झुका कर कहा।

दीपिका तुरन्त माँ के पास चल दी। उसने माँ से पूछा, "माँ, मैं यह क्या सुन रही हूँ? तुमने गीतिका को परीक्षा में बैठने से मना कर दिया है?"

माँ ने उत्तर दिया, "तुम्हारे पिताजी इसका विवाह तय कर आए हैं। चढ़ते जेठ का मुहूर्त निकला है। अब परीक्षा देकर क्या होगा?"

दीपिका व्यथित-चकित खड़ी रह गई। कुछ पल बाद उसने सरोष पूछा, "विवाह पक्का हो गया है तो क्या तुम लोग इसे परीक्षा भी नहीं देने दोगे? पूरे साल की उसकी मेहनत बेकार कर दोगे?"

माँ ने बड़े मृदु शब्दों में कहा, "बेटी, विवाह के बाद कहीं पढ़ाई हो पाती है? आधा एम० ए० इसने कर भी लिया तो क्या लाभ?"

"विवाह क्या एक वर्ष को रुक नहीं सकता?"

"लड़के वाले इसी वर्ष और शीघ्र विवाह चाहते हैं। लड़का बी० ए० है, इसलिए कहता है लड़की को एम० ए० तक नहीं कराया जाए। हमें लड़की से कोई नौकरी थोड़े करानी है। गीतिका भी मान गई है।"

दीपिका से अब कोई उत्तर न बन पड़ा। वह कुछ देर चुपचाप सोचती रही। फिर पूछा, "कौन लोग हैं?"

वही लड़का है, जिससे तुम्हारे लिए बात चल रही थी।"

दीपिका ने व्यथापूर्ण दृष्टि से माँ की ओर देखा मानो कहना चाहती हो, तुम्हें और लड़का नहीं मिला लगता मैं?

माँ ने पुत्री की दृष्टि का कुछ अनुमान लगा कर स्थिति स्पष्ट की, "तुमने हमें बड़ी विकट स्थिति में डाल दिया था। हम तो अपनी ओर से रिश्ता पक्का ही कर चुके थे······अब गीता का भार तो उतरे।"

वास्तव में माता-पिता को यही चिंता थी कि कहीं लड़की भी अधिक पढ़ कर बड़ी लड़की के समान हठ न कर बैठे, हालांकि छोटी इतनी आज्ञाकारिणी थी कि उसके लिए ऐसी शंका कदापि नहीं की जा सकती थी।

एक समस्या और थी। लोग प्रश्न करते कि बड़ी को छोड़ कर छोटी लड़की की शादी पहले क्यों कर रहे हो? उन्होंने इस प्रश्न का उत्तर तैयार कर लिया था—बड़ी अभी और पढ़ाई करना चाहती है। किन्तु वे जानते थे कि बदनामी अवश्य होगी। वस्तुतः वे दूसरों को और स्वयं को भी धोखा दे रहे थे। वे समाज के उस वर्ग के अंग थे, जिसका प्रत्येक निजी और सार्वजनिक कार्य सबकी आलोचना का विषय बनता है। पर बड़ी के लिए छोटी को भी कहाँ तक और क्यों रोक रखा जाए, जबकि सुयोग्य वर मिल रहा है।

दीपिका ने सोचा, जब गीतिका ने ही स्वीकृति दे दी है, तो क्या हो सकता है। उसे अधिक खेद इसी बात का था कि परीक्षा से केवल बीस दिन पहले यह घटना घटी। उसने गीतिका से जाकर कहा, "तुम्हें विवाह की बहुत जल्दी पड़ी थी गीता?"

"मुझे जल्दी क्यों होगी? माँ-बाप ने जा निश्चय कर लिया है, उसे······"

"एक वर्ष ठहर कर एम० ए० नहीं कर सकती थी?"

"उससे क्या होता दीदी? मैं कोई नौकरी तो करूंगी नहीं।"

"क्या उच्च शिक्षा का उद्देश्य तू केवल नौकरी ही समझती है? तो फिर तूने बी० ए० ही क्यों किया?"

"गीतिका थोड़ा सोच कर बोली, "मैं नहीं जानती। पर दीदी, तुम गृहस्थ जीवन को इतनी हीन दृष्टि से क्यों देखती हो?"

दीपिका की आँखें आश्चर्य से फैल गईं। उसने कहा, "तुम मुझे गलत समझ रही हो गीतिका···तुमसे मैंने कब कहा कि यह जीवन हीन है ? हाँ, जीवन की सार्थकता के प्रति मनुष्य को अवश्य सावधान रहना चाहिए। महिमाय जीवन का मूल्य ही कुछ और है। वैसे जीवन के प्रति हीन भाव रखना तो अस्तित्व से पलायन ही है।"

"फिर तुम शिक्षा पर इतना बल क्यों दे रही हो ?"

"मैंने तुम्हें यह सलाह कभी नहीं दी गीता कि तुम विवाह मत करो या नौकरी करो। पर, अधूरी शिक्षा किस काम की ? और तुम यह गलत सनझ क्यों रखती हो कि गार्हस्थ्य जीवन में शिक्षा का कोई उपयोग नहीं ? तुम शिक्षा को इतना हीन क्यों समझती हो कि वह केवल नौकरी के ही काम आती है।"

बड़ी बहन के ये शब्द सुन कर गीतिका मौन हो गई।

दीपिका ने फिर हंस कर कहा, "खैर वह तो हुआ, पर तूने मेरी आफत कर दी। औरतें प्रश्न पूछ-पूछ कर मेरी जान खा जाएँगी। हाय, बड़ी बहन कुआरी क्यों बैठी है। कहाँ तक उत्तर दूँगी।"

गीतिका मौन रही।

• • •

१३

कंचन का घर सब सखियों का मिलन-स्थल बना हुआ था। हेमा का घर शहर के एक कोने पर था। प्रीति केन्द्रीय स्थल पर रहती अवश्य थी, किन्तु

आर्थिक विषमता के कारण उस परिवार का परिवेश कुछ ऐसा था कि लड़कियाँ वहाँ इकट्ठी होने से कतराती थीं। कंचन के पिता का बड़ा बंगला तो था ही उस पर कंचन का अपना अलग कमरा और अध्ययन-कक्ष भी था। नौकर, भोजन, वाहन आदि की समस्त सुविधाएँ कंचन के यहाँ सहज ही उपलब्ध हो जाती थीं। अतः वे प्रायः वहीं इकट्ठो हुआ करतीं।

उस दिन दीपिका वहीं आई हुई थी। कंचन के माँ-बाप बहुत धनी अवश्य थे, किन्तु अर्थगर्व उन्हें छू तक नहीं सका था। दीपिका पर उनका विशेष स्नेह था। यद्यपि आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से दीपिका और उनमें कोई समानता नहीं थी। किन्तु बौद्धिक दृष्टि से दीपिका का व्यक्तित्व अधिक विकसित और उलझा हुआ था। स्वभाव से भी वह नम्र तो थी ही, सभी उससे शीघ्र प्रभावित भी हो जाते थे। कंचन बहुत संवेदनशील थी। वह शीघ्र ही दूसरों के विचारों से प्रभावित हो जाती थी। किन्तु देर तक एक ही विचारधारा पर टिक भी नहीं रह पाती थी।

कंचन ने कहा, "दीप, हेमा को भी बुला लें? वह भी तुमसे मिलने को बहुत उत्सुक थी।"

"हाँ-हाँ, जल्दी ही बुला लो, अब हम इकट्ठी ही कहाँ हो पाती हैं। वैसे तुम लोग तो फोन पर भी मिल लेती हो। मैं तो एकदम कट ही गई हूँ।"

कंचन हेमा को फोन करके आ गई और बोली, "अभी आधे घंटे में आ जायगी वह। कहती थी सुबह से मुँह तक अच्छी तरह नहीं धोया है।"

"इसका साफ मतलब यह कि वह जोरदार पढ़ाई में लगी है।" दीपिका ने कहा।

हेमा आते ही दीपिका से लिपट गई। और बोली, "भई कालेज छूटने से यह बहुत बुरा हुआ। लगता है हम युगों से नहीं मिली हैं।"

"हाँ हेमा", दीपिका ने उसका हाथ पकड़ते हुए कहा, "लड़के तो हर समय आवारागर्दी करते रहते हैं। चाहे जब और चाहे जहाँ गप्पों के अड्डे जमा लेते

हैं। पर हम लड़कियों के लिए तो सोसल लाइफ के नाम पर यही सखियों की गोष्ठियाँ थीं।''

''दीपिका, तुझसे मिलने को बहुत जी चाहता था।''

''झूठी कहीं की ! जी चाहता था, तो फिर आई क्यों नहीं मेरे घर ?''

''अरे पिछले सोमवार मैं और कंचन तुम्हारे यहाँ ही आने का प्रोग्राम बना रहीं थी, पर फिर रबीन आए। वे हमें पिक्चर ले गए। तुम तो उनके साथ जाती नहीं। नहीं तो तुम्हें भी ले लेते।''

दीपिका गंभीर हो गई। फिर बोली, ''अच्छा आजकल रबीन जी पिक्चरें दिखाते हैं तुम्हें। किन्तु उनकी यह कृपा किस पर अधिक है ? कंचन पर या तुम पर ?''

हेमा ने उत्तर दिया, ''मैं क्या जानूँ। मैं तो कंचन से ही मिलने आयी थी। इतने में नोट्स माँगने वह यहाँ आ गया और साथ ही पिक्चर का निमंत्रण भी दे डाला। निमंत्रण तो पहले स्वीकर मैंने ही किया था। पर पिक्चर में बोर हो गई।''

''रबीन व्यवहार में इतना मंजा हुआ है कि उसका निमंत्रण अस्वीकार कैसे किया जा सकता है ?'' दीपिका ने कुछ व्यंग्य-भरी मुस्कान के साथ कहा।

कंचन ने और भी बात स्पष्ट की, ''उस पिक्चर को देखने की राजेन्द्र भैया की भी बहुत इच्छा थी। उस दिन वे भी साथ गये। बड़ी अच्छी दोस्ती हो गई दोनों में।''

''यह तो और भी अच्छा हो गया।'' कह कर दीपिका मुस्करा दी।

''बहुत अच्छा।'' कह कर हेमा दुष्टतापूर्ण हँसी हँस दी।

''हिश् !'' कंचन ने उसकी ओर देखते हुए धीरे से कहा।

कुछ देर तीनों चुप रहीं। फिर बातों का दूसरा दौर आरम्भ हुआ।

कंचन के दीपिका से पूछा, ''और क्या कुछ करती रहती हो आजकल ?''

''कुछ नहीं। घर से बाहर निकलना ही नहीं होता।''

''इधर कोई आया-गया ?''

"अं……कोई नहीं। हाँ, एक दिन मैं स्वयं डॉ० द्विवेदी से मिलने गई थी। उनका ट्रांसफर हो गया है न।"

"हाँ, सुना तो मैंने भी है।" हेमा बोली।

"द्विवेदी सर के यहाँ से लौटते समय प्रशांत मिल गये थे।"

"अच्छा। क्या हाल है उनका और प्रीति का?"

"हाल क्या होगा, फकतहाल हैं बेचारे! प्रीति बीमार है।"

"क्या हो गया है उसे?" कंचन और हेमा दोनों ने एक साथ पूछा।

"क्या हुआ है, मुझे तो कुछ समझ में नहीं आया। प्रशांत कहते थे कि उसे एनिमिया हो गया है। प्रीति कहती थी, उसे टी० बी० हो गई है, वह बचेगी नहीं। मुझे तो बड़ा दु:ख हुआ उसे देख कर।"

"दु:ख का विषय तो है ही। बड़ी सीधी लड़की है बेचारी। अब भला परीक्षा में क्या बैठेगी वह?" हेमा बोली।

"हाँ, ऐसी दशा में तो मुश्किल ही समझो।" दीपिका ने कहा।

हेमा कुछ सोचती रही, फिर बोली, "कुछ दिन पूर्व रवीन और उसकी बड़ी मित्रता थी। हर समय दोनों साथ दिखाई देते थे। तुमने गत बनाई थी, उसके कुछ दिनों पहले की बात है।"

दीपिका उसकी आकृति को एकटक देख रही थी।

कंचन ने हेमा की बात अनसुनी-सी कर दीपिका से कहा, "मैंने सुना है, गीता का विवाह तय हो गया। तुमने तो बताया ही नहीं।"

"तुम्हें किसने बताया?"

"मुझे तो रवीन ने बताया था।"

दीपिका ने आश्चर्य से कहा, "किन्तु उसे कैसे मालूम हुआ? अभी तो बात ही तय हुई है।"

"लड़का रवीन का मित्र है, उसी ने उन्हें बताया।"

हेमा ने कहा, "पर यह कैसे हो गया? पहले तो तुम्हारा विवाह होना चाहिए था। गीता तो छोटी है।"

"यही तो मैं तुम्हें बता रही थी। पहले वहाँ मेरा ही सम्बन्ध हो रहा था। मैंने इन्कार कर दिया, तो पिताजी ने गीतिका का तय कर दिया।"

"यह बात तो मुझे रवीन ने नहीं बतायी।" कंचन ने कहा।

"उन्हें अपनी घटना याद करके लज्जा आ गई होगी शायद। हेमा ने कहा।

तीनों हँस दीं।

कंचन ने पूछा, "कब है शादी ? वह परीक्षा दे सकेगी या नहीं ?"

"यही तो मुझे भी दुःख है कि अब वह परीक्षा नहीं देगी। लड़के को भी स्वयं यही इच्छा है कि अब गीतिका को आगे न पढ़ाया जाय। लड़का स्वयं बी०ए० ही है।"

कंचन ने कहा, "यह तो ठीक नहीं। उसका एक वर्ष भी व्यर्थ गया। उसे तो बड़ा दुःख होगा।"

"नहीं, उसे कुछ दुःख नहीं।"

हेमा ने कंचन से कहा, "सुनाओ कंचन, तुम्हारे कवि महोदय का क्या हाल है ?"

"तूने फिर उसे 'तुम्हारा' कवि कहा। देख दीप, यह कितनी बेशर्म हो गई है।"

दीपिका और हेमा दोनों हंसने लगीं।

दीपिका बोली, "कंचन, तुम्हें तो वह मिलता रहता होगा ?"

"वैसे मैंने तो उसे कह रखा है कि वह यहाँ आ सकता है। पर वह झिझकता है। काफी दिन हुए, तब एक बार मिला था।"

कंचन के मुँह पर उसकी सहायता करने की बात आते-आते रह गई। मन-ही-मन उसके स्वाभिमानी स्वभाव की प्रशंसा के साथ दुखी भी हो उठी।

दीपिका ने कहा, "हेमेन्द्र बड़ा स्पष्टवादी और ईमानदार है। कटुभाषी है, फिर भी वह व्यक्ति मुझे पसंद है।"

इतने में राजेन्द्र ने बाहर से ही ऊँची आवाज में कहा, "कंचन, मेरी गाड़ी की चाबी नहीं मिल रही है। देखी है क्या ?"

कंचन ने उत्तर दिया, "चाबी तो मुझे नहीं मालूम।" दो क्षण रुक कर फिर बोली, "जरा भीतर आओ भैया, मैं तुम्हें अपनी एक सहेली से परिचित कराऊँ......और हेमा भी तुमसे मिलना चाहती है।"

हेमा ने कंचन को चिकोटी काट ली।

परिचय की औपचारिकता के बाद राजेन्द्र ने दीपिका से कहा, "कंचन के मुँह से आपका नाम और प्रशंसा तो सुनता रहता था, पर बात करने का सौभाग्य आज ही प्राप्त हुआ।"

"प्रशंसनीय तो कुछ नहीं।" दीपिका ने धीमे शब्दों में कहा।

"चलो, कम-से-कम दर्शनीय तो आप मानती हैं न।"

दीपिका का मुख विवर्ण हो गया। कंचन और हेमा खिलखिलाने लगीं।

हेमा एकदम राजेन्द्र के विवाह की बात पर आ गई। उसे इस प्रकार की बातों में मजा आता था। बोली, "दीपिका, कंचन कहती हैं आप विवाह से डरते हैं। जैसे तुम।"

"मैं डरती तो नहीं और डरपोक तो मुझे यह भी नहीं दीख पड़ते।"

राजेन्द्र एक कुटिल हँसी हँसता रहा। दीपिका ने फिर कहा, "क्यों मिस्टर राजेन्द्र, आप वास्तव में विवाह से घबड़ाते हैं?"

दीपिका के साहसी स्वभाव को राजेन्द्र मन-ही-मन प्रशंसा-सी करता हुआ बोला, "डरता तो नहीं। पर सत्य यह है कि मैं विवाह की आवश्यकता ही अनुभव नहीं करता, बल्कि मेरे लिए विवाह करना शायद सुखद न हो। मैं बहुत कार्यव्यस्त आदमी हूँ। मैं सोचता हूँ, अपनी भावी पत्नी पर मैं विशेष ध्यान न दे पाऊँगा। अनिवार्यतः ऐसी स्थिति में वह दुखी रहेगी। हाँ, यदि कोई ऐसी लड़की मिल सके जो मेरे देर से घर पर आने-जाने, उसके लिए सैर-सपाटे आदि के लिए पर्याप्त समय न निकलने पर भी कोई आपत्ति न करे, तो मैं विवाह करने को राजी हूँ। यह न हो कि वह मेरे जीवन-क्रम को ही बदलने का प्रयत्न करे।"

दीपिका कुछ क्षण उसके मुंह की ओर देखती रही। फिर बोली, "यदि पारस्परिक प्रेम हो, तो सब तरह से निभाया जा सकता है। जिन्दगी एक समझौता है।"

"हेमा जी, आपकी दृष्टि में है कोई ऐसी लड़की ?"

हेमा ने राजेन्द्र की ओर एक मर्मभेदी दृष्टि डाल कर कहा, "है तो एक, किन्तु मैं उसका नाम नहीं बताऊंगी। पहले उसकी अनुमति ले लूँ।"

"कंचन कुछ सोच में पड़ गई। बोली, "क्या मुझसे भी छिपाओगी हेमा ?"

"कुछ बातें बहुत गोपनीय होती हैं। उससे निर्णय लिए बिना उसका नाम प्रकट करना अनुचित होगा।" उसने बनते हुए कहा।

राजेन्द्र ने रुचि लेते हुए कहा, "जैसे दीपिकाजी ने कहा, क्या वह मुझसे प्रेम करती है कि आवश्यक ऐडजेस्टमेंट कर सके ?"

"मेरा विचार है कि वह करती है, पर अभी निश्चयपूर्वक नहीं कह सकती।"

कंचन ने हँस कर कहा, "कुछ-कुछ उस लड़की का अनुमान मैं लगा पा रही हूँ हेमा !"

हेमा मौन हो गयी।

अब कंचन से विदा लेकर जाने लगी, तो राजेन्द्र ने कहा, "रात हो गई है; यदि आपको आपत्ति न हो तो मैं घर तक छोड़ दूँ।"

"आपत्ति की क्या बात ! वैसे मेरा घर तो यहाँ से दूर नहीं; मैं पैदल जा सकती हूँ।" दीपिका ने कहा।

"बात केवल दूरी की नहीं, अँधेरा हो जाने का भी है।" कंचन बोली।

"अब लड़कियाँ इतनी कमजोर नहीं रहीं कि उनको हर बात के लिए साथी की आवश्यकता हो।"

"मिस्टर राजेन्द्र, दीपिका तो बोल्ड लड़की है, पर मुझे तो छोड़ने का कष्ट करना ही होगा आपको।" हेमा ने कहा।

कार में बैठते हुए ही हेमा ने राजेन्द्र को धन्यवाद दे दिया।

राजेन्द्र ने गाड़ी घुमाते हुए मुस्कराकर कहा, "अभी से धन्यवाद दे रही हो?"

"फिर शायद भूल जाऊँ।"

"हाँ, लम्बा रास्ता है।" दीपिका ने मुस्कराते हुए हेमा पर व्यंग्य किया।

हेमा ने उसका हाथ जोर से दबा दिया।

दीपिका को उसके घर छोड़ राजेन्द्र ने कार हेमा के घर की ओर मोड़ी। हेमा उसके साथ अगली सीट पर बैठी थी। दीपिका को छोड़ने के बाद राजेन्द्र ने ही उससे आगे आ जाने का आग्रह किया था, जिसे वह टाल न सकी। गाड़ी जब किसी मोड़ पर मुड़ती तो वे दोनों करीब आ जाते। हेमा के हृदय में एक गुद्‌गुदी-सी होने लगती। स्टियरिंग-ह्वील सँभाले हुए राजेन्द्र ने हेमा की ओर देख कर कहा, "हेमा जी, यदि वह लड़की मुझसे विवाह करने की इच्छा रखती होगी, तो वह मेरे बारे में सब कुछ जानती भी होगी?"

"कुछ तो जानती ही होगी। शेष आप मुझे बता दें, मैं उसे बता दूँगी।"

"मैं स्वतंत्र व्यवसाय कर रहा हूँ। करीब पाँच हजार मासिक आमदनी है। विवाह के बाद हनीमून यूरोप में मनाना चाहता हूँ।"

"धन्यवाद! मैं यह सूचना उस तक पहुँचा दूँगी।"

"मेरी शक्ल-सूरत उसे पसंद है न? देखा तो होगा उसने मुझे?"

"देखा तो है शायद। फिर भी अपना एक चित्र दे दीजिए न उसके लिए।"

राजेन्द्र ने हँस कर कहा, "मुझे भी तो उसका चित्र ला दीजिए।"

"चित्र तो वह नहीं देगी। एक माह ठहरिए, मैं उसे आपसे मिला ही दूँगी। परीक्षा हो लेने दीजिए।"

●●●

◆ १४ ◆

परीक्षा हो गई। गीतिका और प्रीति दोनों ही परीक्षा-हाल में दिखाई नहीं दीं, तो प्रत्येक के मुंह पर एक ही प्रश्न रहता—ये परीक्षा में क्यों नहीं बैठीं ?

ये लड़कियाँ तो सदा ही कॉलेज में टॉप किया करती थीं। इनके परीक्षा में न बैठने से सभी छात्र-छात्राओं तथा प्रोफेसरों को भी बहुत खेद और आश्चर्य था। कुछ तो इनसे मिलने घर पर भी पहुँचे, पर निराशा ही हाथ लगी। हेमेन्द्र ने तो हमारे समाज, रीति-रिवाजों और पिछड़ी हुई विचारधारा पर अच्छा-खासा लेक्चर ही झाड़ दिया। किसी ने कहा, किसी ने सुना, पर कोई कुछ न कर सका।

प्रीति की बीमारी की सूचना से सभी को बड़ा दुःख था। परीक्षा समाप्त होते ही कंचन दीपिका को लेकर प्रीति के घर पहुँची। उन्हें प्रीति घर में न दिखी। नौकरानी मुक्ता को खिला रही थी और प्रशांत बैठा एक पत्र लिख रहा था। वह कंचन और हेमा को देख उठ खड़ा हुआ। स्वागत के पश्चात् उसने बताया कि प्रीति मौसी के यहाँ चली गई है।

"उसकी तबियत कैसी है ?" दीपिका ने पूछा।

"तबियत के कारण ही तो उसे छोड़ आया हूँ। यहाँ न तो उसकी देखभाल हो रही थी और न अकेले में उसका मन ही लगता था। बहुत उदास रहती थी।"

कंचन ने कहा, "बड़ा दुःख है कि वह परीक्षा भी नहीं दे सकी।"

प्रशांत का सदा प्रसन्न और शांत रहने वाला मुख पीड़ा और अवसाद से भर गया था। वह टूटे-फूटे वाक्य बोल रहा था।

"हाँ, दुःख तो बहुत है मुझे भी······पर क्या करें······मुक्ता······यों तो पहले भी इसके लिए नौकरानी थी······पर अपने सम्बन्धी की बात और होती है।···अब मुक्ता को रखना मुश्किल हो रहा है।"

दीपिका ने मुक्ता को बुलाकर गोद में बिठा लिया और बच्चों की भाषा में बातें करने लगी। प्यार से उसके बालों को सहलाने लगी।

कंचन ने कहा, "आप प्रीति को जल्दी बुला लें। हम उसकी देखभाल कर लेंगी। सहेलियाँ क्या इतना भी नहीं कर सकती?"

"जरा ठीक होते ही बुलाने का प्रयत्न करूँगा।" प्रशांत के शब्द अत्यन्त पीड़ा में डूबे हुए थे।

इतने में हेमेन्द्र भी वहाँ पहुँच गया। प्रशांत से उसकी अच्छी मित्रता थी। प्रशांत की परेशानी देख आज उसने समाजवाद, समन्वयवाद किसी पर भी भाषण नहीं दिया। अन्यथा दो-चार व्यक्तियों की उपस्थिति में उसका चुप रहना एक आश्चर्य ही तो था। प्रीति और प्रशांत के बारे में ही वह बातें करता रहा। लौटते समय कंचन ने उसे अपने साथ ले लिया।

दीपिका को उसके यहाँ छोड़ कंचन हेमेन्द्र को अपने घर ले गयी। हेमेन्द्र को धनी वर्ग से बहुत घृणा थी। घृणा न हो, किन्तु आक्रोश और रोष तो अवश्य था। कंचन का वैभव देख कर उसका आक्रोश तीव्र तो हुआ, पर उसकी सहायता करने के लिए कंचन का मृदु आग्रह पानी के परदे-सा मन पर ढक आया। उसने सोचा—कटु वचनों द्वारा कंचन का हृदय नहीं दुखाना चाहिए।

कंचन ने उसे विचारमग्न खड़े देख कर कहा, "बैठिए हेमेन्द्र जी, क्या सोचने लगे?"

"सोचना क्या? यही बात मन में उठी कि आप उन लड़कियों जैसी नहीं, जैसी अक्सर धनी घरों में पायी जाती हैं।"

"कैसी?"

"धनी वर्ग की लड़कियाँ हृदय से इतना उदार और स्वभाव से इतनी मृदुल कदाचित ही मिलती हैं। मैंने तो केवल आपको ही देखा है ऐसा। मेरे मन में समायी धनिक वर्ग की घृणा को आपने हद तक कम करने में सहायता की है। मैं आपका ऋणी रहूँगा इस बात के लिए।"

"ऋण कैसा ?"

"भावनाओं के भी तो ऋण चढ़ते हैं कंचन जी ! फिर आपने तो अर्थ की भी बात की थी।"

"वह बात ही तो रही, उससे आपको कुछ लाभ तो न हो सका।"

"कंचन जी, अनेक व्यक्तियों से मेरी जान-पहचान है। उनमें से कोई मेरी आर्थिक स्थिति से भलीभाँति परिचित भी हैं। सहायता की बात ही छोड़िए, किसी ने आज तक शाब्दिक सहानुभूति तक न जतायी।" उसने थोड़ा रुक कर कहा, "आपको मैं जीवन भर नहीं भूल पाऊँगा।"

"मैं तो एक बहुत ही मामूली लड़की हूँ। मुझमें न भूलने लायक कुछ भी नहीं। आप व्यर्थ ही मेरी प्रशंसा किये जा रहे हैं। महान् तो आप हैं। आपके विचार, आपके आदर्श, गरीबों के प्रति आपकी करुणा, सहानुभूति, आपका सादगीभरा जीवन······किस-किस को सराहूँ।" कहते-कहते कंचन का स्वर आर्द्र हो आया। बोली, "मेरा और मेरे वर्ग का जीवन कितना खोखला है, कितना निरर्थक है यह···।"

हेमेन्द्र को तुरन्त कुछ कहने का उत्साह हुआ। पर बड़ी कठिनाई से वह अपने को रोक पाया।

कंचन ने फिर कहा, "हेमेन्द्र जी···मैं···हम लोगों का जीवन यदि एक हो जाय···क्या आप मुझे अपनाकर चकाचौंध भरी जिन्दगी से उबार लेंगे ?···मैं···मैं।" वह आगे कुछ बोल न पायी, उसका स्वर लड़खड़ा गया। अनजाने ही उसने हेमेन्द्र का हाथ थाम लिया।

"हेमेन्द्र, यहाँ सब कुछ 'फार्मल' लगता है।"

हेमेन्द्र सहसा उसके प्रस्ताव से विचलित-सा हो गया। उसके मस्तक पर पसीने की बूंदें झलकने लगीं। उसने कंचन का हाथ पकड़ कर उठाते हुए कहा, "चलो कंचन, बाहर बगीचे में बैठेंगे। चलो! चलो!!"

कंचन उसके साथ चल दी। वे बगीचे में हरी घास पर बैठ गये। हेमेन्द्र कंचन के मुख की ओर देख रहा था। उससे दृष्टि मिलते ही कंचन ने अपनी आँखों को झुका लिया। वह अपना दुपट्टा उँगलियों में लेकर मोड़ने लगी। हेमेन्द्र ने थरथराते हुए स्वर में कहा, "कंचन, तुमने क्या कहा अभी-अभी? बोलो कंचन!"

कंचन ने उसकी ओर देख कर पुनः दृष्टि नीची कर ली।

"क्या तुम वास्तव में...?" हेमेन्द्र अधूरा वाक्य ही कह पाया। इस बार कंचन ने धीमे कंपित स्वर में उत्तर दिया, "हाँ, हेमेन्द्र मैं तुमसे प्रेम करती हूँ। ...क्या तुम मुझसे विवाह नहीं कर सकते?"

हेमेन्द्र अब तक स्थिर चित्त हो गया था। उसने कहा, "कंचन, मैं धन्य हूँ कि तुम्हारा प्रेम पा सका। प्रेम कहीं से भी मिले, कभी भी मिले, वह सदा शिरोधार्य करने की वस्तु है। प्रेम एक स्वच्छ-स्वच्छन्द बहती हुई धारा के समान है। जब हम उसे निश्चित दायरे में बांधने का प्रयत्न करने लगते हैं तो कठिनाइयाँ निश्चित समझो...कंचन जीवन, केवल भावनाओं पर ही नहीं टिका रहता। कभी-कभी यथार्थ भावनाओं के बहुत आगे बढ़ जाता है। हमारे बीच भी यही बात है। मुझे स्थिति पर अधिक यथार्थवादी दृष्टि डालनी होगी। हमारा मिलन कैसे संभव है? तुम इतने ऐश्वर्य और समृद्धि में पली हो। मेरे दारिद्रय से तुम परिचित हो ही। मेरा जीवन संघर्ष और कठिनाइयों का समूह है। मैं तुम्हें कुछ भी सुख-सुविधा नहीं दे सकता कंचन! तुम सुकुमार हो, कोमल हो, मेरे यथार्थ की धरती कठोर है।" भाषण करते-करते उसके अन्दर के साम्यवाद ने जोर मारा। उसने आगे कहा, "और फिर मुझे वे सुख-सुविधाएँ पसंद भी नहीं जिनकी तुम अभ्यस्त हो। मैं उनसे घृणा करता हूँ। वे अन्याय की प्रतीक हैं।

शोषण और विषमता की प्रतीक हैं···तुम्हारा पथ दूसरा है। ···किन्तु मैं तुम्हारे प्रेम के लिए आभारी हूँ, कंचन ! हृदय से आभारी रहूँगा।''

हेमेन्द्र की बातों से कंचन की आँखें भर आयीं। उसके मन में हेमेन्द्र के प्रति अधिक श्रद्धा जाग उठी। वह आर्द्र गले से बोली, ''हेमेन्द्र, तुम मुझे जिस स्थिति में भी रखोगे, रह लूँगी। फूलों के बीच पली हूँ किन्तु काँटों से कतराती नहीं। हेमेन्द्र···!''

वह रुकी तो हेमेन्द्र ने कहा, ''सामाजिक पक्ष भी तो है। तुम्हारे माता-पिता को क्या यह सहन होगा ? वे क्या तुम्हें एक निर्धन वर्ग के घर में शादी करने की अनुमति दे देंगे ?''

''यदि तुम मुझे स्वीकार कर लोगे, तो उन्हें तो मैं मना लूँगी। मैं वयस्क हूँ। आवश्यकता पड़ने पर विरोध भी कर सकती हूँ।''

''तुम्हारा संकल्प दृढ़ है कंचन ?''

''हाँ हेमेन्द्र !'' कंचन ने दृढ़ स्वर से कहा।

हेमेन्द्र ने उसके दोनों हाथ थाम लिये। दो-एक पल वाद कंचन ने हाथ छुड़ा कर कहा, ''चलो हेमेन्द्र, घर में चलें।'' उसे ध्यान आया कि वे बगीचे में वैठे हैं।

हेमेन्द्र दूसरे दिन आने का वादा कर विदा हो गया।

● ● ●

१५

दीपिका के सम्मुख अब वास्तविक प्रश्न उठ खड़ा हुआ था। परीक्षा से निपट कर अब वह बिल्कुल खाली थी। सखी-सहेलियों के यहाँ आना-जाना कम ही होता था। पास-पड़ोस की स्त्रियाँ मिलती, तो ऐसी-ऐसी बातें करतीं कि दीपिका को उनके पास बैठना दूभर हो जाता था। वे सब अपना निंदापुराण खोल कर एक-दूसरी की, बच्चों की और उनके परिवारों की बुराइयाँ करती। महफिल में अनुपस्थित रहने वाली ही उनकी बातों का शिकार बनती। वृद्धाएँ अपनी बहुओं के दोष गिना जातीं, नयी शिक्षा, नये फैशन और नये समाज को वे पानी पी-पी कर कोसतीं। उनके अनुसार यह असली कलयुग का रूप था। विवाहित तरुणियाँ, अपनी सास-जिठानियों की गाथा में साँस लेना भूल जातीं।

उधर गीतिका का विवाह निकट आ रहा था। घर में सम्बन्धियों और परिचितों की भीड़ बढ़ती जा रही थी। दीपिका सदा ही उनकी आलोचना का शिकार बनती। गांव की स्त्रियों के लिए यह बात चाँद पर चढ़ाई से कम आश्चर्यजनक नहीं थी कि छोटी बहन की शादी बड़ी से पहले हो रही है। सभी सम्बन्धी उससे तरह-तरह के प्रश्न करके उसका जी दुखाने का अवसर न चूकते। कभी कोई उसकी शिक्षा की सराहना करता, तो कभी कोई उसके साहस की प्रशंसा करता। कोई उसके आचरण को सुन कर दाँतों-तले उंगली दबाता। दबे-छुपे सब उसे मूर्ख ही मान रहे थे कि मोहनलाल-जैसे धनी और सुन्दर लड़के को उसने ठुकरा दिया। प्रशंसा करने वालों की भावनाओं को दीपिका अच्छी तरह जानती थी। वह जानती थी कि यह सराहना और प्रशंसा केवल व्यंग्य है। अतः वह उनकी संगति से बचने का प्रयत्न सदा करती। उनके सामने पड़ने से भी कतराती। वह सम्बन्धियों की बातें सुनते-सुनते बेहद तंग आ गई थी। उसके कारण उसके माता-पिता को भी कई बार लज्जित होना

पड़ता था। उसने खाली बैठना उचित न समझा और नौकरी की खोज में लग गयी। जिससे भी वह नौकरी के विषय में कहती, वही उसे किसी न किसी पाठशाला में नौकरी दिला देने की बात कहता। हर कोई तो केवल अध्यापिका बन जाने की सलाह देता। स्त्रियों के लिए यही एक सम्माननीय और सुरक्षित व्यवसाय समझा जाता था। कई प्राइवेट स्कूलों के संचालकों से वह मुलाकात कर आयी। वे इतना कम वेतन बतलाते थे कि दीपिका को लगता, इससे तो दो ट्यूशनें कर लेना अधिक अच्छा है। शासकीय नौकरी पाना इतना आसान नहीं और अन्य जगह वेतन के नाम पर केवल शोषण था।

दीपिका ने एम्पलाएमेंट एक्सचेंज में अपना नाम लिखवा दिया और अपना अधिकाधिक समय वह अखबारों में 'रिक्त स्थान है' कालम पढ़ने में लगाने लगी। इस समय उसके जीवन का मूलमंत्र 'वान्टेड' शब्द बन गया था।

उसे उस समय अत्यन्त निराशा हाथ लगी जब इतना अधिक घूमने पर भी उसे कोई नौकरी न मिल सकी। वह सोचने लगी—"बौद्धिक, मानसिक और क्रियात्मक स्वातन्त्र्य के जो स्वप्न वह देखती थी, क्या वे सब धराशायी हो जायँगे? आगे बढ़ने के लिए आर्थिक शक्ति अत्यन्त आवश्यक है। उसके बिना वह अपना पृथक् व्यक्तित्व क्रम से कहाँ रख सकती है?

एक दिन उसने एक विज्ञापन देखा। एक डिपार्टमेण्टल स्टोर में कुछ सेल्स-गर्ल्स की आवश्यकता थी। वेतन आकर्षक था। योग्यता में धाराप्रवाह अंग्रेजी और हिन्दी बोल सकने के अतिरिक्त प्रभावशाली व्यक्तित्व आवश्यक था। उसने डरते-डरते आवेदनपत्र भेज ही दिया। हालाँकि यह जानती थी कि इस कार्य को कोई पसंद नहीं करेगा। जिस कार्य में सदा पुरुषों के सम्मुख रहना पड़े, उनसे आकर्षक लहजे में बातें करनी पड़े, उसे सब निन्दा और घृणा की दृष्टि से ही देखेंगे। स्वयं उसने उसमें कोई बुराई नहीं देखी और निश्चय किया। यहाँ सुबह और शाम को उसे जाना था। दोपहर में दो घंटे की छुट्टी मिलनी थी।

जब वह इन्टरव्यू के लिए गयी उस समय उसके मन में अनेक तरह के वैचारिक उथल-पुथल तीव्ररूप से गतिमान हो रहे थे। वह आगे उठने वाले घोर

अपवाद, निन्दा और सामाजिक बहिष्कार को सहन कर पायगी या नहीं ? माता-पिता भी उसके इस पग को कभी स्वीकार और क्षमा न करेंगे । सबसे बड़ी कठिनाई यह थी कि उसे सदा सबके सामने रहना पड़ेगा । सगे-सम्बन्धी, मित्र, परिचित, गली-मुहल्ले के लोग सभी उसे वहाँ देखेंगे । वह काउण्टर पर खड़ी होकर ग्राहकों के हाथ प्रसन्नमुद्रा में सामान बेचे, उनसे प्रसन्नमुद्रा में बातें करे, पैसे वसूल करे—यह उन्हें असह्य होगा । उनकी दृष्टि में तो यह घोर अपराध होगा। हाँ, यदि वह सामान्य जन की दृष्टि से छिप कर रहे तो कोई आपत्ति नहीं होगी । छिप कर तो कोई दुराचार भी कर ले, तो कोई बात नहीं । दुकान का काउन्टर, सेल्स गर्ल, ग्राहक और उससे मित्रतापूर्ण वार्त्तालाप कैसे सहन करेंगे लोग ?

वह साहस करके इण्टरव्यू में तो चली ही गयी। उसने सोचा, पक्का फैसला चुनाव होने के बाद किया जायेगा । इण्टरव्यू में आने वाली लड़कियों में अधिकांश क्रिश्चियन और दक्षिण भारतीय थीं। कुछ लड़कियाँ ऐंग्लो इण्डियन भी थीं । छः लड़कियों का चुनाव किया गया, जिनमें दीपिका भी एक थी । नियुक्तिपत्र पर हस्ताक्षर करते समय एक बार वह फिर अनिश्चय में पड़ गयी । पर काफी सोच-विचार के बाद उसने हस्ताक्षर कर ही दिये । उसने अधिकारियों से गीतिका के विवाह तक की अवधि माँग ली, जो उसे मिल भी गयी । यदि गीतिका की शादी के समय ही वह ऐसा पग उठाती, तो उसका परिणाम सुखद तो हो ही नहीं सकता, बल्कि भयानकता भी कहाँ तक पहुँच जाती, कह नहीं सकती । गीतिका के ससुराल वाले वैसे ही रूढ़िवादी विचारधारा के हैं। इस समय घर में मेहमानों की भीड़ भी इतनी है ।

वह चाहती थी कि नौकरी पर उपस्थित होने से पहले वह किसी से परामर्श ले ले । पर किससे ? रिश्तेदार कोई उसके पक्ष में बोलने का नहीं । डॉ० द्विवेदी वहाँ से चले गये हैं । आज उसे हृदय से अनुभव हुआ कि शिक्षक, गुरु के साथ-साथ सच्चा अभिभावक और मार्गदर्शक भी तो होता है । एक बार उसका मन हुआ कि वह प्रशांत से अपनी दुविधा कह कर मत मांगे, पर प्रशांत स्वयं उन दिनों

चिन्ताग्रस्त था। अन्त में दृढ़निश्चय कर वह उपस्थित होने के लिए तैयार हो गयी।

माता-पिता को बिना बतलाये ही वह उस दिन स्टोर गयी थी और काम समझ कर सँभाल लिया। दिन में लंच की छुट्टी में आकर ही वह उन्हें इसकी सूचना देना चाहती थी।

घर में प्रवेश करते ही माँ ने पूछा, "कहाँ गयी थी वेटी, बड़ी देर में आयी हो?"

उसने शांत और स्थिर चित्त से कहा, "मैंने आज से नौकरी कर ली है माँ!"

सुन कर माँ सन्न रह गई। दीपिका का ऐसा एकदम नौकरी का डिक्लेरेशन माँ को तिलमिला गया। कुछ देर तक उनके मुँह से कोई शब्द नहीं छूटा।

दीपिका ही आगे बोली, "माँ, एक डिपार्टमेंटल स्टोर की नौकरी है। रोज सुबह और शाम जाना होगा। दोपहर में दो घण्टे की छुट्टी रहा करेगी।"

माँ सकते में आकर बैठी थीं। दीपिका के विवाह न करने के कारण पति-पत्नी पहले ही बदनाम हो चुके थे। जिस पर नौकरी, वह भी सेल्स गर्ल की! सामाजिक प्रतिष्ठा पर यह बड़ा भारी आघात था। फिर भी माँ ने बड़े धैर्य से कहा, "बेटी, नौकरी ही करनी थी तो किसी पाठशाला में अध्यापिका होने की कोशिश की होती।"

"माँ, इस नौकरी में तनख्वाह कितनी अच्छी है!"

दीपिका के इस स्वच्छन्द विचार और आचरण से माँ का हृदय जैसे टूक-टूक हो गया। बोली, "क्या हमारे घर में खाने-पहनने की कमी थी या तुम्हें पैसे के लिए कोई भारी कष्ट था जो तुमने ऐसा किया? तुम्हारे पिताजी की आय क्या हम तीन प्राणियों के लिए कम है?"

दीपिका जानती थी कि वह कमी उन्हें समझा न पायगी। फिर भी उसने उत्तर दिया, "नहीं माँ, ऐसा कुछ नहीं। मुझे तो यहाँ सब सुख सहज ही

उपलब्ध थे। किन्तु, यदि मैं अपनी शिक्षा का लाभ उठाऊँ तो क्यां हानि है ? घर में खाली बैठने से ही क्या फायदा होता।''

आर्थिक और नैतिक स्वातन्त्र्य और इन दोनों की पारस्परिक निर्भरता आदि बातें माँ को समझाना सर्वथा व्यर्थ होता।

माँ की आँखों से टप-टप आँसू गिरने लगे। कोमल स्वर में पूछा, "तुम क्यों हमारी नाक काटने पर तुली हुई हो ?"

दीपिका ने माँ की आंखों में आँखें डाल कर कहा, "माँ, यदि आज तुम्हारा कोई लड़का होता और वह पहले दिन नौकरी पर से आता, तब भी क्या तुम इसी तरह आँसू बहातीं ?"

दीपिका की बात से माँ को राहत तो नहीं मिली, बल्कि इस बात से गहरा दुःख हो आया कि उनका कोई लड़का नहीं है।

दीपिका ने फिर मृदु स्वर में कहा, "माँ, मैं तुम्हें बदनाम नहीं करना चाहती। मैंने नौकरी इसलिए नहीं की कि घर में खर्चे की कोई तंगी थी।...वास्तव में मैं जीवन में प्रगति करना चाहती हूँ। सामान्य घरेलू जीवन से मुझे कोई घृणा नहीं। किन्तु उसी तक मैं सीमित नहीं रहना चाहती। मैं बाह्य जगत को देखना और उसके अनुभव प्राप्त करना चाहती हूँ। अपना विकास करना चाहती हूँ...हर लड़की से तुम यह अपेक्षा क्यों रखती हो कि वह अपना अस्तित्व माता-पिता की इच्छा और समाज को पूरी तरह समर्पित कर दें !''

माँ रोष, क्षोभ, अपमान और विवशता की मिली-जुली भावनाओं के आवेग से रुद्ध हो गईं। बैठी-बैठी आंसू बहाती रहीं और फिर उठ कर चली गईं।

कुछ देर बाद माँ ने आकर दीपिका से खाने के लिए कहा। माँ की दशा देखकर दीपिका बहुत क्षुब्ध हो रही थी। उसका निश्चय दृढ़ था। फिर भी कभी-कभी उसके हृदय में ऊहापोह उठता था। वह बिना कुछ खाये-पीये ही चल दी। माँ ने भी आग्रह नहीं किया।

शाम को जब वह लौटी तो उसका शरीर क्लान्त और खिन्न था। वह चुपचाप पलंग पर पड़ गई। माँ चुपचाप भोजन लाकर रख गई तो उसने उठकर थोड़ा-सा खा लिया।

जब पिता को यह बात मालूम हुई तो उन्होंने उसकी टीका-टिप्पणी किये बिना उससे प्रश्न किया, "दीप बेटी, यदि तुम्हें नौकरी ही करनी है, तो तुम्हें किसी भी स्कूल में लगवा सकता हूँ। पर······यह स्टोर की नौकरी······तो ठीक नहीं।"

दीपिका धीमे स्वर में बताया कि यह स्थान भी बिलकुल सुरक्षित और संदेह-रहित है। उसके साथ अन्य छः लड़कियाँ और भी हैं। बड़ा स्टोर होने के कारण वहाँ अधिकांश अच्छे ही ग्राहक आते हैं और फिर कुछ दिन इस नौकरी का अनुभव तो हो ले। मन नहीं टिकेगा तो छोड़ देगी। वेतन की बात वह अपनी जबान पर नहीं लायी। सोचा कहीं पिता इससे अपमान अनुभव करें।

पिता चुपचाप लौट गये।

●●●

१६

उस रात हेमेन्द्र देर तक न सो सका। उसके मन में एक प्रकार का संघर्ष उबल रहा था। उसने निर्धनता और उपेक्षा के अतिरिक्त जीवन में कुछ न देखा था। वह साहसी और उद्योगशील तो था, पर पग-पग पर कठिनाइयाँ और असफलताएं ही सामने आती थीं। भविष्य अब भी उत्साहप्रद न लगता था। इतना ही सोचता था कि एम० ए० के बाद कहीं-न-कहीं स्थायी और सम्मान-

जनक कार्य अवश्य मिल जायगा। छात्रावस्था में उसने अनेक आदर्श, अनेक सिद्धान्त संजोए थे। सोचता था, राजनीति के क्षेत्र में आकर अपना तन-मन जनता की सेवा में लगा देगा। देश में ऐसी क्रांति ले आयेगा कि भावी पीढ़ियों को वे कष्ट न उठाने पड़ें जो उसने स्वयं झेले हैं या जिन्हें वह स्वयं झेल रहा है। किन्तु अब उसे स्पष्ट अनुभव होता था कि जिस बात को हम एक क्षण में सोच लेते हैं, उसे युगों में भी करना आसान नहीं। कई बातें तो शायद कई-कई जन्मों में भी पूरी न हों और कई भावनाएँ मात्र भावनाएँ ही रह जाती हैं। रोटी के चक्कर में सारे इरादे, सिद्धान्त और आदर्श मिटते चले गये। यों अकेले व्यक्ति की समस्याएँ तो सीमित की जा सकती हैं किन्तु बूढ़े माता-पिता, विवाह योग्य दो बहनें, बहुत से छोटे-छोटे भाई-बहन और परित्यक्ता बुआ। इतने लोग, सभी उसका मुँह जोहते थे। अब देश की तो बात दूर, कभी गली-मुहल्ले की बात भी वह नहीं सोच पाता था। उन सबके भार से वह बार-बार झुंझला उठता था। पर उन सबका बन्धन तोड़कर चले जाने की क्षमता उसमें न थी। उनके लिए रोटी-कपड़े का प्रबन्ध करते-करते उसके अपने शरीर की एक-एक हड्डी निकल आयी थी। उसका मुख कान्तिहीन हो गया था। उन सब की चिन्ताओं में घुलते-घुलते वह अपनी आवश्यकताएँ भूल गया था। प्रेम और सौन्दर्य, मित्रता और सौहार्द्र का जीवन में क्या महत्व है यह समझने का कभी उसे अवसर ही प्राप्त न हुआ था।

कंचन से उसे जीवन में प्रथम बार प्रेम प्राप्त हुआ था। कंचन तो बहुत पहले से उसकी ओर आकर्षित थी, किन्तु जीवन की कटुताओं और विषमताओं में फँसा वह कभी उस ओर देख न पाया। जिस दिन कंचन ने उसके जीवन की सफलता की कामना करते हुए धन की सहायता की बात कही, उसी दिन से इसका अनुभव हुआ। कई बार उसे यह बात टीस भी जाती कि कंचन का आग्रह उसने व्यर्थ ही त्याग दिया। अन्यथा वह परीक्षा में सचमुच अच्छे अंक प्राप्त कर लेता।……आज तो कंचन उस पर बिखरी जा रही थी। रेगिस्तान में स्वतः फूट पड़े किसी क्षीण झरने के समान कल का कंचन का व्यवहार उसे

भावनाओं में दुःख दे-दे जाता था। कंचन की प्रवृत्ति का तो उसे आभास हो आया था, किन्तु वह विवाह का ही प्रस्ताव कर देगी, इसकी तो उसने स्वप्न में भी कल्पना न की, अथवा उससे कभी स्पष्ट प्रणय-निवेदन ही कर बैठेगी। वह सोचता—कंचन लाख अच्छी लड़की हो, किन्तु है तो बुर्जुआ वर्ग के संस्कारों की ही। अतः कंचन के प्रस्ताव से एकबारगी वह जड़ हो गया।

इस समय बिस्तर पर लेटे-लेटे उसके हृदय में पुलक-सी उठ रही थी। वह भविष्य के सम्बन्ध में सुखद और मनोहर कल्पनाओं के जाल बुन रहा था। कंचन के सम्बन्धी कैसे भी क्यों न हों, पर जब कंचन से उसका सम्बन्ध हो जायगा तो वे उसकी उपेक्षा नहीं करेंगे। वे बड़े आदमी हैं, उसे अवश्य ही कोई ऊँचा पद दिला देंगे। उसके लिए नहीं, तो अपनी पुत्री के लिए वे ऐसा अवश्य करेंगे।······शायद जीवन भर की दरिद्रता धुल जाये······भाई-बहन भी उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे······और कंचन, यह उतनी प्रतिभावान अथवा प्रखर बुद्धि की तो नहीं लगती। पर उसकी संवेदनाएं कितनी विकसित हैं। यहीं जीवन में समन्वय बैठा देंगी। अपने माँ-बाप जैसी पूँजीवादी धारणाएं उसमें कम हैं। तभी तो वह उससे प्रेम करती है। निर्धनों के प्रति उसके हृदय में करुणा और सहानुभूति है। अपनी समृद्धि का उसे तनिक भी गर्व नहीं है। कहती है कि वह उसके साथ कठिन से कठिन परिस्थिति में रह सकती है। उसका सामीप्य पाकर वह कठिनाइयों को सहर्ष झेल सकती है। किन्तु······क्या यह उसके प्रति अन्याय न होगा? वह अपने समस्त सुख-वैभव का बलिदान कर रही है, केवल उसके संबल पर। जैसी भी हो, वह उसके जीवन को सुखी बनायेगा। उसे कभी कष्ट और अभाव न होने देगा। वह कितनी सुन्दर है! कितनी सुकुमार!! कल बगीचे में बैठी कंचन की छवि उसके नेत्रों में अंकित हो गई थी। हाँ, उसका रूप मोहक है। आसक्तिजनक है। उसका स्वर्णिम चम्पई रंग, स्निग्ध कोमल त्वचा, भरी-भरी देह, लम्बे-लम्बे लहराते केशों की ढीली-ढीली वेणी, उसका वह रूप उसकी आँखों में बसा है, सदा बसा रहेगा।

सुबह जब वह उठा, तो उसके मन में उल्लास और उत्साह भरा था। स्वयं में वह एक नयी ताजगी अनुभव कर रहा था। आज विश्व का कण-कण उसे प्यारा लग उठा था। अपने दैनिक कार्यों को भूलकर वह घूमने निकल गया और प्रकृति के सौंदर्य से आनन्दित होता रहा। सूर्योदय के पहले छायी आकाश की लालिमा उसने आज ध्यान से देखी। नवपुष्पित पुष्प, हरी-हरी दूर्वा आज उसमें अनन्त उल्लास भरे दे रही थी। प्रकृति के इस चितेरे को आज पहली बार उसने मन-ही-मन नमन किया। वैसी उसे प्रकृति से कभी लगाव न रहा था। कॉलेज में जब भी प्रोफेसर पंत का प्रकृति-चित्रण पढ़ाते, तो वह जैसे क्लास में उपस्थित होते हुए भी वहाँ से अनुपस्थित रहता। किन्तु आज उसने प्रकृति में एक नई आभा का दर्शन किये। घर लौटकर उसने आज बहुत दिनों वाद कविता लिखी। आज पहली बार उसकी कुण्ठा और आक्रोश-मरी न होकर नारी-प्रेम और प्रकृति के सौंदर्य से भरी थी। दस बजते-बजते वह कंचन के घर चल दिया, यों कहिए कि उसने दस भी जैसे-तैसे बजाये। वहाँ पहुँचा तो नौकर से मालूम हुआ, कंचन हेमा के यहाँ गई है। व्याकुल-सा होकर वह व्यर्थ ही इधर-उधर घूमता रहा।

डेढ़-दो घंटे बाद वह फिर उसके घर पहुँच गया। नौकर ने पहले वाले उत्तर को दोहराया। कंचन अभी लौटी नहीं थी।

लगभग तीन बजे वह पुनः कंचन के घर गया। मालूम हुआ, दोनों यहाँ आयी थीं। रवीन बाबू उन्हें सिनेमा ले गये हैं। उसने यों ही पूछ लिया, "और कोई भी साथ गया है?" उसे बड़ी झुंझलाहट हुई कंचन पर। इतना नहीं जानती थी कि हेमेन्द्र आयेगा? सुबह से तीन चक्कर लगा चुका हूँ।······गई भी है तो रवीन के साथ······। यह पुरानी आदतें हैं। जीवन-क्रम शनैः-शनैः ही बदलेंगे।

अगले दिन सुबह दस बजे वह फिर कंचन की कोठी के द्वार पर खड़ा था। नौकर ने उसे कंचन के निजी कमरे में विठा दिया और प्रतीक्षा करने को कहा। वह कंचन के कमरे की एक-एक वस्तुओं को बड़े ध्यान से देखने लगा।

एक कोने में नक्काशीदार कश्मीरी टेबल पर हाथीदाँत की फ्रेम में मढ़ा कंचन का चित्र रखा था। वह उसमें मंद-मंद मुस्करा रही थी। हेमेन्द्र का जी हुआ, फोटो को उठा कर होठों से लगा ले। उसने अपने को संयत किया और कमरे की अन्य चीजें देखने में ध्यान बँटाने लगा। उसने अनुभव किया कि वह सशरीर स्वर्ग में आ गया है। खूबसूरत गुलदस्तों में खिले प्लास्टिक के फूल बसंत की प्रतीक्षा को तोड़ रहे थे। बड़ा भारी पलंग और उस पर गोल जाली वाली मसहरी झूल रही थी। सोती हुई कंचन का रूप कितना मादक होता होगा। उसने अपनी कल्पना में उसके चित्र को देखना आरम्भ कर दिया।

तभी कंचन ने गम्भीर मुखमुद्रा में कमरे में प्रवेश किया। यदि प्रवेश-द्वार सामने ही न होता तो शायद न जाने कितनी देर उसे कंचन के आने का पता ही न चलता।

हेमेन्द्र उसे देख उठ खड़ा हुआ।

कंचन ने कहा, "बैठिए आप।"

हेमेन्द्र उसकी मुखाकृति का निरीक्षण करते हुए बोला, "कंचन, क्या तबियत ठीक नहीं है ? तुम्हारा चेहरा उतरा हुआ क्यों है ?"

कंचन ने दो-तीन कदम पीछे हटते हुए कहा, "मिस्टर हेमेन्द्र, मैंने आपको जो कुछ कहा था, भूल जाइए।"

हेमेन्द्र स्तम्भित हो गया। भर्राये गले से बोला, "कंचन, क्या तुम मजाक कर रही हो ?"

"खेद है कि मिस्टर हेमेन्द्र, यह मजाक नहीं, सत्य है। यह सब अब नहीं हो सकता।" कंचन ने उत्तर दिया।

हेमेन्द्र का सिर भन्ना गया। उसे लगा हजारों हथौड़ों की चोटें उसके मस्तिष्क और हृदय पर एक साथ हो रही हों। उन प्रहारों की पीड़ा असह्य हो रही थी। वह कुछ भी सोच सकने में अपने को असमर्थ पा रहा था। उसने लगभग अर्धचेतन-सी अवस्था में कहा, "तुम्हें क्या हो गया है कंचन ? तुमने उस दिन मजाक किया था अथवा आज मजाक कर रही हो ?"

कंचन ने उत्तर दिया, "नहीं हेमेन्द्र, न तो उस दिन मजाक किया था, न आज कर रही हूँ। किन्तु......किन्तु मेरा विवाह रवीन से पक्का हो गया है। हम दोनों के परिवार वालों ने इसे सहर्ष स्वीकार कर लिया है। मैं रवीन को कल शाम पक्का वचन दे चुकी हूँ। मुझे क्षमा करेंगे।"

हेमेन्द्र का कविहृदय अनदेखे भीतर-ही-भीतर जैसे कई टुकड़ों में बंट गया। कंचन उसके कुछ बोलने से पहले ही कमरे से बाहर चल दी। हेमेन्द्र को आज और अभी जिस ठोकर की अनुभूति हुई थी, उससे वह तिलमिला उठा था। किन्तु, यह ऐसी ठेस थी, जिसे दूसरे पर प्रकट करने का कोई औचित्य नहीं था। अतः, कुछ ही मिनटों बाद वह उठ कर चल दिया।

●●●

१७

कंचन हेमेन्द्र से विवाह का प्रस्ताव तो कर चुकी थी, किन्तु बाद में ज्यों-ज्यों गहराई से सोचती गई, उसे इस सम्बन्ध में अनेक दोष नजर आने लगे। समाज, व्यवहार, यथार्थ परिवारवालों का विरोध, व्यक्तिगत कष्ट सब सोच-सोच कर वह अपने निर्णय पर संतुष्ट नहीं हो रही थी। सारी रात मधुर स्वप्न देखने के बजाय उसने बैचारिक परेशानियों में बितायी। दूसरे दिन सुबह ही हेमा आ गई, तो मानसिक थकान दूर करने के लिए वह उसके साथ सैर-सपाटे को चल दी। शाम को राजेन्द्र और रवीन के साथ पिक्चर चली गई। जब वे चारो पिक्चर-हॉल से निकले, तो रवीन ने हेमा को घर तक छोड़ने का भार लिया। राजेन्द्र और कंचन ने सीधे घर जाने की सोची। पर हेमा ने कहा, "मि० राजेन्द्र, कंचन को कुछ देर आप मेरे घर छोड़ दीजिए ना।"

"यों कंचन दिन भर से तो तुम्हारे साथ ही थी।"

"फिर भी मुझे उससे कोई जरूरी बातें करनी हैं।"

"यहाँ ही सामने पार्क में बैठकर कर लीजिए, वे बातें।"

"नहीं, घर पर ही छोड़ दीजिए प्लीज!" फिर उसने तिरछी दृष्टि डालते हुए कहा, "आप लोगों के सम्मुख करने की बात न हो तो?"

"तो यार, रबीन तुम इन्हें छोड़ दो, मुझे तो जरा काम है।"

"जरा कष्ट करिये मिस्टर रबीन!" हेमा ने कुटिल हँसी हँसते हुए कहा।

"यह कष्ट उठाने में मुझे प्रसन्नता ही होगी।"

कंचन को छोड़ तीनों हँस दिये। कंचन ने अन्दाजा लगाया, हेमा जो बात करेगी उसे शायद राजेन्द्र भैया और रबीन भी जानते हैं।

हेमा ने जब कंचन और रबीन दोनों को लाकर कमरे में बिठा दिया तब कंचन ने पूछा, "क्या कहना चाहती हो हेमा, जिसके लिए मुझे यहाँ तक घसीट लायी हो?"

हेमा रबीन की ओर देख कर हँस पड़ी। रबीन बोला, "शायद मेरी उपस्थिति आप लोगों को खले, मैं जाता हूँ।"

"ओफ्-हो, बनना तो कोई पुरुष से सीखे" हेमा ने कहा, "कैसे अनजान बन रहे हो?"

कंचन कुछ समझ न पाकर उन्हें विमूढ़ दृष्टि से देख रही थी। हेमा का चेहरा प्रफुल्लित हो रहा था और वह अनवरत हँसे जा रही थी। वह कंचन को पकड़ कर एक कोने में ले गई और उसके कान में फुसफुसाकर कुछ कहने लगी। उसका स्वर इतना धीमा नहीं था कि उसी कमरे में उपस्थित कोई और व्यक्ति न सुन सके।

"पर हेमा, तुम सोचने के लिए कुछ समय तो दो।"

"समय-वमय क्या? क्या रबीन कोई नया है हमारे बीच।"

"पर परिवार वाले हमारे······"

"उनसे तो पक्का करके ही तुम्हें कह रही हूँ। बल्कि यों कहो कि तुम्हारे माता-पिता और भाई का आग्रह ही मेरे मुँह से बोल रहा है।"

"किन्तु······हेमा······मैं ?"

"यह सब-अब कुछ नहीं। उस हड्डी के ढाँचे कवि में क्या रखा है ?"

कंचन कुछ कहे, उसके पहले हेमा उसे हाथ पकड़ कर रवीन के नजदीक तक घसीट लायी। कंचन का हाथ रवीन के हाथ में देती हुई बोली, "मैंने अपनी सखी तुम्हें सौंपी आज से" और उसने कंचन को गुदगुदा दिया। कंचन के रक्त-रक्त कपोल और भी लाल हो आये। वह रवीन के इतने निकट थी कि उसके शरीर की सुगंध उस पर एक मादकता-सी बिखेर रही थी। हेमा झट से उन्हें उसी स्थिति में छोड़ चाय लाने चली गई। एकान्त में रवीन ने कंचन को बाँहों में भर कर पूछा, "मैं तुम्हें पसन्द हूँ न कंचन ?"

कंचन पशेमान हो रही थी। आँखों पर पलकें झुक आई थीं। रवीन के हाथों का कसाव बढ़ा तो वह एकदम दूर छिटक आयी।

हेमा चाय और प्लेट में कुछ मिठाई लेकर आ गई।

× × ×

दीपिका जितना कुछ सहने के लिए मानसिक तैयारी में थी उससे कुछ अधिक ही उसे सहना पड़ा। स्टोर के काउन्टर पर खड़े होने का उसका कार्य ही ऐसा था कि वह अधिक छिप नहीं सकती थी। सभी परिचितों के बीच वह बाढ़ के पानी-सा अति शीघ्र फैल गयी। उसे लगा, जैसे एक आँधी-सी आ गई हो। पास-पड़ोस की औरतें उसे नफरत भरी निगाहों से देखने लगीं, जैसे उसने स्टोर में नहीं किसी कोठे पर धन्धा शुरू किया हो। मुहल्ले के लड़के बिना काम बार-बार चीजों के भाव पूछने जाते या बार-बार उस स्टोर के सामने से ही निकलते। पास-पड़ोस के किसी को दो-चार आने की वस्तु भी लेनी होती तो वह पौन मील चल कर उसी स्टोर में आता। कभी न बाजार का मुँह देखने वाली औरतें वहाँ जाने को किसी तीर्थयात्रा-सी लालायित रहतीं।

लोग उससे वहीं तरह-तरह के प्रश्न कर अपने मन को संतोष देते।"

"क्या तुम्हारे पिता रिटायर हो गये?"

"तुमने नौकरी कर ली, क्यों भला?"

"तुम्हें क्या आ पड़ी ऐसी नौकरी के लिए?"

"अब तो तुम घर में इकलौती ही हो? नौकरी ही करनी थी तो कहीं और क्यों नहीं की?......"

"कहीं शादी नहीं जमी?"

ये सारे प्रश्न वे उससे काउन्टर पर ही कर बैठते। दीपिका मन्द मुस्कान और प्रफुल्लित चेहरे से उन सभी का स्वागत करती हुई बहुत संक्षिप्त उत्तर देती। किन्तु शाम को आते ही उसके चेहरे पर सारी पीड़ा, सारी कठोरता घिर आती।

माँ-बाप ने भी उसका बहिष्कार-सा कर दिया। वे न तो उसकी आलोचना करते और न उससे बातें ही करते। वह अपनों के आपही बेगानी-सी हो गई। जब समाज की ताड़ना से उसका हृदय घर में सहानुभूति और प्यार की आकांक्षा रखता था, तब उसे ऐसी उपेक्षा हाथ लगी। कोई स्नेही उसे ऐसा नजर नहीं आता था जिससे मन की बातें कर सके। गीतिका के बिना उसे घर और भी सुनसान लग उठा। उसका दिल दोपहर की छुट्टी में भी घर आने को प्रेरित नहीं होता था।

घर वह नहीं जहाँ हम रहते हैं, घर वह है जहाँ के शेष सदस्य हमें अपना समझते हैं। दीपिका की दशा अपने ही घर में जब परायों-सी हो गई तो वह अपने साथ की अन्य हँसमुख लड़कियों के साथ ही अधिक-से-अधिक समय बिताने लगी। मगर सोचती, ऐसा कब तक चलेगा? क्या वह इसे अपनी भूल स्वीकार कर ले और नौकरी छोड़ दे? पर, ऐसे अपने उद्देश्य को कैसे पा सकेगी? उसे अपनी नौकरी में कोई कष्ट न था, सिवाय लोगों की बुरी निगाहों के। स्टोर में जितने भी तरह के लोग आते, वे उसके अनुभव में वृद्धि ही करके जाते। इसके अतिरिक्त

उसके अधिकारियों और सहयोगियों का व्यवहार बड़ा विनम्र और सौजन्य-पूर्ण था। काउंटर पर जब कोई पुरुष उसे अशिष्टतापूर्वक घूरने लग जाता तो वह कुछ देर बड़ा कष्ट-सा अनुभव करती, किन्तु शीघ्र ही सहज हो जाती। इस समाज में वह कोई विरोध या आश्चर्यजनक बात तो थी नहीं, बल्कि इसकी तो वह अभ्यस्त-सी ही थी। कॉलेज और बाजारों में पुरुष प्रायः राह चलती औरतों को घूरा ही करते हैं। उसे यह बहुत खलता, पर वह जानती है कि यह मर्ज ला-इलाज है।

पहले वह दोपहर को भोजन करने घर जाया करती थी, बाद में वह भी बन्द कर दिया। खाने का डिब्बा साथ ही ले जाती। वहीं हाथ-मुंह धोकर खा लेती और कुछ समय आराम कर लेती। कभी साथ की स्त्रियों के साथ चाय या आइस्क्रीम खाने किसी रेस्तराँ में चली जाती।

शनिवार की शाम उसने सोचा—कल छुट्टी है, वह कंचन के घर जायेगी। उसने फोन उठा कर कंचन का नम्बर मिलाया। कंचन के बोलने पर उसने कहा, "समाचार तुम्हें देना है, कल आकर बताऊँगी।"

कंचन ने पूछा, "समाचार कैसा है ? शुभ या अशुभ ?"

"वह तो कल ही बताऊँगी, घर पर ही रहोगी ना ?" दीपिका बोली।

कंचन ने उधर से कहा, "हाँ-हाँ, मुझे भी तुम्हें एक शुभ समाचार सुनाना है, कल तक इन्तजार करो। तुम फोन कहाँ से कर रही हो ?"

"यह भी कल ही बताऊँगी।" कह कर दीपिका ने फोन रख दिया, कोई ग्राहक जो खड़ा था।

फोन रख कर वह काउंटर की ओर मुखातिब हुई। प्रशान्त चकित भाव से उसे देख रहा था। उसके साथ मुक्ता भी थी। आगे बढ़कर उसने पूछा, "दीपिका, तुम यहाँ ?"

"मैंने यहाँ नौकरी कर ली है।" दीपिका ने सहज भाव से उत्तर दिया। फिर मुक्ता से बोली, "मुक्ता पहचानती है मुझे ?"

मुक्ता कुछ आश्चर्य-भरी नजरों से दीपिका को देख रही थी। दीपिका ने उसके दोनों हाथ पकड़ कर चूम लिये।

"शायद यह भी आपको यहाँ देखने की आशा नहीं रखती थी, इसलिए उसे पहचानने में देर लग रही है। कब से हो यहाँ? मुझे तो कुछ पता ही न चला।"

"यहीं कोई दस-बारह दिनों से।"

"यह अच्छा किया तुमने दीपिका, खाली बैठने से तो…… ।"

दीपिका ने मन में गहरा सन्तोष अनुभव किया, कोई तो मिला उसके कार्य और कदम की प्रशंसा करने वाला। प्रकट में बोली, "और क्या हाल-चाल हैं? प्रीति का पत्र आया था?"

प्रशान्त के मुख पर विषाद की छाप अंकित हो गई, उसने कहा, "प्रीति कुछ ठीक है—पर अभी वहीं रहेगी। यहाँ बिल्कुल अकेली पड़ जाती है।"

"और आपके क्या हाल हैं?"

"मैं भी ठीक हूँ।" प्रशान्त का संक्षिप्त उत्तर था।

मुक्ता चुप खड़ी थी। उसकी मुख-मुद्रा से ऐसा लग रहा था, जैसे अभी रो पड़ेगी। असल में जब भी उसकी प्रीति दीदी की बात निकलती थी, वह इसी प्रकार रुआँसी-सी हो जाती थी। दीपिका ने काउंटर पर से थोड़ा अधिक झुक कर मुक्ता को गोद में ले लिया, "क्या बात है मुक्ता, तुम चुप क्यों हो?"

"भैया दीदी को नहीं लाते।" कह कर वह रो पड़ी। दीपिका उसे समझाती और सिर को सहलाती हुई बोली, "मैं भी तो तुम्हारी दीदी हूँ, मेरे पास आया करो।"

मुक्ता ने भोली वाणी में कहा, "पर तुम हमारे घर कहाँ आती हो?"

"मुझे छुट्टी नहीं होती मुक्ता! अच्छा कल जरूर आऊँगी, कल छुट्टी है ना।"

"जरूर आना दीदी!" मुक्ता ने कहा।

"निमन्त्रण देने का मेरा कर्त्तव्य मुक्ता ने पूरा कर दिया। ......तो कल मैं तुम्हारी आशा करूँ ?"

दीपिका ने प्रसन्न मुद्रा में स्वीकृति दे दी।

रविवार की सुबह ही कंचन ने प्रेमपूर्वक दीपिका का स्वागत किया। बोली, "समाचार शीघ्र सुनाओ, मुझे बड़ी आकुलता हो रही है दीप!"

"पहले तुम अपना समाचार सुनाओ, वह शुभ है न ?"

"इधर आओ जरा, कान में कहने लायक बात है।" दीपिका की गर्दन में हाथ डाल कर वह उसके कान में कुछ फुसफुसा दी।

रवीन का नाम सुन एक क्षण के लिए वह विचलित हो गई, पर फिर शीघ्र ही उसने संयत हो कर कंचन के हाथ पकड़ उसे बधाई दी। बोली, "तो कब है शादी कंचन ? तुम बहुत चालाक हो, पहले कभी इस बात का संकेत तक न दिया।" फिर उसने कंचन की पीठ में एक घूसा जड़ दिया।

"यह सब अचानक और अतिशीघ्र तय हो गया। मैंने स्वयं इसकी कल्पना नहीं की थी।" इसी भ्रम में कंचन ने सारी बातें दीप को विस्तार से सुना दीं। हेमेन्द्र से किया प्रस्ताव और रवीन के साथ का पुलकित क्षण, हेमा की शरारत, परिवार की सम्मति आदि सब-की-सब।

"पर हेमेन्द्र से तुमने पहले प्रस्ताव क्यों किया ?"

"दीप, असल में मैं उस दिन बहुत अधिक भावुकता में बह गई थी। बाद में विचार करने पर मुझे लगा कि मैं जिस जीवन-स्तर में पैदा और विकसित हुई हूँ, लाख चाहने पर भी उसका मोह न छोड़ पाऊँगी। रवीन अच्छा नवयुवक है। उसके परिवार वाले भी बड़े अच्छे हैं। मैं उसे हृदय से पसन्द करती हूँ। इस सम्बन्ध के लिए मैं हेमा की कृतज्ञ रहूँगी।"

दीपिका को लगा, कंचन, रवीन और उसके काण्ड को जो उसी के घर घटा था, शायद बिल्कुल भूल चुकी है। कुछ सोचती हुई बोली, "हेमेन्द्र तो बड़ा क्षुब्ध होगा ?"

कंचन गम्भीर होकर बोली, "मुझे उसके लिए बहुत दुःख है। बहुत सहानुभूति है उसके साथ। कभी तुम्हें मिले, तो मेरी ओर से हार्दिक पश्चात्ताप सहित क्षमा माँग लेना। कुछ समय तक उससे मेरा मिलना तो कदापि उचित न होगा।"

दीपिका मौन हो सब सुनती रही। कंचन के चुप हो जाने के बहुत देर बाद तक भी वह मौन रही।

"हेमा तुम्हें बहुत याद कर रही थी दीप!"

"हाँ, वह आयी नहीं; तुमने कल फोन पर कहा था कि वह भी आयेगी?"

"वह आयी तो तुमसे पहले ही थी, पर राजेन्द्र भैया उसे बाजार ले गये।"

"बाजार!"

"हाँ, आजकल शादी के सामानों की खरीद-फरोख्त में हेमा की ही सलाह रहती है। भैया उसे बहुत मानते हैं।"

दीपिका ने मुस्कराते हुए पूछा, "घर में एक शादी है या दो?"

"अभी तो एक ही है, पर दूसरी का भी शीघ्र ही नम्वर है।"

"मुझे मत भूल जाना।" कहते हुए दीपिका चलने के लिए उठ खड़ी।

"बुलाऊँगी क्यों नहीं? तुम क्या भूलने लायक हो? ······पर तुम अपना विवाह कब कर रही हो?"

दीपिका एक उदास हँसी हँस कर बोली, "उसका भी समय आ जायगा।"

कंचन से विदा ले दीपिका सीधी प्रगति के यहाँ गई। मुक्ता उसे देखते ही 'दीदी-दीदी' करके उससे लिपट गई। दीपिका ने उसे गोद में बिठा लिया और प्रगति से बातें करने लगी। आज वह प्रगति से जी खोल कर बातें कर रही थी। बहुत दिनों बाद आज उसे ऐसा कोई मिला था, जिससे वह मन की सारी बातें कह सके। उसने उससे विवाह के सम्बन्ध में माता-पिता से मत-विरोध से नौकरी करने तक का सारा वृत्तान्त विस्तारपूर्वक वर्णित कर दिया।

प्रशान्त बहुत ध्यानपूर्वक उसकी बातें सुनता रहा। उसने कहा, "दीपिका, शब्दों का कोई मूल्य अथवा महत्व नहीं होता; क्योंकि हम हर उचित अथवा

अनुचित अवसर पर महज कहने के लिए तो कुछ-न-कुछ कह जाते हैं, किन्तु मैं तुम्हारी प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता। साहस तो चाहिए ही किन्तु तुम्हारे-जैसे सुलझे विचार, स्पष्ट सिद्धान्त और उनके पालन करने का संकल्प बिरली लड़कियों में ही पाया जाता है। मेरी धारणा थी कि नारी अनिवार्य रूप से भावुक, दुर्बल और परावलम्बी होती है। वह स्वयं अपने जीवन को दूसरे के भरोसे ढोती है। लेकिन जब तुम्हें देखता हूँ तो मेरी ये धारणाएँ भ्रांत और निर्मूल हो जाती हैं। असल में नारी अपने स्वरूप को समझ नहीं पाने के कारण बहुत से अनुचित और निरर्थक बोझों को ढोती ही रहती है। नारी-स्वातंत्र्य के इस युग में बड़ा विचित्र-सा लगता है यह तथ्य, भला इसका क्या कारण हो सकता है?"

"मेरे विचार में ऐसा इसलिए है कि नारी-स्वातंत्र्य के आन्दोलन अधिकांशतः पुस्तकों द्वारा ही संचालित हुए हैं। नारी ने स्वयं आगे बढ़कर उसमें क्रियात्मक भाग नहीं लिया अथवा लिया भी तो बहुत कम। पुरुष ने उसे एक कारा से मुक्त किया तो वह दूसरी कारा की बंदिनी बन गयी। उसने स्वयं इस विषय पर विचार नहीं किया और पुरुष द्वारा निर्दिष्ट पथ पर स्वतंत्र वह आँख मूँद कर चलती गई। परिणाम यह है कि आज वह स्वतंत्र चाँदनी है। वह स्वतंत्र कागजों में अधिक और सत्य में नाम मात्र की है। वह वास्तविक अर्थों में पुरुष की आश्रित है और इस आश्रय को सुरक्षित बनाये रखने के लिए वह अपने रूप के आकर्षण का प्रयोग करती है। आर्थिक निर्भरता अथवा उसके लिए क्षमता प्राप्त किये बिना नारी कभी स्वतंत्र नहीं हो सकेगी।" दीपिका ने अपने विचार व्यक्त किये।

"आश्चर्य है दीपिका, मेरी विचारधारा भी इसी तरह बहती रहती है, ...किन्तु जहाँ नारी को पूर्ण आर्थिक आत्मनिर्भरता प्राप्त है वहाँ वह क्यों अपने रूप, अपनी देह का आश्रय लेती है? क्यों पुरुषों के सम्मुख निर्बल हो जाती है?" प्रशान्त ने तर्कपूर्ण प्रश्न रखे।

"मैंने आज तक जो कुछ पढ़ा और सुना है उसके आधार पर मैं यही कह सकती हूँ कि जहाँ नारी पथभ्रष्ट हो गई है अवसर मिलने पर भी वह अपने व्यक्तित्व को विकसित नहीं करती और स्वेच्छा से पुरुष की विलास-सामग्री बन कर रह जाती है। यह उसकी अपनी भूल है। मैं तो पुरुष को नारी के लिए कोई देवता या भगवान नहीं केवल उसका सहयोगी मानती हूँ। दोनों एक-दूसरे के जीवन की पूर्णता हैं।" दीपिका बोली।

"आज की स्वतंत्र उच्चवर्गीय नारी भोग को ही अपना जीवन मान बैठी है और पुरुष को भी इसी ओर आकर्षित कर रही है।" प्रशान्त ने कहा।

"यहाँ मेरे विचार तुमसे मेल नहीं खा सकते प्रशांत! जहाँ तक भोग का प्रश्न है, दोनों समान रूप से उत्तरदायी हैं......भोग को मैं हीन दृष्टि से भी नहीं देखना चाहती। यद्यपि संस्कार नहीं छूटते, जो हम भारतीयों को युग-युग से अभावों की चक्की में पीस रहे हैं। भोग की निन्दा करने का अधिकार ही कहाँ रहता है? समृद्धि और ऐश्वर्य का अनुभव करने तक हमें उन पर अपने निर्णय को उठा रखना चाहिए। जीवन इस लिए ही नहीं कि हम सदा उसे त्याग के कफन से ही संवारते रहें......मुझे किसी भी स्त्री पर इसलिए दुःख नहीं होता, न होगा कि वह भोग के प्रति अनुरक्त है अथवा स्थूल जगत में प्रवृत्त रहती है। दुःख केवल इस बात का होता है कि वह पुरुषों का ध्यान खींचने, उनकी कृपा प्राप्त करने का प्रयत्न करती रहती है और इसके लिए मात्र अपने शरीर को साधन बनाती है। वह पुरुष के समान स्तर पर विचरण नहीं करती, प्रयुक्त परमुखापेक्षी बन कर रह जाती है। यदि वे समान स्तर पर रह कर भोग करें और समाज में स्त्री और पुरुषों के लिए समान धारणाएँ हो जायें, तो उसमें केवल नारी की ही स्थिति सोचनीय नहीं रहेगी, गुण-दोष, उचित-अनुचित दोनों के लिए समान उत्तरदायित्व होगा।" दीपिका ने अपना चिन्तन प्रस्तुत किया।

प्रशान्त मुग्ध भाव से उसकी ओर देखता रह गया। उससे कोई उत्तर न बन पड़ा। वह उसे अपनी कठिनाइयाँ सुनाने लगा। प्रीति के लिए खर्च भेजना

पड़ता है। मुक्ता के लिए नौकरानी रखना भी अनिवार्य है। अतः उसकी आर्थिक स्थिति संतोषजनक नहीं चल रही है। किसी अच्छे नौकरी की तलाश ही आज-कल उसकी दिनचर्या का मुख्य विषय बन गया था।

शाम होने लगी थी। दीपिका ने घर जाने का उपक्रम किया तो प्रशांत ने कहा, "मैं आपको छोड़ने चलूँ या तो कुछ दूर घूम आया जाय। मौसम बड़ा सुहाना लग रहा है।"

दीपिका ने सहर्ष स्वीकृति दे दी। मुक्ता को नौकरानी के पास छोड़ कर घूमने निकल पड़े।

नगर की भीड़ और कोलाहल भरी सड़क को छोड़ वे कुछ बाहर एक सूनी-सी सड़क पर आ गये। आकाश में विविधवर्णी घटाएँ नजर आ रही थीं। हवा उनके रंगों में शीघ्रता से चित्र बना-बना देती थी। चतुर चित्रकार की तरह, सूर्य की गुलाबी स्वर्ण-किरणें पेड़ों की चोटियों पर इठला रही थीं, पक्षियों का झुण्ड उन पर से शोर करता हुआ निकल जाता। चारों ओर शांति छायी थी। प्रशांत इस शांतिदायी अनन्त संध्या को मानो अपनी आँखों से पी जाना चाहता था। दीपिका ने एक-दो बार उसकी ओर देखा, किन्तु उसका ध्यान इस ओर न गया। तब दीपिका नीचे देखती हुई धीरे-धीरे उसके साथ कदम बढ़ाती रही। सहसा प्रशांत की दृष्टि दीपिका की ओर गई। हवा के झोंकों से उसके बाल उड़-उड़ कर पलकों पर बिखर जाते थे। उसका वक्ष तेजी से उठ-गिर रहा था—लगता था उसकी साँस फूल गई हो। प्रशांत की धमनियों में रक्त तीव्र गति से प्रवाहित होने लगा। मादक संध्या, एकान्त और स्निग्ध सौंदर्य! प्रशांत ने एकाएक दीपिका का हाथ अपने हाथों में ले लिया।

दीपिका ने नजर उठा कर प्रशान्त की ओर देखा। फिर पूर्ववत् पृथ्वी की ओर देखने लगी। वह विरोध किए बिना उसके हाथ में हाथ डाले चलती रही। प्रशान्त के उष्णता भरे हाथों के स्पर्श से दीपिका के शरीर में झुरझुरी-सी दौड़ गई।

"दीपिका !"

"हाँ...... !" दीपिका का अति संक्षिप्त और धीमा स्वर था।

"आज की संध्या कितनी सुन्दर है !"

"हाँ प्रशान्त" धीमे से उसने कहा और चारों ओर दृष्टि दौड़ायी, जैसे इस संध्या की उपमा को वह अपने अथाह नयनों में समा लेगी।

"मन करता है दीपिका, हम अनवरत इस संध्या को देखते रहें और यह संध्या कभी समाप्त न हो।"

"समाप्त न हो" दीपिका के अधरों पर मुस्कान खेल गई। बोली, "यह तो असंभव है प्रशान्त, ... अथवा ...... हो सकता है संभव भी हो जाय।"

कुछ क्षण मौन बीत गये। यह संध्या में रंगी धरती की ओर प्रशान्त उसके चेहरे को देखता रहा जिसमें भावुकता का उबाल नहीं, विचारों की निश्चिन्तता थी। दीपिका धीरे से अपना हाथ छुड़ा कर बोली, "चलो, लौट चलें प्रशान्त !"

× × ×

एक-एक दिन का अन्तर देखकर कंचन का रवीन से और हेमा का राजेन्द्र से विवाह हो गया। सभी पक्षों के स्थानीय होने से प्रबन्ध में कोई कठिनाई नहीं आयी। यद्यपि समय बहुत थोड़ा था। कंचन और रवीन के परिवार नगर-प्रमुख व्यवसायी थे। उनका बड़ा नाम था। अतः सभी धनी-मानी व्यापारी और संभ्रान्त नागरिक इन उत्सवों में सम्मिलित हुए। हेमा के पिता एक ऊँचे अफसर थे। दोनों विवाहों में बड़ी धूम रही। ये विवाह नवीन और पुरातन के विभिन्न सम्मिश्रण थे। अनेक छोटी-मोटी रस्मों को छोड़ केवल वर-यात्रा और सप्तपदी आदि मुख्य विधान ही पूरे किये गये थे, किन्तु लेन-देन और दहेज के मामलों में उन्होंने पुरानी रीति का पालन किया था। कंचन अपने परिवार की एक मात्र कन्या थी। धनवान व्यवसायी पिता ने उसके विवाह पर पानी की तरह रुपये खर्च किये। दहेज की अन्य सभी वस्तुओं के अतिरिक्त उसे एक कार भी दी थी। हेमा के पिता उनकी समानता तो नहीं कर सकते थे, फिर भी वे काफी सम्पन्न

थे। कंचन के विवाह पर किया गया खर्च देखकर उन्होंने अपनी लड़की के विवाह में भी अपनी औकात से अधिक खर्च कर डाला।

कंचन ने नीलिमा को भी पत्र भिजवाया था, किन्तु वह आ न सकी। उसकी अन्य सखियों के अतिरिक्त गीतिका, दीपिका और प्रशान्त भी सम्मिलित हुए थे। उसे हेमेन्द्र की याद तो बहुत आयी, किन्तु उसे सोच कर निमंत्रित नहीं किया कि कहीं वह इसका उलटा अर्थ न लगा बैठे। गीतिका का पति मोहन-लाल, रवीन का मित्र होने के नाते उसकी ओर से सम्मिलित हुआ था।

तीनों परिवारों में विवाह के बाद काफी आना-जाना बढ़ गया। रवीन और राजेन्द्र में साले-बहनोई का सम्बन्ध होने के अतिरिक्त वे पहले से ही प्रगाढ़ मित्र थे। इसी प्रकार हेमा कंचन की सखी तो थी ही, अब भाभी बन गई थी। रवीन से उसका रिश्ता सलहज का हो गया। इस नवीन रिश्ते से चंचल प्रवृत्ति के रवीन को मजाक का एक अधिकार मिल गया था। राजेन्द्र अपने व्यवसाय में अस्त-व्यस्त रहता था, किन्तु रवीन अभी तक बेकार था। अतः दहेज में मिली कार का यह पूरा-पूरा लाभ ले रहा था। वह इधर से उधर, उधर से इधर, तीनों घरों में चक्कर काटा करता। पहले की भाँति अब भी कंचन का घर उसके मिलन का केन्द्रीय स्थल बना हुआ था। कंचन दो दिन जो ससुराल में रहती, तो चार दिन मायके। रवीन भी प्रायः वहीं पड़ा रहता।

परीक्षाओं के परिणाम आ गये थे और रवीन को छोड़ सभी साथी प्रशांत, हेमेन्द्र, कंचन, दीपिका, हेमा, नीलिमा, समीर उत्तीर्ण हो गये थे। रवीन को इसका कोई मलाल नहीं था। उसे तो ऐसी आदत हो गई थी और फिर अब तो विवाह भी हो चुका। सुन्दर कन्या के साथ धनवान ससुराल भी मिली थी। वैसे भी परीक्षा पास करना उसका उद्देश्य रहा ही नहीं। उसके मित्र और सम्बन्धी कई दिनों तक उसकी इस बात को लेकर उसका मजाक बनाते रहे कि पत्नी और सलहज तो पास हो गई और यह रह गया चौथी बार भी। रवीन किसी तरह का अफसोस करने के बजाय उनके साथ खुले दिल से मजाक में भाग लेता।

वैसे तो दीपिका पहले भी कंचन के यहाँ कम ही जा पाती थी, किन्तु उसके विवाह के उपरान्त तो उसने वहाँ जाना बिल्कुल ही कम कर दिया। इसलिए कि रबीन प्रायः वहाँ उपस्थित रहता था। रबीन के सम्मुख रहना उसे पसन्द न था, यद्यपि रबीन इस विषय में बिल्कुल बेझिझक था।

गीतिका कभी-कभी अपने माता-पिता के घर आया करती थी। दीपिका भी दो-तीन बार अपनी बहन की ससुराल गई थी किन्तु गीतिका का पति मोहनलाल दीपिका की अस्वीकृति को अपना अपमान समझता था और अब तक उस अपमान-भाव को भूल नहीं सका। यद्यपि दीपिका के मन में उसके अपमान करने जैसी कोई बात नहीं थी। फिर भी दीपिका के प्रति मोहनलाल का व्यवहार स्निग्ध अथवा मित्रतापूर्ण न था। वह कभी सहृदयता से उसका स्वागत न करता। एक बार जब गीतिका से उसे ज्ञात हुआ कि मोहनलाल और रबीन घनिष्ट मित्र हैं, तो दीपिका मोहनलाल के रूक्ष व्यवहार को समझ गई। इस बात को गीतिका भी समझती थी कि उसकी बहन का यहाँ आना-जाना पति को पसंद नहीं, किन्तु वह बहन से कुछ न कह पाती थी। दीपिका ने उनकी उपेक्षा को अनुभव किया और वहाँ आना-जाना बिल्कुल बन्द-सा ही कर दिया।

इस प्रकार उसका जीवन एकाएक भयानक रूप से नीरस हो उठा। माता, पिता, बहन, सहेलियाँ सभी उसके लिए पराये-से हो उठे थे। स्टोर में काम का समय तो बीत जाता, किन्तु उसके अतिरिक्त और छुट्टियों के दिन वह अपने घोर एकान्त से बुरी तरह घबड़ा उठती। रात को देर तक वह बिस्तर पर पड़ी करवटें बदलती रहती। वह अपने वर्तमान और भविष्य के सम्बन्ध में अनेक कल्पनाओं और दुश्चिन्ताओं से घिर जाती। निराशा, अन्धकार और अनिश्चय के अतिरिक्त उसे कुछ न दीख पड़ता। कई बार वह यह सोच लेने को बाध्य-सी हो जाती कि क्या उसने यह पग उठा कर गलती की है? क्या उसे माता-पिता द्वारा निर्देशित पथ पर ही चलना चाहिए था? किन्तु वह किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पाती। थक कर सो जाती। निद्रावस्था में उसे भयानक स्वप्न दिखाई देते। जागने पर सारा शरीर और मन बीमार-सा लगता।

उसके साथ स्टोर में काम करने वाली लड़कियों का स्वभाव तो अच्छा था, किन्तु उनकी कुछ विशेष आदतों के कारण वह उनसे घनिष्ठता स्थापित नहीं कर पाती। वे लड़कियाँ स्टोर में काम करने में बाद का शेष समय अधिकतर होटलों, रेस्तराओं और क्लबों में बिता देती थीं। कभी-कमार कुछ हलका नशा भी करने में नहीं हिचकतीं। एक-दो को सिगार पीने की भी आदत थी। छुट्टी के दिन का उनका कार्यक्रम डांसपार्टी या सिनेमा हुआ करता था। उनकी आपस की बातचीत भी कभी-कभी बड़ी अशोभनीय-सी लग उठती थी।

अपनी मन:स्थिति को ठीक और स्वस्थ करने के लिए उसने जीवन में कुछ परिवर्तन लाने की सोचा। उसने घर छोड़ किसी 'वूमेन होस्टल' में कुछ दिन रहने का निर्णय किया, पर माँ-बाप का ध्यान कर उसने ऐसा कोई पग नहीं उठाया। मां-बाप इस कार्य को कभी पसन्द नहीं करेंगे और उनका रोग अवश्य ही बढ़ जायगा। उन्हें मानसिक आघात भी लगेगा। उसे यह भली-भाँति ज्ञात था कि मां-बाप के हृदयों में उसके लिए असीम प्यार है। गीतिका के जाने के बाद वही उनकी आशा-आकांक्षाओं का केन्द्र-बिन्दु है। निश्चित था कि कुछ समय की दीवार उठते ही वे पिछला सब कुछ भुला देंगे।

• • •

१८

लगभग एक माह तक तो कंचन अपने विवाह की मादकता में अग-जग सब भूले रही। एक मास का समय चुटकियों में निकल गया। जैसे विवाह कल ही हुआ हो…। बनाव-शृङ्गार, साड़ियाँ, मैचिंग, पार्टी, घूमना उसे कहाँ

फुरसत कि देखे। सूर्य कब उदय हुआ और कब अस्त। रवीन प्रायः सारे दिन उसके संग रहता। वे दोनों हेमा के घर चले जाते और रात गये राजेन्द्र के आने पर वे वहाँ से लौटते। राजेन्द्र व्यस्त व्यवसायी था। रात के ग्यारह-बारह बजे से पहले नहीं लौटता था। पहले चार-छः दिन समय पर आता रहा। हेमा को सिनेमा, रेस्तरां या सैर के लिए ले जाता, किन्तु शीघ्र ही उसने खेद प्रकट कर दिया—"हेमा, आज में जरा विजी रहूँगा, थोड़ा लेट आऊँगा प्लीज, डोन्ट माइन्ड। वैसे मैंने तुम्हारी कम्पनी के लिए आज कंचन और रवीन को निमन्त्रण दे दिया है।"

पर वह आज कभी समाप्त न हुआ। कंचन और रवीन का वहाँ समय बिताने का क्रम भी बिल्कुल स्थायी-सा बन गया। वे तीनों मनोविनोद और मनोरजंन के पीछे बेतहासा भाग निकले, मानो कोई होड़ लगी हो, जिसमें कोई आगे भागने से न रह जाय।

क़ाफी रात गये लौटने पर भी जब राजेन्द्र घर नहीं मिलता तो तीनों फिर रमी खेलने जम जाते। कभी तो राजेन्द्र भी आकर इस खेल में शामिल हो जाता और कभी उसके आते ही कंचन और रवीन अपनी कार को रात की सूनी सड़कों पर सरपट दौड़ा देते।

कभी-कभी कंचन राजेन्द्र भैया से मीठी शिकायत कर उठती—"भैया, तुम बड़े निर्दय हो। सारा दिन भाभी को अकेले छोड़ रखते हो और रात को भी इतनी देर से लौटते हो।"

राजेन्द्र केवल मुस्करा देता, पर हेमा कहती—"नहीं कंचन, मुझे उनके कार्य में बाधा नहीं बनना चाहिए। तुम लोगों के साथ मेरा समय बहुत अच्छी तरह कट जाता है।"

कभी-कभी राजेन्द्र शरारत से मुस्काराकर कहता—"रात को तो आ जाता हूँ न" और हेमा लजाने का अभिनय-सा करने लगती।

शीघ्र ही कंचन का सुखस्वप्न मद्धिम पड़ने लगा, जैसे वर्षा की सुनहरी शाम में निकला इन्द्रधनुष। रवीन पिता के साथ कारबार देखने का नाटक करने लगा। क्लब जाना थोड़े समय से छोड़ा हुआ था, वह भी उसने पुनः शुरू कर दिया। रात का खाना भी प्रायः वह बाहर ही खा लेता। कुछ दिनों तक तो कंचन खाना लगा कर रवीन की प्रतीक्षा करती रहती। बाद उसने प्रतीक्षा करना छोड़ दी। रवीन के आने पर खाने का कोई समय ही नहीं रह गया था। वह स्वयं निपटकर तैयार होती और हेमा के पास आ जाती अथवा क्लब में चली जाती। रवीन की उपेक्षा उसे मन-ही-मन खटकती। अपने में यह सोच वह संतोष कर लेती कि अब वह कार्यभार देखने लगा है। रवीन किसी छुट्टी के दिन कंचन के साथ सैर या सिनेमा के लिए जाता। उसे कुछ मूल्यवान् उपहार भी ला दिया करता।

कंचन हेमा की स्थिति का अनुभव कर अपने में धैर्य लाने का प्रयत्न करने लगी। वह भी तो अधिक समय अकेली रहती है। फिर राजेन्द्र भैया तो विवाह के आरम्भिक दिनों से ही उस पर ध्यान नहीं दे रहे हैं। वह तो अपने स्त्री और पुरुष मित्रों में प्रसन्न रहती है। यह प्रसन्नता भी उसकी तहेदिल से होती है। क्या उसके मन में अपने पति का अविभाजित ध्यान पाने की लालसा नहीं उठती? विवाह के आरम्भिक सालो में ही पति से उपेक्षा! यह बड़ी खटकने वाली बात रहती है। यौवन के उन्माद भरे क्षण क्या ब्रिज या रमी खेल कर अथवा सहेलियों के साथ गप्पें लगा कर बिताये जाते हैं? ये क्षण तो प्रिय के सदा नजदीक होने की ही कामना से तरंगित होते रहते हैं।

एक दिन वह हेमा से पूछ ही बैठी—"एक बात बताओगी? सब सच कहना।"

कंचन अब हेमा को कभी 'भाभी' और कभी 'हेमा' भी कहा करता था। यों अपने भाई के साथ शादी होने के पहले वह उसे मजाक में 'भाभी' कहने लगी थी।

"पूछो तो सही ?" हेमा ने अल्हड़ता से कहा।

"भैया अब भी देर से आते हैं न ... ... ?"

"कहो रुक क्यों गईं ?"

"तुझे यह कभी खटकता नहीं ? क्या इसके बाद भी तुम सुखी हो ? मैं देखती हूँ भैया विवाह के बाद से भी तुम्हारा... ...।"

हेमा पहले कंचन की ओर संशकित दृष्टि से देखने लगी, फिर हँस पड़ी। उसने कहा, "किसी व्यक्ति का सुख किसी अन्य व्यक्ति पर निर्भर क्यों हो और व्यक्ति के जीवन-क्रम में ही बाधक क्यों बनें ?"

"यदि यह बात पति-पत्नी के बीच भी लागू होती हो, तो फिर इस प्रिय रिश्ते और अन्य रिश्तों में अन्तर ही क्या रहा हेमा !"

"पति-पत्नी भी हो तो क्या हुआ ? वे मुझे अधिक समय नहीं दे सकते, केवल इस बात के लिए ही मैं दुखी क्यों होऊँ ? वे अपनी कम्पनी में 'एन्ज्वाय' कर लेते हैं, मैं अपनी कम्पनी में 'एन्ज्वाय' कर लेती हूँ। बात खटकने की स्थिति ही कहाँ रही ?"

कंचन सुन कर स्तब्ध रह गई। जैसे वह कुछ समझ ही नहीं पाती हो। एकटक हेमा को देखती रही, फिर टूटे से स्वर में बोली, "......?"

"यह किन्तु-परन्तु क्या ?" हेमा ने उत्तर दिया—"मेरे पास एक अलग गाड़ी है। उनके पास अलग गाड़ी है। अपनी इच्छानुसार खर्च करती हूँ और घूमती हूँ। उन्हें भी मेरे आचरण से कोई आपत्ति नहीं है। इस प्रकार मैं भी उन्हें किसी बन्धन में नहीं रखती। समझदार पति-पत्नी के बीच और भला क्या चाहिए ?"

इतना कह वह कैलेन्डरों में छपी छवियों-सी कंचन की ओर एकटक देखने लगी। कंचन हेमा की बात से सहमत नहीं थी, फिर भी चुप बैठी थी। हेमा ही बोली, "पर आज यह गलत प्रश्न तुम्हारे दिमाग में कैसे आया कंचन ?"

"यों ही पूछ लिया।"

हेमा इस उत्तर से संतुष्ट नहीं हुई। बोली, "क्या बात है? आजकल रवीन ने तुम्हारे हिस्से के समय में कटौती कर ली है ?"

"हाँ, आजकल तो वे अक्सर लेट ही आते हैं। राजेन्द्र भैया की तरह।"

"भाई, पुरुषों का तो यही हाल है। वे औरतों की तरह घर में तो बाँधकर नहीं बैठ सकते ? फिर रवीन ने पूरा एक माह तुम्हें हनीमून के लिए दिया था।"

कंचन ने इस पर कुछ न कहा। फिर पूछा, "भाभी, तुम विवाह का क्या अर्थ समझती हो ?"

हेमा ने कंचन के दोनों कंधों पर हाथ रख कर कहा, "आज ये दार्शनिक बातें तुम क्यों पूछ रही हो ? इन्हें दीपिका के लिए छोड़ दो। मैं तो ऐसे प्रश्नों पर अपनी बुद्धि का अपव्यय नहीं करती।"

"फिर भी ?" कंचन ने कुछ अनुरोध-सा किया।

"भाई सबकी बात तो मैं नहीं जानती, अपनी कहती हूँ। मुझ-जैसी लड़कियों के लिए, जिसमें तुम भी सम्मिलित हो, विवाह जीविकोपार्जन का एक स्थायी साधन है। एक व्यवसाय है।"

"तो क्या लड़कियाँ केवल भोजन और वस्त्र पाने के लिए ही विवाह करती हैं ?" कंचन ने प्रश्न किया। उसके प्रश्न में स्वाभिमानसूचक आवेग था।

"मैंने कहा न, मैं तो केवल अपनी और अपनी-जैसी लड़कियों की बात कहती हूँ। हाँ, जो लड़कियाँ स्वतंत्र व्यवसाय करती हैं, उनके लिए विवाह का अर्थ अवश्य कुछ भिन्न रहता हो, परन्तु अधिकतर लड़कियों के केस में मैं समझती हूँ यही बात, जीविका ही मुख्य रहती है। इसके अतिरिक्त शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति और मानसिक शांति के अतिरिक्त सन्तान-सुख भी तो शामिल है। सन्तान-सुख मैंने इसलिए कहा कि नारी अन्ततः प्रवृति का प्रतिरूप है। बन्ध्या जीवन तो उसके लिए अभिशाप ही है।"

कंचन आश्चर्य से उसका मुख देखने लगी। एकाएक उसने तीखे स्वर में कहा, "तब तो तुम राजेन्द्र भैया की अपेक्षा किसी भी धनी पुरुष से शादी करके सुखी हो सकती थी ?"

हेमा कुछ विचलित-सी हो गयी। फिर वह तुरन्त स्वस्थ होकर बोली—"तुम्हें भी शायद, और अन्य लोगों को भी, ऐसा कुछ कहना और सोचना अनुचित ही लगेगा; किन्तु कंचन, तुम्हारे कथन में सचाई अवश्य है। तुम्हीं बताओ, आज तक इसके अतिरिक्त लड़कियों के साथ होता भी क्या आया है? जन्म भर के लिए रोटी और कपड़े के लिए जिस-तिस व्यक्ति के साथ बाँध दी जाती है और वे भी उसी को अपना सुख-सौभाग्य समझती है। उन्हें भावनात्मक सुख मिले या न मिले, वे अपने को मिटाकर उसी में सुख खोजने का प्रयत्न करती हैं। हर क्षण अपना होमकर सफल गृहिणी और त्यागमयी माँ की उपाधियाँ प्राप्त करती हैं। विवाह से अन्य कुछ प्राप्त हो या न हो, बाकी सब तो अनिश्चित है, किन्तु भोजन और वस्त्र की निश्चितता तो उपलब्ध ही हो जाती है।"

"तो तुम्हारे विचार से विवाह एक व्यवसाय मात्र है?"

"अप्रत्यक्षतः तो यही सत्य है कंचन! विवाह के पहले लड़कियाँ अपने भावी पति के सम्बन्ध में कुछ नहीं जानतीं। वे तो अ, ब, स किसी भी पुरुष को दे दी जाती हैं, जैसे नौकरी के लिए आवेदन करने वाला प्रत्याशी यह नहीं जानता कि उसके बॉस का व्यवहार कैसा होगा। उसे तो केवल वेतन का लाभ होता है। इस अवस्था में विवाह को हम एक व्यवसाय नहीं तो और क्या कहेंगे। तभी तो लड़कियों के लिए अच्छे खाते-पीते घर की खोज की जाती है उसी तरह जैसे कोई नौकरी का प्रत्याशी अच्छी-से-अच्छी नौकरी के लिए प्रयत्नशील रहता है। यही कारण है कि कई बार सुन्दर और युवा किशोरियाँ, कुरूप या बूढ़े आदमियों को दे दी जाती हैं। सारी मधुरता, आदर्श, त्याग सब थोड़े दिनों में डूब जाते हैं। रह जाती है केवल आर्थिक निर्भरता की बात……कहो मैंने बेकार बकवास तो नहीं किया न?"

कंचन न तो उसकी बातों से एकदम सहमत ही हो सकी और न उसका कुछ प्रतिवाद ही कर सकी, पर जो हल हेमा ने प्रस्तुत किया, वह कंचन को निश्चय ही अरुचिकर लगा। विवाह का उद्देश्य यदि शारीरिक तृप्ति और

आर्थिक निर्भरता ही है, तो फिर इतना ढोंग क्यों ? ये तो बिना विवाह के भी मिल सकते हैं। प्रकट में कंचन कुछ नहीं बोली। तभी बाहर एक कार रुकी। कंचन ने समझा राजेन्द्र भैया आये होंगे। किन्तु कमरे में प्रवेश किया रवीन और मोहनलाल ने। उस समय वह रवीन को वहाँ देखने की आशा न करती थी। पूछा—"आप, इस वक्त कैसे आ गये यहाँ ?"

रवीन ने अस्थिर स्वर में कहा—"मैं जरा······ये मोहनलाल खींच लाये मुझे। मैंने सोचा रास्ते में दो मिनट यहाँ भी हो लूँ······राजेन्द्र कहाँ हैं हेमा जी ?"

"वे तो रात बारह बजे से पहले नहीं आयेंगे ? बैठिए, कंचन के पीछे-पीछे खिंचे चले आये हैं ?" उसने कंचन और रवीन दोनों की ओर कटाक्ष करते हुए कहा। फिर वह मोहनलाल से बोली—"आप सुनाइए, क्या हाल हैं ?"

"ठीक है," मोहनलाल का संक्षिप्त उत्तर था।

"गीतिका को क्यों नहीं साथ ले आये ?"

मोहनलाल ने कोई उत्तर नहीं दिया। सहसा कंचन ने उससे पूछा, "दीपिका के क्या हाल हैं ? आपके यहाँ तो आती ही रहती होगी ?"

मोहनलाल ने गम्भीर होकर कहा, "आप अपनी सखी की खोज-खबर नहीं रखती हैं।"

हेमा ने उत्तर दिया, "हम लोगों की तो वह केवल सखी है, किन्तु आपकी तो साली है।"

रवीन ने उसकी पीठ पर धौल जमाते हुए कहा, "साली का रिश्ता तो बहुत ऊँचा होता है मोहनलाल !"

मोहनलाल ने भी धौल का जवाब देते हुए कहा, "और सलहज का तो उससे भी ऊँचा।"

इस पर दोनों खिलखिलाकर हँस पड़े। कंचन का मुंह तमतमा गया। हेमा के कपोल भी सुर्ख हो गये, किन्तु वह हँसती रही।

मोहनलाल ने कहा, "आपने कुछ अन्यथा तो नहीं किया हेमा जी ?"

हेमा ने उत्तर दिया, "बिल्कुल नहीं, पर मुझे कंचन का डर है।"

कंचन ने कठिनता से अपने क्षोभ पर संयम रख कर कहा, "इसमें अन्यथा की क्या बात है, यह तो हास-परिहास है।"

यदि इस परिहास का आरम्भ रवीन से ही हुआ हो तो शायद कंचन कह उठती—'मुझे ऐसा परिहास पसन्द नहीं।'

मोहनलाल ने कहा, "दीपिका ने उचित पग नहीं उठाया। दुकान पर सत्रह तरह के लोग आते हैं और उन सबकी बातें सुननी पड़ती हैं। शरीफ लड़कियों के लायक यह काम नहीं। यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि यहाँ लगी सभी लड़कियाँ आवारा-सी ही हैं।"

कंचन अपनी सखी पर लगाये गये आरोप को सह न सकी। जरा तीखे स्वर में बोली—"क्या दीपिका के लिए भी आपकी यही धारणा है?"

"वैसे तो नहीं, मैं वहाँ काम करने वाली लड़कियों के सम्बन्ध में कह रहा हूँ।"

"आप उन्हें कैसे जानते हैं?"

"मैं, मैं क्यों जानूंगा? लोगों से सुना है।"

हेमा ने कंचन के समर्थन में कहा, "कुछ भी हो, दीपिका बुरी लड़की नहीं है। यही कहा जा सकता है कि वह दुस्साहसी है, आपको याद है न मिस्टर रवीन?"

रवीन, कंचन और हेमा—तीनों मुस्कराने लगे। अपनी झेंप मिटाने के लिए रवीन कुछ अधिक ही मुस्करा रहा था। बोला, "उसने मोहनलाल का भी तो अपमान किया है।"

मोहनलाल मन ही मन में कुनमुनाया।

वे लोग जाने लगे तो हेमा ने कहा, "रुकिए थोड़ी देर, भोजन करके जाइए।"

"बहुत समय हो गया है। अब तो चलते हैं।" कंचन ने रवीन का हाथ पकड़ते हुए कहा।

तब हेमा मोहनलाल की ओर उन्मुख हुई। बोली, "आप तो रुकिए कुछ देर, क्या आपको भी गीतिका की याद सता रही है ?"

"तुम जा सकते हो रवीन, मैं कुछ देर इनकी कम्पनी 'एन्ज्वाय' करके आऊंगा। मोहनलाल ने जूतों को पैर के बाहर करते हुए कहा।

कंचन को आश्चर्य हुए विना नहीं रहा। मात्र दो-तीन मुलाकातों का परिचय हेमा और मोहनलाल में इतनी घनिष्ठता वढ़ा गया !

उनके जाने के वाद मोहनलाल ने कहा, "मैं जरा मेज पर पैर फैला लूं हेमा जी, आप बुरा तो नहीं मानेंगी ?"

"बिल्कुल नहीं, आप आराम से बैठिए, मुझे स्वयं फारमलिटी पसंद नहीं।"

वह पैर फैला कर अधलेटा-सा वैठ गया। आँखें बन्द कर लीं। धीरे-धीरे अपने सिर पर हाथ घुमाने लगा। लगता था, वह थका हुआ-सा है।

हेमा ने कहा, "आप कुछ उदास से नजर आते हैं, क्यों ?"

आँखें खोल कर उसने उत्तर दिया, "कोई खास वात नहीं, मूड यों ही बदलते रहते हैं।"

"कभी आप गीतिका के साथ आइए न।" हेमा ने सानुरोध कहा।

मोहनलाल के मुँह पर उदासी छा गई,—"यही तो बात है हेमा जी, अपने हृदय का रहस्य मैं आप पर प्रकट कर रहा हूँ। आप इसे अपने तक ही सीमित रखें तो अच्छा है।"

हेमा के नेत्रों में चमक आ गई। वोली—"आप कहें तो सही, और हाँ, विश्वास कीजिए कि आप का रहस्य मेरा रहस्य रहेगा।"

मोहनलाल ने अपने स्वर को भरसक आर्द्र वना कर कहा, "विशेष गोपनीय भी नहीं······मैं गीतिका से विवाह करके सुखी नहीं हुआ, जैसा कि मैंने सोचा था।"

हेमा चट सीधी होकर वैठ गई। उसने सिर आगे को बढ़ा कर उत्सुकतापूर्वक पूछा—"यह क्या कह रहे हैं आप ? गीतिका इतनी सुन्दर और सरल स्वभाव की लड़की है फिर भी······ ?"

"हाँ, वह आवश्यकता से अधिक सरल है। इतनी कि मेरे साथ किसी मित्र तक के यहाँ नहीं जा सकती। घूमने के लिए बाजार में नहीं निकल सकती। शृङ्गार नहीं कर सकती। मैचिंग और प्रसाधनों के प्रयोग में तो वह बिल्कुल गाँव की गोरी है। साथ सिनेमा नहीं जा सकती। बताइए, ऐसी स्त्री का मैं क्या करूँ ?"

हेमा को सहज विश्वास न हुआ। वह जानती थी कि गीतिका एकदम फारवर्ड तो नहीं है, किन्तु एक ग्रेजुएट लड़की से ऐसी आशा तो नहीं की जा सकती कि विवाह के बाद भी वह ऐसी ही पुरातनपंथी बनी रहेगी। उसने चकित होते हुए कहा—"यदि आपका कथन सही है तो यह खेद का विषय है। मैं उसे समझाऊँगी। इतनी सुन्दर लड़की होकर वह पति को प्रसन्न नहीं रख सकती, पगली ?"

"बिना सजे-सँवरे तो अप्सरा का रूप भी फीका पड़ जाता है हेमाजी··· आपने कितना आकर्षक जूड़ा बनाया है। मेकप कितना अच्छा करती हैं आप···उसे तो जैसे इन चीजों से घृणा है। लिपस्टिक के तो नाम से ही चिढ़ती है···सच कहता हूँ, आपके सौंदर्य से उसकी तुलना नहीं हो सकती।"

मोहनलाल अपने चातुर्य-कौशल से हेमा को प्रसन्न कर रहा था। अपनी प्रशंसा से तो अच्छे-अच्छे पिघल जाते हैं फिर हेमा तो एक साधारण स्त्री है। उसने छद्म नम्रता से कहा, "आप मुझ पर शब्दों का अपव्यय कर रहे हैं" और एक हाथ से अपने जूड़े का काँटा ठीक करने लगी।

कुछ देर बाद मोहनलाल ने कहा, "मैं और रवीन कल मैटिनी शो में एक इंगलिश पिक्चर देखने जा रहे हैं। आप भी चलिए न। बहुत अच्छी है।"

"क्या नाम है ?"

"यह तो रवीन को मालूम है।"

"हीरो-हीरोइन कौन है ?"

"अ···अभी तक जबान पर थे, भूल रहा हूँ।"

"डायरेक्टर कौन है ?"

"मैं तो कभी पिक्चर में डायरेक्टर के नाम को पढ़ता नहीं। उससे अपने को क्या ? कोई हो। अपने राम की तो आँखों को सुख मिलना चाहिए।"

"खैर इंग्लिश पिक्चर है तो अवश्य चलूँगी। बचपन से ही पापा और मम्मी ने मुझे इंग्लिश पिक्चर देखने की आदत डाली है।"

दूसरे दिन मैटिनी शो के समय मोहनलाल हेमा को ले चलने को आया। हेमा उसे देखते ही बोली,—"अरे आप अकेले ? कंचन और रबीन कहाँ हैं ?"

"रबीन तो टाकीज में ही मिल जायगा। कंचनजी शायद नहीं आ रही हैं।"

"क्यों भला ?" हेमा ने आश्चर्य से बाहर कदम रखते हुए कहा।

"रबीन कह रहा था–कि कंचन को यह पिक्चर पसन्द नहीं हैं।"

हेमा गाड़ी निकलवा कर उसके साथ हो ली। वह स्वयं गाड़ी चला रही थी। मोहनलाल उसके साथ वाली सीट पर बैठा था। वह अपने शरीर पर फिसलती उसकी लुब्ध दृष्टि की कल्पना कर रही थी। इससे उसे अपने बनाव-शृङ्गार पर कुछ गर्व भी हो आया था। एक बार उसने मोहनलाल की ओर नजरें फेरीं। दोनों की नजरें टकरायीं। वह मुग्धभाव से उसकी ओर देख रहा था। हेमा के मुख पर एक विजयसूचक मुस्कान बिखर गयी। वह फिर सड़क की ओर देखने लगी। उसके मन में कुछ विचार उमड़ रहे थे। रबीन और मोहनलाल का कंचन के सामने अचानक आना। वे पिक्चर का प्रोग्राम बना कर ही आये थे, किन्तु कंचन के सामने तो नहीं कहा और मोहनलाल कहता है कि शायद वह नहीं आयेगी। क्यों—? कंचन ने इन्कार क्यों किया ? रबीन और मोहनलाल के बीच की भद्दी मजाकें क्या उसे पसन्द नहीं···रबीन, वह भी उसके रूप का प्रशंसक है···और मोहनलाल···यह गीतिका-जैसी सुन्दर लड़की से संतुष्ट नहीं।

उसने मोहनलाल की ओर नजर घुमायी। वह उसे अपलक देख रहा था। उसकी दृष्टि में एक भूख थी, एक आवेश था। एक उन्मत्त आकांक्षा, एक

मनुहार। हेमा कुछ कांप-सी उठी। उसे लगा, मोहन की लोलुप दृष्टि ने उसे अनावृत्त कर दिया है। जैसे मोहन की क्रूर निगाहें उसके अंग-प्रत्यंग को निगल जाना चाहती हैं। उसने एक हाथ से अपने उन्नत उरोजों पर आंचल को ठीक से फैला लिया। सहसा एक्सीलेटर पर उसके पांव का भार बढ़ गया और गाड़ी की स्पीड एकदम तेज हो गई। उसने कार को सँभाला और स्वस्थ होने का प्रयत्न करने लगी। मोहनलाल ने इसे लक्ष्य किया और सामने सड़क की ओर देखने लगा। इतने में हेमा सँभल गई। उसने बड़े आत्मविश्वास से अपने सिर को झटका दिया। सामने आयी बालों की एक लट को संवारा और थोड़ी जोर से हँस पड़ी। मोहनलाल इस हँसी के रहस्य को समझ नहीं पाया। उसके मुख पर पसीने की बूंदें झलकने लगीं। जब वे टाकीज पहुँचे, तो रबीन वहाँ उनका इन्तजार कर रहा था। कंचन नहीं थी। वे गाड़ी का दरवाजा खोल कर बाहर निकले तो रबीन ने आगे बढ़ कर हेमा का हाथ थाम लिया।

●●●

१९

दीपिका का जीवन एक निश्चित ढर्रे पर चल रहा था। उसमें कहीं कोई सरसता, कोई आकर्षण, कोई रोचकता नहीं थी। विशेष कठिनाइयाँ अथवा अवरोध भी नहीं थे। अपवाद का तूफान भी अब शांत हो चुका था। कभी-कभार प्रसंगवश भले ही कोई बात उठती हो। इसी कारण उसके जीवन में भयंकर वितृष्णा भर गई थी। कोई संघर्ष नहीं, कोई नवीनता नहीं। कुछ भी घटित नहीं होता था। लगता था, उनका जीवन एक छोटे से पोखर-सा सीमित हो गया हो। जिसमें आंदोलन, गति, क्रिया कुछ भी नहीं। केवल घुटन, सँड़ाघ और

निष्क्रियता शेष है। उस पानी के तल पर लहरों का एक वृत्त बनता और शीघ्र ही समाप्त हो जाता। वह जल बुलबुलाता किनारा तोड़कर बह जाने के लिए और कहीं जगह न मिलने के कारण वह वहीं विवशता से शांत हो जाता। कोई छुटकारा नहीं, कोई उद्धार नहीं। दीपिका घबड़ाकर अपना सिर थाम लेती। उसने कई बार कंचन और हेमा को फोन किया। अक्सर वे उसे फोन पर न मिलतीं। जब-तब मिलीं थीं तो उन्होंने अपना कोई न कोई कार्यक्रम बताकर उससे क्षमा माँग ली। एक दिन हेमा ने कहा, "प्लीज दीप, रमी का खेल चल रहा है, बहुत बिजी हूँ। मोहनलाल और रबीन दोनों को डिफीट देनी है।" कहकर उसने दीपिका का कुछ सुने बिना ही फोन रख दिया।

मोहनलाल, रबीन, हेमा। दीपिका आतंकित हो उठी।

एक दिन वह माँ से कह बैठी—"माँ, गीतिका को बुला लो न, कुछ दिन। बड़ा सूना-सूना सा लगता है।"

माँ ने जो उत्तर दिया उसे सुन कर वह जड़ हो गई।

माँ ने भावनाहीन स्वर में कहा, "मैंने एक बार तुम्हारे छोटे मामा को भेजा था। वह लोग कहते हैं—तुम्हारी बड़ी लड़की के कारण हमें पहले भी काफी बदनामी उठानी पड़ी है। बहू को अब नहीं भेजेंगे। ऐसी लड़की की संगति का प्रभाव उस पर भी तो पड़ सकता है।"

दीपिका ने पथरायी आँखों से माँ की ओर देखा। उनका मौन विरोध अब समाप्तप्राय हो चुका था, किन्तु दोनों के हृदयों के बीच जो खाई बनी थी, वह न पटी थी। माँ के रूखे शब्दों से उसका हृदय टूक-टूक हो गया। वह उठ कर कमरे में चली गई। एक साथ पली, खेली और बड़ी हुई बहिनें आज........। दीपिका की आँखें भर आयीं।

सुबह उठकर दीपिका कामकाज में लग जाती। माँ के साथ खाना बनाने में हाथ बंटाती, यद्यपि माँ उससे कभी किसी काम के लिए नहीं कहती थी। नाश्ता करके वह अपने स्टोर चली जाती। वहाँ साथियों के शोर और ग्राहकों

के बीच जैसे-तैसे दिन कट जाता। दोपहर को दो घंटे की छुट्टी मिलती, किन्तु वह घर नहीं जाती। वहीं कोई पत्रिका या उपन्यास पढ़ती रहती। शाम को दो-तीन घंटे अधिक काम रहता। जब वह घर लौटती, तो काफी थकी हुई होती। खाना खा थोड़ा आराम करती। घर आने के बाद से सोने तक का समय बड़ा बोझ बन जाता। उसकी थकान श्रमजन्य कम और विषादजन्य अधिक होती। वह किसी प्रिय साहचर्य के लिए व्याकुल हो उठती। सखी-सहेली, समवय सम्बन्धी कोई हो तो, जिससे वह थोड़ी देर सुख-दुःख की बातें करे। घर में माँ-बाप थे। बाहर भी परिचितों की संख्या कम न थी, बल्कि और बढ़ती ही जा रही थी। किन्तु, इसमें से उसका अपना कौन ?

वह काउन्टर पर खड़ी होती, तो कई परिचित व्यक्ति सड़क पर से गुजरते दिखाई देते। उसकी दृष्टि कई बार कार में जाते कंचन, हेमा और रबीन पर पड़ती। एक दिन वह किसी स्त्री को कुछ दिखा रही थी कि प्रशांत ने प्रवेश किया। यह एक ओर खड़ा हो कर प्रतीक्षा करने लगा। जब वह ग्राहक से निपट कर उसकी ओर उन्मुख हुई तो वह आगे बढ़ा।

दीपिका मुस्करा कर बोली; "कहिए, आपको क्या दिखाऊँ ?"

प्रशांत ने हंसकर कहा, "दो टॉफियाँ दीजिए।"

दीपिका ने दूसरी लड़की से टॉफियाँ मंगा कर उसे दे दी। प्रशान्त ने टॉफियों का रैपर उतार फेंका। एक दीपिका की ओर बढ़ा दी और एक स्वयं मुँह में डाल ली। फिर एक रुपये का नोट दीपिका की ओर बढ़ाया। दीपिका ने बनावटी रोष से उसकी ओर देखते हुए नोट लेकर रख लिया। प्रशांत ने कहा, "कुछ पैसे वापस मिलेंगे या टॉफियाँ इतनी महँगी हैं ?"

"वैसे तो बच्चों को दो-चार टॉफियाँ हम यों ही दे देती हैं। पर, शरारती बच्चों को तो फिरता पैसे भी नहीं लौटातीं।"

"नियम तो बड़ा अच्छा है।"

"जाओ तुम्हें माफ किया।" नोट लौटाते हुए दीपिका ने कहा।

प्रशांत ने नोट ले लिया। जानता था कि दीपिका पैसे नहीं लेगी। उसने कहा, "तुम्हें एक समाचार सुनाने आया था।"

दीपिका उसकी ओर उत्सुकता-भरी दृष्टि से देखने लगी।

"मेरी सरकारी नौकरी लग गई है।"

दीपिका यह सुन कर बहुत प्रसन्न हुई, जैसे लाटरी खुल गई हो।

अखबार के दफ्तर की नौकरी में प्रशान्त जैसे-तैसे गुजारा करता था। इस नौकरी का कभी भी छूट जाने का भय था। यह इसी प्रकार की चार नौकरी कर चुका था। एक के छूटने पर दूसरी की तलाश में काफी दौड़-धूप करनी पड़ती थी और ऐसे समय उसकी आर्थिक अवस्था बड़ी शोचनीय हो जाती थी। कई बार दो-दो माह तक काम नहीं मिलता, वेतन तो कम रहता ही था। दीपिका ने प्रफुल्लित मन से उसे बधायी दी, "मुझे बेहद खुशी हुई, प्रशांत! कहाँ लगी है नौकरी?"

तभी कुछ ग्राहक आ गये। प्रशांत ने कहा—"शाम को करोना में मिलो। वहीं आराम से सब बातें करेंगे।"

"अवश्य। यहाँ से छुट्टी मिलते ही मैं आऊँगी।"

"अच्छा, मैं तुम्हारा इन्तजार करूँगा।"

× × ×

दीपिका करोना में घुसी तो प्रशांत एक टेबुल पर बैठा उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। उसके आगे चाय का एक कप रखा था, जिसमें से संभवतः एक-आध घूँट भी न ली गई हो। उसे भूल वह एकटक दरवाजे की ओर दृष्टि गड़ाये था। दीपिका को आते ही उसका मुख प्रसन्नता से खिल उठा। वह उसका स्वागत करने को उठ खड़ा हुआ। दीपिका ने अपना पर्स मेज पर रख कर प्रशांत के सामने कुर्सी पर बैठ गई। प्रशांत ने बैरे को बुला कर कुछ आर्डर दे दिया।

"अब सब कुछ विस्तार से बताओ प्रशांत!"

"मुझे यहीं स्थल-सेना के ऑफिस में यू० डी० सी० का काम मिल गया है। सेना-विभाग में वेतन तो अच्छा है ही, अन्य सुविधाएं भी बहुत हैं। मुक्ता की शिक्षा अब अच्छी तरह हो सकेगी।"

"यह सुन कर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हुई प्रशांत ! मैं जानती हूँ कि आर्थिक अभाव कितना भयानक होता है।"

"हाँ दीप, वह उठते-बैठते, सोते-जागते मन पर छाया रहता है और घुएँ की तरह मन-प्राण को घोंट डालता है।" उसके चेहरे पर व्यथा की रेखाएँ उभर आयीं। कुछ दार्शनिक निर्धनता के गुण गाते चले आएँ हैं। यह चरित्र को निखारती है, उसका उत्थान करती है। पर मैंने तो इससे उल्टी ही बात देखी है।

"वे दार्शनिक सत्य जगत में नहीं उतरे। अरस्तू जैसा उतरा तो उसने कह दिया, "निर्धनता धर्म की हत्यारी है।"

"हाँ दीप, बेचारा हेमेन्द्र, कितना परेशान है आर्थिक कष्टों से।"

"इधर हेमेन्द्र मिला तुम्हें ? मुझे तो काफी समय से नहीं मिला।"

"मिलता ही रहता है······कंचन के व्यवहार के कारण बहुत दुःखी रहता हैं। अब तक अपने अपमान को भुला नहीं पाया है। कंचन को उससे प्रस्ताव ही नहीं करना चाहिए था।"

"हेमेन्द्र की कहीं सर्विस लगी ?"

"हाँ लग गई है। लेक्चरर हो गया।"

"चलो यह बहुत अच्छा हुआ। परिस्थितियों ने उसके स्वभाव और विचारों को बड़ा अस्वाभाविक बना दिया था।"

"अस्वाभाविक क्या, विकृत भी कहें तो चलेगा।"

प्रशांत दीपिका के व्यक्तिगत जीवन के बारे में पूछने लगा। दीपिका ने अपने उदास और फीके जीवन के बारे में सब कुछ कह सुनाया। पहले तो उसने कुछ झिझक अनुभव की, किन्तु जब बोलने लगी, तो सब कुछ कह दिया। एक शब्द भी न छिपा पाया। प्रशांत उसके दुःख की संवेदना में डूब गया और कुछ देर बाद बोला, "तुम थोड़े मनोविनोद के लिए कुछ और करो।"

"क्या करूँ ?" दीपिका ने उदासी भरे स्वर में पूछा।

"एक-दो बार मैंने तुम्हारा गाना सुना है। स्वर तो बड़ा मधुर है, क्यों नहीं संगीत ही सीखने लगतीं ?"

"अब इतना समय कहाँ प्रशांत ! बचपन में बड़ी इच्छा रहती थी, संगीत और नृत्य सीखने की। अब तो···।"

"अब तो क्या ? अब क्या बुढ़ापा आ गया ?"

दीपिका हँस दी। बोली, "तुम्हें भी तो पेंटिंग का बड़ा शौक था ?"

"शौक तो अभी भी है, किन्तु उसके रंग, कैनवास आदि इतने महँगे हैं कि कुछ ज़म नहीं पाता।"

"अब तो नौकरी लग गई है, जम जाना चाहिए।"

"हाँ, थोड़ा ठीक से चलने लगा कि मैं तो फिर से अपना शौक शुरू करूंगा।"

"अच्छा है" फिर दीपिका ने विषय बदल कर पूछा, "प्रीति कैसी हैं ? कोई पत्र आया उसका ?"

प्रशांत अभी तक जिस हलके मूड में बातें कर रहा था, वह एकदम गायब हो गया। वह गंभीर हो आया। उसने थके-से स्वर में कहा, "हाँ, अब पहले से ठीक है। पर यहाँ आने की अभी उसकी इच्छा नहीं।"

दीपिका ने यह विषय अरुचिकर जान आगे बात न बढ़ायी। वह उठ कर जाने लगी। चलते हुए फिर बोली, "प्रशांत, तुम्हारी नौकरी लग जाने के लिए एक बार पुन: मेरी हार्दिक बधायी ! कुछ लोग भले ही इस बात को बड़ी न समझें, पर मेरे लिए तो···"

"हाँ दीपिका, मैं नौकरी के लिए बहुत परेशान रहा। अब चैन की सांस लूंगा।"

दीपिका ने दिल्लगी की, "पर आपने मुझे एक टॉफी पर ही टरका दिया।"

उसने भी हँस कर उत्तर दिया, "कल टॉफी का पूरा डिब्बा दिला दूँगा बस।"

प्रशान्त उसे छोड़ने काफी दूर तक साथ आया और विदा लेते हुए उसने कहा, "दीपिका, रविवार को हम कहीं चलने का प्रोग्राम बनायें। मैं भी काफी बोर हो गया हूँ।"

दीपिका पहले सोच में पड़ गई, फिर बोली, "अच्छा चलने का प्रयत्न करूँगी। कहाँ चलने का बिचार है?"

"जहाँ आप कहें, अभी मैंने कोई निश्चय नहीं किया।"

"एक-दो दिन में निश्चय कर लें, मैं भी कुछ मनोरंजन चाहती हूँ।"

"अच्छा बाई-बाई!"

'बाई-बाई' कह कर प्रशान्त मुड़कर चल दिया। दीपिका कई क्षण तक उसकी ओर देखती रही। काफी दूर पहुँच जाने पर प्रशान्त ने उसकी ओर मुड़कर देखा तब वह भारी कदमों से घर की ओर चल दी।

दूसरे दिन स्टोर में आ कर ही प्रशान्त मिला और दोनों ने रविवार को दस बजे करोना में मिलने का निश्चय किया। तय हुआ कि वहीं से कहीं आसपास के पिकनिक-स्पॉट पर चलने की सोचा जायगा।

रविवार आया तो दीपिका बड़ी दुविधा में पड़ गई। प्रशान्त के प्रस्ताव का उसने स्वागत भी किया था और साथ चलने को वचनबद्ध भी हो गई थी, किन्तु मन में अनेक तरह की चिन्ताएँ उठ रही थीं। माँ-बाप से क्या कहेगी? यह तो कह ही नहीं सकती कि एक लड़के के साथ वह अकेली पिकनिक जा रही है! भले ही वे प्रकट रूप में उससे कुछ न कहें पर उन्हें इस बात से बहुत मानसिक आघात लगेगा। वह स्वयं अपने इस कार्य को अनैतिक नहीं समझती थी, उसे प्रशान्त और स्वयं पर भी पूर्ण विश्वास था, फिर भी माँ-बाप को सोच उसका मन बड़ा डावाँडोल हो रहा था। पिकनिक और अकेले लड़के के साथ? माँ-बाप ने सहन कर भी लिया तो अन्य लोग? वे तो इसे कतल के समान जुर्म समझेंगे और कब समझेंगे कि लड़कियों को भी मनोरंजन की आवश्यकता होती है। यह कागजों और शब्दों की स्वतंत्रता कभी साधारण समाज में समा पायेगी?

अपने जीवन की नीरसता से वह इस कदर घबड़ा गई थी कि इस अवसर को खोना नहीं चाहती थी। वह इससे मुक्ति चाहती थी भले ही वह क्षणिक हो। प्रशान्त के साहचर्य की कल्पना भी उसके मन को रंगों से भर-भर दे रही थी, पर दूसरे ही क्षण वर्जनाएँ और कुण्ठाए उसे घेर लेतीं, मन के रंग फीके होने लगते। एक बार उसने सोचा था कि किसी अन्य को और साथ ले चले, किन्तु किसे? नीलिमा और प्रीति तो है ही नहीं, कंचन और हेना को तो अब बात करने तक की फुर्सत नहीं और गीतिका के साथ चलने की बात सोचना भी वेकार है।

उसने दृढ़ निश्चय किया—वह जायगी, अवश्य जायगी, इसमें उसे स्वयं को तो कोई बुराई नजर नहीं आती। निश्चय के साथ ही वह उठी, तैयार हो माँ के सामने आ खड़ी हुई। साहस के साथ बोली, "माँ, प्रशांत को तुम जानती हो न, उसी के साथ बाहर जा रही हूँ। जरा शाम तक लौटूँगी।"

माँ कुछ कहे, इसके पहले ही वह दरवाजे से बाहर हो गई। उसका हृदय तेजी से धड़क रहा था।

किसी यंत्र के समान वह भीड़-भाड़ पार करती हुई चलती जा रही थी। करोना पहुँचते-पहुँचते मानसिक द्वन्द्व और नैतिक दमन के कारण उसकी आँखें भर आयीं, रूमाल निकाल कर उसने आँखें पोंछीं और भीतर चली गई।

प्रशांत ने प्रफुल्ल मुस्कान से जब उसका स्वागत किया तो वह खिल उठी, मानो जैसे-तैसे तैर कर आ रहे व्यक्ति को कोई एकदम नाव में बैठने का मौका दे दे।

चाय की घूंट लेते हुए प्रशांत दीपिका के चेहरे को ध्यान से देखने लगा। बोला, क्या हुआ दीप, तुम्हारे चेहरे पर उदासी क्यों छाई है?"

दीपिका ने आँखें उठायीं, प्रशांत की आँखों में कातर दृष्टि से देखती हुई बोली, "मैं बड़ी उलझन में पड़ी थी प्रशान्त कि तुम्हारे साथ जाऊँ या न जाऊँ?"

प्रशान्त दीपिका की उलझन का कारण समझ गया था। उसने उसका मानसिक द्वन्द्व हलका करने की दृष्टि से कहा, "ऐसी छोटी-छोटी बातों में इतना सोच करोगी तो फिर बड़ी बात सोचने में तो जिन्दगी ही गुजार दोगी।"

दीपिका मुस्करा पड़ी, दोनों उठ कर बस-स्टॉप पर आ गये।

"कहाँ चलें, झील की ओर?" प्रशान्त ने पूछा।

"हाँ वहीं ठीक रहेगा। वहाँ के लिए बस भी मिल जाती है।"

वे बस में बैठे, तो भीड़ के कारण उन्हें साथ-साथ सीट न मिल सकी। दीपिका आगे की सीट पर और प्रशान्त उसके पीछे वाली सीट पर बैठा प्रशान्त दीपिका को मुग्ध भाव से देखता रहा। उसे दीपिका का जूड़ा और गर्दन के नीचे पीठ तक जाता भाग दिखाई दे रहा था। आज दीपिका के सौंदर्य में उसे एक नवीन आकर्षण लग रहा था, सारे बाल समेट कर बाँधा ऊँचा-सा जूड़ा, उसके नीचे ढालू गोरी-गोरी गर्दन, घनी कुंचित केशराशि के नीचे गौर वर्ण और अधिक निखर रहा था, कानों में लटकते छोटे फूल गर्दन के हिलने से झिलमिला उठते थे। प्रशान्त कभी नहीं जाता था कि किसी स्त्री के सिर और गर्दन की आकृति का पृष्ठ भाग भी इतना मोहक, इतना मादक होता होगा। उसका मन हुआ पीठ की ओर से ही उसे अपनी बातों में बाँध कर गर्दन के इस खुले स्थान पर अपने ओंठ रख दें, उसके उड़ते बालों की सुगन्ध से अपना मन-प्राण भर ले।

'लेक पैलेस' कंडक्टर की आवाज ने उसे इस सुखद स्वप्न से जगा दिया।

यह झील नगर के कोलाहल से दूर थी। दूर तक फैली हुई झील के पार की पहाड़ियाँ छोटे-छोटे टीलों के समान दिखाई देती थीं, हरे-भरे ऊँचे पेड़ नन्हें बच्चों-से दिखाई दे रहे थे, जिनकी हवा में हिलती शाखाएँ लगती थीं हाथ फैला-फैला कर बुला रही हों। उन पर झुक आये बादल ऐसे लगते थे जैसे अभी हाथ ऊँचा कर छू लेंगे। झील में किनारे-किनारे पानी को घेरती बड़े-बड़े पत्तों की कोई बेल फैली थीं, जिसमें असंख्य तारों के समान आसमानी रंग के फूल खिले हुए थे। झील के तीनों ओर का हिस्सा सुरम्य प्राकृतिक दृश्यों से घिरा

था। कहीं पथरीली चट्टानें, कहीं कँटीली झाड़ियाँ, कुछ बड़े-बड़े पेड़ भी लगे थे, जिनकी शाखाएँ पानी के ऊपर तक फैल गई थीं। एक ओर नगर निगम ने सुन्दर उद्यान का निर्माण करा दिया था। सैलानियों के बैठने के लिए बेंच और सैर के लिए छोटी-छोटी नावें थीं। नदी के किनारे-किनारे घूमने के लिए पतला-सा साफ रास्ता भी काफी दूर तक बना दिया गया था। इस रास्ते में जगह-जगह कुछ ऊँचाई पर बेंचें रखी थीं, थक जाने पर सैलानी यहाँ विश्राम कर लेते थे। बहुत से नवीन जोड़े हाथ में हाथ डाले बेझिझक घूम रहे थे। प्रशान्त और दीपिका एक पेड़ की छाया में बैठकर विश्राम करने लगे। झील के ऊपर से ठण्डी हवा के झोंके आ रहे थे। दोपहर के प्रखर सूर्य की परछाईं पानी में पड़ रही थी, लहरें उठने के कारण यह परछाईं असंख्य सूर्यखण्डों में विभक्त होकर एक अनोखी जगमगाहट उत्पन्न करती थी। जैसे अनेक सुनहली मछलियाँ झील के वक्ष पर एक साथ खेलने आ गई हों।

दीपिका ने सहसा उठकर कहा, "ऐसे कब तक बैठे रहेंगे? चलो, थोड़ा घूमें-टहलें।"

वे दोनों उठकर झील के किनारे-किनारे टहलने लगे।

"बोटिंग करोगे?" प्रशान्त ने पूछा।

"अभी? जरा धूप ढलने दो।"

चलते-चलते वे काफी दूर निकल गये, झील के दाहिने छोर का लगभग आधा फासला वे पार कर चुके। वहाँ बिलकुल एकान्त था, कुछ भूरी चिड़ियाँ चहचहा रही थीं, हवा में पेड़ों के पत्ते हिलहिल कर 'सन-सन' की ध्वनि कर रहे थे, चढ़ते हुए दिन का यह एकान्त बड़ा प्रिय लग रहा था। वहाँ से पहाड़ी की चोटी काफी पास दीख पड़ी थी। प्रशान्त ने कहा, "चलो दीप, चोटी पर चलें।"

"चोटी तक? पेट में तो चूहे दौड़ रहे हैं।"

"ओह! खाने को तो हम कुछ नहीं लाये हैं।"

"मैं तो अब बिना खाये एक कदम भी नहीं चल सकती।"

"पीछे दुकान तक तो चलना ही पड़ेगा।"

"मैं यहीं बैठती हूँ, तुम ले आओ कुछ।"

"मैं भी बैठता हूँ।"

"चलो बाबा चलती हूँ।" कह कर दीपिका उठ खड़ी हुई।

प्रशान्त उसका हाथ पकड़ कर चलने लगा।

दोनों ने दुकान में आकर भर पेट पूड़ियाँ खाईं, ऊपर से लस्सी पी।

बगीचे की एक बेंच पर बैठ कर दीपिका बोली, "तुमने बहुत पिला दिया है प्रशान्त!"

"पहले तुमसे भूख के मारे नहीं चला जा रहा था, अब पेट भरने के कारण नहीं चला जायगा।"

"नहीं, ऐसे तो मैं अभी दो मील की दौड़ लगा कर दिखा दूँ।"

"दौड़, दौड़ तो फिलहाल स्थगित कर दो। उस पहाड़ी पर चलो पहले बस।"

चलते समय प्रशान्त ने दो लिफाफों में कुछ मीठा और नमकीन रखवा लिया। दीपिका बोली, "अभी तो इतना ठूँस-ठूँस कर खाया है, फिर यह सब क्यों?"

"आधा रास्ता तय करने पर तुम्हें फिर भूख लग आये तो?"

दोनों हँसते हुए चलने लगे।

पहाड़ी के ऊँचे-नीचे ढेलों पर पैर रखते हुए कई बार दीपिका के कदम डगमगा जाते तो प्रशान्त उसे हाथ का सहारा दे कर ऊपर चढ़ा लेता। प्रशान्त आगे-आगे चल रहा था दीपिका उसके पीछे थी। पहाड़ी की चोटी के समीप पहुँचने तक ऊँचा-नीचा रास्ता लगभग समाप्त हो गया था। वहाँ से कुछ दूर की सुगम चढ़ाई थी। वे दोनों साथ-साथ चलने लगे। प्रशान्त की दृष्टि सहसा दीपिका की लम्बी, गोरी और सुडौल गर्दन पर पड़ी, जूड़े के बहुत से बाल हवा में फैल कर गर्दन पर लहराने लगे थे, ऊँचे जूड़े के नीचे ब्लाउज के गले तक खुला गर्दन का ढालू भाग और उस पर सुनहले रेशमी लोम, बस वाला दृश्य पुनः साकार

होकर उसके दृष्टि में कौंध गया। उसके अधर स्पन्दित हो उठे, वह थोड़ा पीछे रह कर उस सौन्दर्य को पीने लगा। दीपिका ने उसका हाथ खींचते हुए कहा—"साथ-साथ रहो ना।"

"इतनी दूर तक मैं तुम्हारे आगे रहा, अब तुम मुझे रास्ता दिखाओ।"

चोटी पर पहुँच कर वे रुक गये। चारों ओर आँखें घुमा कर देखा—ऊपर स्वच्छ, निर्मल, नीला आकाश फैला था, सामने विस्तृत झील अँगड़ाई ले रही थी, आसपास छोटे-छोटे पेड़ लगे हुए थे। उनमें से कुछ फूल रहे थे, कुछ झर रहे थे। नीचे दूर झील के किनारे कुछ सैलानी नन्हें गुड्डों-से घूमते नजर आ रहे थे। वे दोनों एक चट्टान पर बैठ गये। प्रशान्त कुछ पीछे हट कर बैठ गया। वह दीपिका की ग्रीवा के आकर्षक बिन्दु को निहारने लगा। दीपिका उसकी ओर मुँह करके बैठी तो प्रशान्त पुनः उसके पीछे सरक आया। उसके इस दूराग्रह से दीपिका झुंझला उठी। उसने मुड़ कर प्रशान्त की आँखों से आँखें मिलाकर कहा, "क्या बात है प्रशान्त, मुझसे छिपते क्यों हो? क्या मैं इतनी असुन्दर हूँ?"

"असुन्दर? तुम और असुन्दर?.........दीपिका, मैं तो तुम्हारी सुन्दरता में ही डूबा था।"

"तभी तो बार-बार मेरे सामने से हट जाते हो?"

"हाँ दीप!" प्रशांत ने भावाकुल स्वर में कहा, "बुरा तो नहीं मानोगी? मैं......मैं तुम्हारी ग्रीवा की सुन्दरता को देखे जा रहा हूँ। बस में तुम अगली सीट पर थी, मैंने पीछे से तुम्हारे सुडौल सिर को देखा। तुम्हारे घने बालों का जूड़ा, उसके नीचे कमनीय गरदन का। खुला भाग, वहाँ उगे हल्के रोयें...... मैं तभी से सम्मोहित-सा हो गया हूँ। मेरा जी ही नहीं भर रहा है दीपिका... मुझे इस रूप ने व्याकुल कर दिया है। मैं उससे अपनी दृष्टि नहीं हटा पाता... तुम नाराज न होना दीप!"

दीपिका के सामने का भौतिक संसार पिघलकर एक अनिर्वचनीय धुंधले आकाश में विलीन हो गया। उसकी निर्मल आँखों में मादकता उभरने लगी।

वे वाष्पपूरित हो गईं। उसने प्रशांत की मुखमुद्रा पर याचना और स्नेह के सम्मोहन का भाव देखा। वह घूम कर बैठ गई और उसने अपनी दोनों भुजाएं पीछे की ओर फैला दीं। प्रशांत ने बढ़ कर उसे अपनी बाँहों में भर लिया और उसकी अनावृत्त ग्रीवा पर अपने ओंठ रोप दिये। दीपिका ने अपनी बाँहों को उसके सिर के चारों ओर लपेट लिया।

दीपिका सिर झुकाए बैठी अपने पाँव के नाखून से जमीन कुरेदने लगी। प्रशांत उसके जूड़े और गर्दन से खोलता रहा।

"मुझसे दृष्टि नहीं मिलाओगी दीप?" प्रशांत ने भावुक स्वर में कहा। दीपिका ने एक सलज्ज हास्य बिखेरते हुए प्रशांत की ओर देखा। उसके नेत्रों में प्यार का अमृत झलक रहा था जिसे लुटाने के लिए वह व्याकुल-सी प्रतीत होती थी।

वहाँ से झील का किनारा काफी नीचा था, फिर भी वे उल्लास में शीघ्र ही नीचे उतर आये। प्रशांत बार-बार दीपिका की गर्दन में हाथ डाल देता था। दीपिका किसी भावलोक में सैर करने लगती। वे दोनों पानी के पास किनारे पर आकर बैठ गये। दीपिका प्रशांत के आगे बैठ झील के पानी में छोटे-छोटे कंकड़ फेंकने लगी। प्रशान्त ने साथ लाये नमकीन और मीठे को हाथ में निकाल कर दीपिका को घेरते हुए दोनों हाथ उसके सामने फैला दिये।

"यह क्या? तुम तो खाओ।"

"खाऊं कैसे? हाथ खाली हो तब न।"

दीपिका ने मिठाई का एक टुकड़ा उठा कर प्रशान्त के मुँह में रखा दिया। बाकी अपने हाथ में ले लिया।

खाने के बाद दोनों ने खाली लिफाफों की नाव बनायी।

"इन्हें जल में छोड़ दें, देखें किसकी नाव आगे जाती है?" प्रशान्त बोला।

"पहले तुम छोड़ो प्रशान्त!" दीपिका ने कहा।

"नहीं, पहले तुम।"

"अच्छा, दोनों साथ-साथ छोड़ें।"

प्रशान्त दीपिका के बराबर आ बैठा। दोनों ने साथ ही नौका-प्रवाहित कर दी। जल में प्रवाह न था, हवा के झोंकों से तल में छोटी-छोटी लहरें उठ रही थीं, उन्हीं के सहारे नौकाए धीमी गति से आगे बढ़ने लगीं। वे दोनों एक ही रेखा पर थीं किन्तु आगे बढ़ते-बढ़ते उनके बीच का फासला कम होता गया। वे साथ आकर चिपक गईं।

"देखो दीप, हमारी नौकाएं इकट्ठी हो गईं।" प्रशान्त ने तरल स्वर में कहा।

"हाँ प्रशान्त, वे एक साथ आगे बढ़ रही हैं।"

प्रशान्त ने दीपिका का हाथ पकड़कर दबा दिया। दीपिका भाव विभोर होकर कुहनियों के बल उल्टी लेट गई और झील के पानी में झांकने लगी। प्रशान्त उसकी बगल में बैठ कर कंकड़ उठा-उठा कर पानी में फेंकने लगा। वह उसके और नजदीक सरक आया और बाँह उसके गले में डाल दी। दीपिका ने अपने जूड़े के काँटे निकाल कर अपने काले कुंतल, पीछे झुक आये प्रशान्त के सिर पर फैला दिये। केशों का आवरण पा वह आश्वस्त हो गया और अपने ओंठ दीपिका की गर्दन पर धीरे-धीरे फिराने लगा। दीपिका के गले में उसकी भुजा का बंधन दृढ़ हो गया। उसने उसके हाथ का दवाव अपने वक्ष पर अनुभव किया। वह अत्यंत कोमल स्वर में बोली—"प्रशान्त !" उसका स्वर अति मधुर था। किन्तु स्वर में दृढ़ वर्जना थी। प्रशान्त ठिठक गया। उसने दीपिका के गले से अपना हाथ हटा लिया, किन्तु और आतुर होकर उसके केशों में मुंह फिराने लगा। जैसे वह उन्हीं में समा जाना चाहता हो, लोप हो जाना चाहता हो। दीपिका उठ कर घुटनों के बल बैठ गयी। प्रशान्त का सिर अपने अंक में भर लिया और प्यार से सहलाने लगी। प्रशान्त को लगा—माँ, भगिनी, मित्र और प्रेयसी सभी का प्यार एकत्रित होकर उसके शुष्क जीवन में झरना बन कर वह निकला है। उसने मन-ही-मन उसके शाश्वत होने की कामना की, फिर कुछ दूर बैठ दीपिका के निर्मल चेहरे को देर तक देखता रहा।

सुनहला दिन साँझ की गुलाबी में उतर आने को आतुर हो रहा था। पेड़ों की परछाइयाँ लम्बी हो गईं, पक्षियों का स्वर ऊंचा हो गया, वे नीड़ की ओर जाते हुए शोर कर रहे थे, मानो खेल समाप्त कर जाते बच्चे मस्ती में आ रहे हों। वे दोनों भी चल पड़े बस-स्टाप की ओर। प्रशान्त जमीन पर दृष्टि गड़ाये चल रहा था, वह अपने में कुछ लज्जित-सा अनुभव कर रहा था, उसने सिर झुकाये-झुकाये ही कहा—"दीपिका, मुझे क्षमा कर देना, आज मैं लज्जित हूँ।"

दीपिका ने प्यार उड़ेलती दृष्टि से उसकी ओर देखा। फिर बहुत हलके से उसका हाथ अपने हाथ में ले, उस पर अपने ओठों को रखती हुई बोली, "वह कुछ नहीं प्रशान्त, क्षमा माँगने की आवश्यकता नहीं।"

२०

मोहनलाल ने हेमा से द्वारिका के विषय में जो कुछ कहा था, उसमें असत्य की मात्रा अधिक थी। वास्तव में गीतिका आधुनिकता प्रिय न थी, वह शिक्षित थी किन्तु फैशनपरस्त नहीं। वह पूर्वतः घरेलू स्त्री थी। होटल, क्लब, पिकनिक और पार्टी तो दूर, उसे घर का काम छोड़ पति के साथ घूमने जाना भी पसंद न था। सास-ससुर के सामने ननद-देवरों को छोड़ कर जाने में भी उसे अत्यधिक संकोच लगता था। विवाह होकर आते ही वह पति और ससुर की गृहस्थी में इस तरह जुट गई थी मानो सालों से वहीं रहती आयी हो। भरे-पूरे घर में दिन भर काम रहता था, नन्हें तीन साल के देवर से लेकर बड़ा अठारह साल तक

का, बस उन्हीं पर हुक्म चलाया करते थे। ननदें घर में भाभी के रहते कोई काम करना अपना अपमान समझती थीं। दिन में चार-चार बार कपड़े बदलती और भाभी को धोने के लिए दे आती, जो जहाँ बैठा होता उसे वहीं खाना चाहिए, तिमंजिले मकान में गीतिका खाना परसने चकरी-सी घूमा करती, सास को 'बहू' नाम के इस प्राणी से स्वाभाविक द्वेष था और वह बात-बात पर बलाप करती। किन्तु जब गीतिका ने अपने नम्र स्वभाव और सेवाभाव में जरा भी अन्तर न आने दिया और न अपने पर लगाये आरोपों का कभी प्रतिवाद ही किया तो वे नरम पड़ गईं। आखिर बहू के कारण उन्हें गृहस्थी के भार से मुक्ति तो मिल ही गई थी।

पति के हाथों भी उसे अच्छा व्यवहार न मिला। मधुरात्रि को ही प्राप्त उसके व्यवहार से गीतिका के हृदय में कील चुभ गई, वह फूलों से सजी शय्या पर सिकुड़ी-सी बैठी थी। चाँद से होड़ लेनेवाला मुखड़ा घूंघट से ढँका था, मन में आने वाले क्षणों की सुखद कल्पना में सराबोर था, अपना सब कुछ अर्पण करने को आतुर मन पति की प्रतीक्षा में आकुल था।

दरवाजा खुलने की आहट हुई, तो उसने घूंघट से नजरें उठा कर देखा और फिर पलकें झुका लीं। जब उसने घूंघट को और खींचा तो मेंहदी लगे हाथों की लम्बी-पतली अँगुलियों में अँगूठियाँ चमक उठीं।

मोहन आहिस्ता चल कर पलंग पर बैठ गया, उसने गीतिका का हाथ पकड़ा, तो नारीसुलभ लज्जा से वह और सिमट गई। हाथ उसने धीमे से छुड़ाकर साड़ी की तहों में छुपा लिया। मोहन की भौंहों में बल पड़ गये। पारदर्शी साड़ी के आवरण से झलक रहे उसके सुन्दर चेहरे की ओर देख कर वह बोला, "इतना लम्बा घूंघट किसके लिए लटकाये बैठी हो? मुझे यह कत्तई पसंद नहीं।"

गीतिका ने उसके स्वर की कठोरता अनुभव की, किन्तु अपनी ओर से कुछ न कह सकी। वह उसी प्रकार बैठी रही, इस आशा में कि वह स्वयं उसका घूंघट उलट देगा। मोहन ने फिर उसका हाथ पकड़ लिया, वह कसमसायी और

फिर हाथ पीछे खींच लिया, वह सब मोहन की सहनशक्ति से बाहर था। अपनी आज्ञा के उल्लंघन को उसने अपना अपमान समझा और तमक कर खड़ा हो गया। कुछ रूखे स्वर में बोला—"यहाँ तुम्हारी जिद नहीं चलेगी, यह अच्छी तरह जान लो। तुम्हारी बहन ने जैसा मेरा अपमान किया, क्या वैसा तुम भी करना चाहती हो ? पर तुम विवाहित हो, समझी ?" फिर उसने झटक कर उसका घूंघट खींचा और हाथ कस कर पकड़ लिया।

गीतिका का हृदय काँप उठा, आँखों से बड़े-बड़े अश्रुकण सुहाग की साड़ी पर चू पड़े। उसे लगा, कोई भूचाल आ गया है, जो उसकी हरी-भरी वाटिका को तहस-नहस किये दे रहा है।

मोहन के व्यवहार के विरोध में उसने चूँ तक न की। सुबह मोहन की आँखों में विजय का मद था और गीतिका का कोमल चेहरा मलिन था। उसने इसे अपने भाग्य का खेल मान लिया और मन मसोस कर रह गई। शीघ्र ही वह समझ गई कि मोहन को केवल उसकी देह से लगाव है—उसकी भावनाएँ, कोमल हृदय, व्यक्तित्व, किसी की उसे परवाह नहीं है। वह नित्य ही काफी देर गये रात को घर लौटता और कार्यक्लान्ता गीतिका की देह को मथने लगता है। थकान की गहरी नींद से कभी न जागने पर वह गीतिका पर क्रुद्ध स्वर तथा हाथ का प्रहार भी कर बैठता है। गीतिका अपनी सेवा और नम्र व्यवहार द्वारा उसे प्रसन्न रखने का भरसक प्रयत्न करने लगी। उस पर उस धर्म, संस्कार और समाज का प्रभाव था जहाँ पति के आगे स्त्री का कोई अस्तित्व नहीं माना जाता, जहाँ पति में मिटना ही स्वर्ग की प्राप्ति है, चाहे सत्य का स्वर्ग मिट रहा हो। वह शिक्षित होकर भी भाग्य के सहारे बैठ गई थी। यह 'भाग्य' शब्द ही उसे सान्त्वना देता था।

गीतिका के कोमल व्यवहार और पतिपरायणता का मोहन पर कोई असर नहीं पड़ा। वह उसे अपनी खरीदी हुई सम्पत्ति समझता था, जो उसके उपभोग के लिए ही बनी है और उसके लिए उसे कृतज्ञ होने की कोई आवश्यकता नहीं।

दोस्तों में गर्व से डींग हाँका करता, "मैंने औरत को अंगूठे के नीचे दवा रखा है। मजाल क्या जो मेरी इच्छा के विरोध में चूँ कर जाय।"

पति की-ओर से प्यार न पाकर उसने अपने को परिवार की सेवा में डुबो दिया। दाम्पत्य-जीवन का रससिक्त आनन्द, प्रणय और दो हृदयों का मिलन कैसा होता है, यह वह कभी जान न पायी। वह मोहन की विनीत आज्ञाकारिणी बन कर रह गई। उसकी यों ही किसी बात को भी टालने का साहस न करती, इस पर भी यदि कोई भूल-चूक हो जाती तो मोहन उसे किसी के भी सामने बुरी तरह फटकार देता था। फलतः तब वह और अधिक सतर्कता बरतने लगती। मोहन को इस बात की अधिक शिकायत थी कि वह उसके पुरुष मित्रों से खुल-कर नहीं मिलती। इसके अतिरिक्त नारी मात्र के लिए मोहन के यही विचार थे कि यह जीव विधाता ने पुरुष की वासनातृप्ति के लिए ही उत्पन्न किया है। इन विचारों के कारण विवाह के पूर्व ही उसके कई-कई औरतों से अवैध संबंध थे। और अब वह रवीन के माध्यम से कंचन और हेमा से मेलजोल बढ़ा रहा था। इसलिए उसने हेमा से गीतिका के विषय में बढ़ा-चढ़ा कर बात की थी। गीतिका के स्वभाव और गुणों में तो उसे कभी अनुरक्ति नहीं रही, थोड़ी-बहुत थी तो केवल उसकी देह में थी, वह भी अन्य आधुनिक स्त्रियों के सम्पर्क से घटने लगी थी।

गीतिका की सास शीघ्रातिशीघ्र पौत्र का मुँह देखने को आतुर थी और वह प्रायः गीतिका से इसके सम्बन्ध में प्रश्न किया करती। गीतिका हर बार लज्जित हो सिर झुका लेती। हर बार नकारात्मक उत्तर पाकर सास खीझ उठती। उसके मन में नारी की एकमात्र विशेषता सन्तानोत्पत्ति करने में है और नारी के इस मूल्य को उन्होंने शीघ्र ही सिद्ध कर दिया। ग्यारहवीं बार उन्हें फिर सन्तानोत्पत्ति को सौभाग्य मिला था। वे लोकलाज से मरी जाती थीं। पास-पड़ोस की स्त्रियाँ मजाक करतीं—पोता न सही, बेटा ही सही। वे अपनी खिजलाहट, खिसियाहट और शेष गीतिका पर उतारतीं।

दीपिका बहन से मिलने आयी तो मोहनलाल का रुख बदला हुआ था। गीतिका से तो उसने स्पष्ट कह भी दिया कि उसकी बहन का वहाँ आना-जाना

उसे कतई पसन्द नहीं। पर गीतिका अपनी बहन के सम्मुख वह कैसे प्रकट करती ? अतः वह अकसर मोहन का रोषभाजन बना करती। जब दीपिका ने शहर के बड़े स्टोर में नौकरी कर ली तो सामाजिक प्रतिवाद और लांछन का एक बड़ा भाग गीतिका को भी सहना पड़ा। उसके सास-ससुर और पति ने खूब बकझक की। पास-पड़ोस की स्त्रियों में यह व्यंग्यात्मक विनोद का विषय बन गया था कि बहू की बड़ी बहन क्वाँरी है और दुकान पर खड़ी होकर मर्दों को सौदा बेचती है। गीतिका जब-जब औरतों का यह परिहास सुनती खून का घूँट पी कर रह जाती। दीपिका के विचारों से वह सहमत न थी, किन्तु उसके चरित्र पर लगाया कोई भी आरोप वह सह नहीं पाती थी। दीपिका के दृढ़ व्यक्तित्व और सुलझे निर्मल चरित्र में उसकी दृढ़ आस्था थी। दीपिका के वहाँ न आने के निश्चय से उसने सुख की साँस ली थी। यदि वह आती रहती, तो दोनों बहनों को अपमान उठाना पड़ता। अपनी दुर्दशा देख उसे अवश्यमेव दीपिका की याद आ जाती। पहले तो दीपिका के लिए ही बातचीत चलती थी। यदि वह इस घर में आती तो यहाँ कैसे रहती। न वह झुकती, न मोहन झुकता। अवश्य ही कलह होती। सम्बन्ध-विच्छेद तक की नौबत आ जाती। उस जैसी स्वाभिमानी लड़की मोहन-जैसे उजड्ड पुरुष से कैसे निर्वाह करती ? अतः दीपिका ने उचित ही निर्णय किया था। उसने अपने जीवन को इस कटुता, इस घुटन से बचा लिया। यदि वह भी बहन की सलाह मान लेती, परीक्षा के बहाने ही शादी को टाल देती, तो हो सकता था कि मोहन से उसका सम्बन्ध न होता। नहीं-नहीं, वह तो असंभव था। सब तकदीर का खेल है। जिसके भाग्य में जैसा लिखा हो। 'भाग्य' शब्द उसे फिर शक्ति दे गया। उसने मुस्करा कर दीपिका का स्वागत किया। वह दो शब्द भी नहीं बोल पायी थी कि सास ने उसे कोई काम बता कर अन्दर भेज दिया। मोहन दो-तीन बार दीपिका के सामने से निकला, किन्तु जानबूझ कर उसने उसकी उपेक्षा की। उसने उसके नमस्कार तक का उत्तर न दिया। दीपिका गीतिका की सास से नमस्ते कर उठ गई। सास ने व्यंग्य कसा—"कैसे आई और कैसे चल दीं ? कहीं……?"

दीपिका ने दरवाजे की ओर कदम बढ़ाते हुए कहा—"इधर से जरा निकली तो सोचा आपके समाचार लेती चलूँ।" फिर वह एकदम सीढ़ियाँ लाँघती उतर गई। बहन की दशा देख उसका हृदय वेदना से भर उठा। किन्तु, वह उसके लिए कुछ नहीं कर सकती। उस दिन के बाद से उसने गीतिका के घर जाना बिल्कुल छोड़ दिया।

●●●

२१

नीले आकाश को रात की काली चादर ने ढँक लिया था। कहीं-कहीं तारे चमक रहे थे। पर वे उस महानगरी से होड़ लेने में असमर्थ थे। नगरी के उस भाग में जहाँ अभिजात वर्ग की बस्ती है, विशाल आयताकार भवनों के ऊपर नीले लाइट्स और राड्स चमक रहे थे। किनारे लगे ऊँचे खम्भों पर दूधिया रंग के बड़े-बड़े बल्ब प्रकाश वितरित कर रहे थे। आती-जाती कारों की रोशनी आँखों में चकाचौंध पैदा कर रही थी। नगरी का यह भाग अभी जाग रहा था। इसे देर से सोने और देर से ही जागने की आदत है। इसकी तुलना में निम्न और मध्य वर्ग की बस्तियाँ शीघ्र सो जाती हैं। साँझ पड़ते ही नगरी के वे थके-हारे खण्ड ऊंघने लगते हैं और रात होते-होते गहरी नींद में सो जाते हैं। सूर्य-किरणों के आने से पहले यहाँ कुलकुलाहट उत्पन्न हो जाती है। गली-मुहल्ले धूप में नहाये-नहाये, तब तक का इनका जीवन-चक्र तीव्र गति से घूमने लगता है। रात्रि ऐश्वर्य, सुख, आनन्द और भोग की देवी है। वह अभिजात्य वर्ग की बस्ती है। वह जागती है और जागता है उसे भोगने वाला वर्ग। सामान्य जन के लिए तो कटुता और संघर्ष है, वैषम्य और परिश्रम है। इनके

लिए दिवस का निर्माण हुआ है। रात्रि शृंगारप्रिया रूपवती युवती है। अपने ऐश्वर्य मद में वह किस-किस पर दृष्टिपात नहीं करती।

यहाँ सुषुप्ति की नीरवता नहीं, थकान की उदासी नहीं, जागरण का कोलाहल है। मुखर और आनन्दमग्न स्त्री-पुरुषों के कहकहे। आती-जाती कारों का हॉर्न, उनके पहियों की घर्र-घर्र। उनके दरवाजे बन्द होने की फटाक-सी आवाज। होटलों और क्लबों से वायु के पंखों पर तैर कर आती संगीत की लहरियाँ। पाश्चात्य नृत्य और संगीत की मादक, उत्तेजक धुनें।

होटल एरोज का विस्तृत हॉल! बहुत ऊँची आधुनिकतम भवननिर्माण तकनीक पर बनी अण्डाकार छत। जिसके कहीं अदृश्य सोतों से चाँदनी-सा शीतल स्वच्छ प्रकाश आ रहा था। बीच में बने डांसफ्लोर के चारों ओर बैठने के लिए लगी कुर्सियाँ, एक कोने में कुछ ऊँचे मंच पर लगा आर्केस्ट्रा, वादकों की वेशभूषा विशेषतः उनकी मुखमुद्रा कुछ हास्यप्रद लगने वाली।

जीवन की गति, उसका रव जैसे आँखों में उंगली डाल कर कहता था मेरा अस्तित्व स्वीकारो। मैं हूँ···।

स्त्रियों और पुरुषों की उम्र का अन्दाजा लगाना बड़ा कठिन लगता था, जब तक उनमें चालीस-पचास साल का अन्तर न हो। यहाँ हर व्यक्ति स्मार्ट युवक और हर स्त्री रूपसी युवती लग रही थी। हॉल फैशन का अजायबघर हो रहा था। अत्याधुनिकाएँ भिन्न-भिन्न वेषों में थीं। प्रत्येक पुरुष गले में टाई बाँधा था। हेयर स्टाईल ब्लाउज और शर्ट्स, सभी अत्यन्त लेटेस्ट, वस्त्रों के अनुरूप मेकअप, ऐसे कोई भी ओंठ न थे, जिन पर लिपस्टिक न हो—पुरुषों को छोड़ कर। अभी यह फैशन उन तक नहीं पहुँचा है।

उन सब के बीच छाई दबी-दबी सी मुस्कानें, कड़वी-मीठी, बाधित और व्यंग्यमिश्रित मुस्कानें। हर क्षण मैनर्स का ध्यान। सभ्य रीति से उड़ते तीखे और कसैले फिकरे। मेजों के बीच तौल-तौल कर कदम रखते वेटर, चम्मचों-प्यालों और गिलासों की खनखनाहट, बहकी-बहकी निगाहों और सबकी अपनी-अपनी खास अदा।

डांसफ्लोर पर संगीत की धुन पर थिरकते जोड़े, एक-दूसरे के वक्ष से चिपके, कमर में हाथ डाले और आँखों में झाँकते हुए जैसे पानी के तल पर तैरते जा रहे हों। यौवन का उन्माद और रूप का सम्मोहन।

जी, होटल एरोज !

हॉल का स्प्रिंग-डोर खोल कर राजेन्द्र ने प्रवेश किया, तो सबकी आँखें उसकी ओर उठ गईं। विशेषकर स्त्रियों में उत्तेजना की एक लहर दौड़ गई। राजेन्द्र सदा इसी समय जाया करता था—लगभग ग्यारह बजे। वह शहर के कई क्लबों का सदस्य था। किन्तु समय निकालकर वह प्रायः नित्य ही यहाँ आया करता था। कुर्सियों की पंक्तियों से गुजर कर वह बढ़ा, तो अभिवादनों की बाढ़-सी आ गई। राजेन्द्र सिर झुका कर मुस्काने फेंक कहीं-कहीं एक-आध शब्द का प्रयोग करके बढ़ता गया उस सीट की ओर जहाँ रवीन-हेमा बैठे थे।

हेमा वैसे ही बैठी रही। रवीन ने उठ कर उसका स्वागत किया। उसने बैठते हुए कहा, "बोलो क्या मँगाऊं ? कम-से-कम तुम्ही साथ दो। हेमाजी तो कुछ पीती नहीं हैं।"

"बहुत थक गया हूँ। सिर्फ बीयर चलेगी।"

हेमा नें राजेन्द्र को जैसे अपनी वासनामयी आँखों के घेरे में लेते हुए कहा, "कितनी बार आपसे कह चुकी हूँ कि इतना परिश्रम मत किया कीजिए।"

रवीन ने कहा, "मैं तो आठ बजे के बाद कोई काम नहीं करता। इन्टर-टेन्मेंट भी तो जरूरी है। हेल्थ के अलावा तुमको इनका भी तो ध्यान रखना चाहिए।"

हेमा ने तुरन्त कहा, "यह तो मिस्टर रवीन इधर ले आये मुझे, नहीं तो बोर होती तुम्हारे इन्तजार में।"

"यस-यस, मैं इसके लिए रवीन का कृतज्ञ हूँ।"

"बीयर समाप्त हुई तो हेमा ने राजेन्द्र से कहा, "लेट्स हेव ए राउण्ड ?"

"नहीं भाई ! मैं तो बहुत थका हूँ। डांस नहीं कर सकता। तुम अपना कोई अलग पार्टनर चुन लो।"

"यू कम आन, रबीन !" कह कर हेमा ने रबीन की ओर हाथ बढ़ाया।

रबीन तुरन्त उठ खड़ा हुआ। वे हाथ में हाथ डाल कर फ्लोर की ओर बढ़ गये।

क्षणभर में राजेन्द्र की टेबुल पर युवतियों का जमघट लग गया। राजेन्द्र बोलता रहा और वे मिटती रहीं। वह उन्हें हँसाता रहा और वे उस पर मरती रहीं।

थोड़ी देर बाद वह एक युवती की कमर में हाथ डाले अत्यन्त कुशलतापूर्वक नाचते हुए जोड़ों के बीच घूम रहा था। जब-जब रबीन और हेमा उसके पास से गुजरते, वह हेमा की ओर कटाक्ष करता और हेमा उसका प्रत्युत्तर देती ....आपसी ऐडजस्टमेंट........एक–दूसरे को समझना........सफल और बुद्धिमत्तापूर्ण दाम्पत्य........निर्वाधता और स्वातंत्र्य।

कंचन का वहाँ जाने का यह प्रथम अवसर था। क्लब में मिस्टर दारूवाला ने उसे बताया था। मिस्टर रबीन कह गये हैं कि वे होटल एरोज़ जा रहे हैं। वह यों ही इधर आ गई थी कि थोड़ी देर और मन बहलाव रहेगा। जब वह हॉल में घुसी तो उसे कोई भी परिचित दिखाई नहीं दिया। वह अकेले वहाँ जाने पर बड़ा अजीब-सा अनुभव कर रही थी। उसकी ओर अनेक अनजानी निगाहें उठी थीं, पर वह किसी से कुछ न बोल सकती थी। आशा थी कि कोई-न-कोई परिचित मिल ही जायगा। किन्तु, ऐसा हुआ नहीं। अन्त में वह एक खाली मेज पर जा कर बैठ गई। यों ही वापस चले जाना तो और भी भद्दा लगेगा, वह वेटर की प्रतीक्षा करती हुई डांस करते जोड़ों की ओर देखने लगी। शायद कोई........तभी उसकी दृष्टि हेमा पर पड़ी और उसके साथ वाला युवक—रबीन। उसको अपना मस्तिष्क शिथिल-सा होता जान पड़ा। उसने गौर से देखना चाहा, पर इतने में वे घूमकर और व्यक्तियों के पीछे हो गये थे। हेमा की नजर अवश्य उससे मिली पर रबीन ने उसे नहीं देखा था। कंचन का

सिर भन्ना गया। उसे लगा, बैंड पर बजती हुई धुनें उसे पागल किये दे रही हैं। उसने अपनी कुहनियाँ मेज पर टिका कर दोनों हाथों से अपना सिर थाम लिया।

तभी हेमा और रवीन निकलकर वहाँ आ गये। हेमा उसके कंधे पर हाथ रखती हुई बोली, "हेलो डार्लिंग, यह जगह कैसी लगी तुम्हें? मैं यहाँ कभी-कभी आती हूँ......डांस करना तो जानती हो न?"

कंचन ने जैसे कुछ न सुना। वह शून्य दृष्टि से उन दोनों को देखती रही। उसे कुछ समझ न आ रहा था रवीन उसके साथ वाली कुर्सी पर बैठ कर बोला, "इन्हें शौक कहाँ है। हाँ, चाहें तो सीख सकती हैं।.........मैं खुद सिखा दूँगा, यह अच्छा किया कि यहाँ चली आयीं। इस शहर में यही एक अच्छी जगह है। यहाँ बड़े व्यक्तियों से भी तुम्हारी मुलाकातें होंगी।"

कंचन काष्ठमूर्ति-सी चुप थी। रवीन ने पूछा, "क्या पीओगी, बीयर या कोल्ड ड्रिंक?"

स्वर संयत करने का प्रयत्न करते हुए कंचन ने कहा, "केवल एक गिलास ठंडा पानी और कुछ नहीं।"

हेमा परिस्थिति के गांभीर्य को अनुभव कर रही थी। उसके लिए यह कोई वैसी बात न थी। किन्तु, इसके प्रति कंचन का रुख छिपा न था। वह बोली, "बहुत देर हो गई है, चलना चाहिए।"

रवीन ने लापरवाही दिखाते हुए कहा, "तुम्हारे मिस्टर तो आ जायं पहले। वह वास्तव में बहुत अच्छा डांस कर लेते हैं, देखो जरा।" उसने उंगली से फ्लोर की तरफ संकेत किया।

कंचन ने देखा, राजेन्द्र एक सुन्दरी की कमर थामे थिरक रहा है। उसने यह भी देखा कि हेमा प्रशंसापूर्ण दृष्टि से उसे निहार रही है। हेमा ने रिमार्क किया, "हिज पार्टनर इज ए गुड डांसर।"

जब कंचन रवीन के साथ कार की ओर बढ़ी, तो उसके पैरों में बेहद भारीपन था। राजेन्द्र और हेमा ने उसे 'बाई-बाई' किया तो उसका क्षीण उत्तर

शायद ही उन तक पहुँच सका हो। वह निढाल-सी सीट पर गिर पड़ी। रवीन सब समझ रहा था। उसने कंचन की पीठ सहलाते हुए कहा, "तुम बहुत उदास हो डार्लिंग! तबियत तो ठीक है?"

उसके इस अभिनय से कंचन तिलमिला उठी। उसकी रुलायी फूटने को आतुर हो आयी। उसने अपना निचला ओंठ दाँतों में दबा लिया। रवीन का पीठ सहलाता हाथ उसे रेंगती हुई छिपकली-सा अनुभव हुआ। उसके दोबारा पूछने पर उसने उत्तर दिया, "जरा सिर में भारीपन है।"

रवीन उसके द्वन्द्व को न पहचान सका। उसने बिलकुल औपचारिक स्वर में कहा, "तो तुमने डॉक्टर को फोन क्यों नहीं किया, मुझे बुलवा लिया होता, सैरीडोन तो ली है न?"

"अब ठीक है।" कंचन ने हृदय पर पत्थर रख कर कहा। वह निश्चय नहीं कर पा रही थी कि रवीन से इस विषय पर कैसे बात चलाये, कैसे अपना विरोध प्रकट करे। वह संकुचित दृष्टिकोण की न थी। जिस वातावरण में वह पोषित हुई थी, उसमें यह सब चलता था, यह वह जानती थी। रवीन की अनेक स्त्रियों से मित्रता है, यह भी उसे ज्ञात था। किन्तु वह उससे कुछ छिपाता है, इस बात ने उसके हृदय में सन्देह को जन्म दे दिया था। वह यही समझती आयी थी कि रवीन को रात देर तक काम रहता है। आज भी उसने फोन पर कहा था कि रात को एक जरूरी मीटिंग अटेंड करनी है। वह क्लब गई तो वहाँ बातों-बातों में उसे मालूम हुआ कि रवीन यहाँ आये थे और एरोज होटल गये हैं। यदि आज भी अचानक वह यहाँ न आ जाती, तो उसे रवीन के इस विश्वास घाती संबंध के बारे में कुछ पता न चलता। वह अब भी कैसा आश्वस्त और सुस्थिर होकर बैठा है······रवीन को ही अकेले क्या कहा जाय? उसकी प्रिय सखी हेमा, अब उसकी भाभी। हेमा भी उसके पति पर इस प्रकार हाथ डाल सकती है? कंचन को कई पुरानी घटनाएं और हेमा की सामान्य विचार-पद्धति याद ले आई, जिससे उसका रवीन के प्रति आकर्षक सिद्ध होता था······और उसका भाई राजेन्द्र भी किसी परायी स्त्री के साथ नाच

रहा था, जबकि उसकी विवाहिता पत्नी उसी के बहनोई की बाँहों में झूम रही थी। यह कैसा दाम्पत्य ? कैसी स्वतंत्रता, कैसा कल्चर ? कंचन की कनपटियाँ गर्म होने लगीं। उनमें चिनगारियाँ-सी उठने लगीं। उसे लगा उसकी कनपटियों पर कोई बेरहमी से हथौड़े चला रहा है। उसने हाथों की मुट्ठियाँ भींच ली। उसकी हथेलियों में पसीना आ गया। ठंडा, चिपचिपा पसीना। सहसा उसने रवीन से पूछा, "आप आज मीटिंग में नहीं गये ?"

रवीन ने निशंक स्वर में उत्तर दिया, "मीटिंग में ?···गया था पर वह स्थगित हो गई। एक मित्र यहाँ खींच लाया। यहाँ से मैं शीघ्र ही घर आने वाला था पर तुम्हारे भैया और भाभी आ गईं। उनके अनुरोध से मुझे रुकना ही पड़ा। मुझे माफ करना···" उसने साफ झूठ कह डाला। असल में वही हेमा को यहाँ ले आया था। कंचन ने कोई उत्तर न दिया। वह अनेक दुश्चिन्ताओं में मग्न हो गई।

रवीन की दिलफेंक आदतों से वह पहले भी परिचित थी। दीपिका वाला काण्ड उसके सम्मुख ही घटा था। उससे कुछ समय पहले प्रशांत की बहन प्रीति से उसकी अत्यन्त घनिष्ठता देखी गई थी। एक दिन हेमा ने भी अत्यन्त भावुक होकर उससे अपने स्नेह-सम्बन्ध के बारे में संकेत दिया था······और कंचन को रवीन से विवाह कर लेने पर सबसे अधिक जोर देने वाली भी हेमा ही थी। उसका झुकाव तो हेमेन्द्र की ओर था। तो क्या हेमा···? उसके शरीर में फुरफुरी-सी दौड़ गई।

× × ×

आज रविवार था। दीपिका स्नान कर वस्त्र पहन और हलका-सा शृङ्गार कर चलने लगी, तो माँ ने लक्ष्य किया कि उसके मुँह पर एक असाधारण सौम्यता छाई है। जैसी प्रायः उसके मुख पर नहीं होती। वह प्रायः गंभीर ही रहती थी। नौकरी करने के बाद श्रम के कारण अथवा प्रवाद सहने के कारण उसके चेहरे की रेखाएँ कोमलताविहीन हो गयी थीं। जैसे वह एक सरस

सुन्दर युवती न होकर जीवन के भार से दबी प्रौढ़ा हो। आज पुनः माँ ने उसकी मुद्रा में वही अछूती सुषमा, वही कच्चापन, वही कौमार्य सुलभ सलज्जता, वही चाञ्चल्य देखा। उसकी अनुभवी आँखों से यह छिपा न रह सका। नौकरी पर जाने से पूर्व वह नित्य तैयार होती थी। किन्तु आज के शृङ्गार में एक अपूर्व माधुर्य, एक अपूर्व सौम्यता थी। माँ स्वयं अपनी बेटी के रूप पर मुग्ध हो कर उसे देखती रह गयी और यह भी न पूछ पायी कि वह कहाँ जा रही है।

कुछ ही देर में वह लौट आयी। उसके साथ प्रशांत भी था, जिसे माँ पहले से ही जानती थी। प्रशांत ने प्रणाम किया। माँ उसे आशीर्वाद दे ही रही थी कि दोनों ने बढ़ कर उसके चरण छू लिये। माँ स्तम्भित-सी होकर उन्हें देखने लगी। तभी दीपिका ने कोमल मन्द स्वर में कहा, "माँ, हम विवाह कर रहे हैं।"

"हमें आशीर्वाद दो माँ जी!" प्रशांत ने कहा।

अकस्मात यह बात सुन माँ मूर्ति-सी रह गई। उन्हें जैसे कुछ भी समझ न आया हो। विस्मय-विह्वलता के कारण वे कुछ बोल न सकीं। प्रयत्न करके कुछ कहना भी चाहा, तो उनका स्वर भर आया। वे केवल उनकी पीठ और सिर पर हाथ फेरती रही। उनके मुँह से केवल इतना, "दीप······बेटी, ······प्रशांत!"

कुछ देर में आश्वस्त होकर उन्होंने अपने पति को आवाज दी। वे छत पर बैठे अखबार पढ़ रहे थे। पिता ने जब यह समाचार सुना तो उनकी प्रतिक्रिया भी कुछ इसी प्रकार थी। जब प्रशान्त और दीपिका ने बढ़ कर उनके पैर छू लिये तो वे इतने भावसंकुल हो गये कि इस पर सुस्पष्ट विचार भी नहीं कर पाये। आदतन उनके मुख से आशीर्वाद निकल पड़ा—"सुखी रहो।"

दीपिका को नारीसुलभ संकोच ने शीघ्र ही घेर लिया और यह भीतर चली गई। उसे माता-पिता से इतने उदार विचार की आशा न थी। यद्यपि विरोध

की आशंका भी वह कम न करती थी। वास्तव में माता-पिता का रुख कैसा होगा, इसका वह अनुमान न लगा पायी थी। उनके व्यवहार की उदारता से उनकी अनुमति प्रकट हो गई थी और दीपिका का हृदय अनिर्वचनीय सुख-संतोष से खिल उठा था। अभी तक के विरोधों की टक्कर से उसका हृदय जर्जर-सा हो गया था। अभिभावकों की कृपादृष्टि से उसे बहुत सम्बल मिला। उसकी आँखों में प्रसन्नता के अश्रुबिन्दु झलक आये। अनेक अनुभूतियाँ मिश्रित हो गई थीं। प्रशान्त को सदा-सदा के लिए पा जाने की, अपना नया स्वतंत्र घर बसाने की। परिवार के समस्त मनोमालिन्य के धुल जाने की। अब उसे समाज के विरोध की किंचित परवाह नहीं रह गई थी। वह अनुभव कर रही थी कि उसने जीवन के समस्त अवरोधों पर विजय पा ली है और जीवन हरा-भरा छायादार प्रशस्त मार्ग उसके सम्मुख पड़ा है, जिस पर वह और प्रशान्त, प्रशान्त और वह, झूमते-गाते चले जायँगे, बढ़ते जायंगे। जब उसने माता के सम्मुख यह समाचार दिया था, तो उसका हृदय शंकाओं से उद्वेलित हो रहा था, किन्तु अब उसे लगता था कि वह शीतल रेशमी बादलों के डोरे में लिपटी उड़ी चली जा रही है।

उसकी माँ प्रशान्त को मिठाइयाँ खिला रही थी। पिता ने अनेक तरह के प्रश्नों की झड़ी लगा दी थी—क्या करते हो? कितनी तनख्वाह है? भाई-बहन कितने हैं? पिता क्या करते थे? माँ कहाँ की थीं? और न जाने क्या-क्या? सभी प्रश्नों के उत्तर समाधानकारक थे, किन्तु विजातीयता का सवाल उनकी प्रसन्नता में बाधा खड़ी कर रही थी। प्रशांत अपने स्वस्थ, सुन्दर, सुगठित शरीर और भोली मुखाकृति द्वारा उन्हें पहले ही आकर्षित कर चुका था। वह उनके लिए आज नवागंतुक या अजनवी नहीं था। अपने विनम्र और सुमधुर व्यवहार से उसने पहले ही उनमें आत्मीयता स्थापित कर ली थी। उसके व्यवहार से तो वे सदा आकृष्ट होते रहे थे, किन्तु कभी उसके सम्बन्ध में आज जैसी छानबीन न की थी। विजातीय जान कर ही शायद उसमें अधिक रुचि नहीं दिखाई थी। आज जब यह प्रश्न उनके मन को मथ रहा था, तो भी

वे उसे दीपिका के सम्मुख नहीं लाना चाहते थे। वे जानते थे कि दीपिका का निश्चय बदलने का नहीं है। वैसे वे लोग दीपिका के विवाह के बारे में शंकित ही हैं। उन्होंने उसका प्रयत्न करना भी छोड़ दिया था। इतने सहजता से और इतना सा गुण वाला लड़का मिल जाना तो सौभाग्य ही था। अब केवल जाति का प्रश्न उठा कर ठुकरा देने में भी कौन-सी बुद्धिमानी होगी ? उन्होंने शान्त हृदय से विचार किया। दीपिका के उत्तम चुनाव पर भी उन्हें गर्व था।

पिता के मन में काफी देर तक विचार तूफानी लहरों से उठते और गिरते रहे। लहरें जब शांत हुईं तो सामने सिर झुकाये बैठे प्रशांत से उन्होंने प्रश्न किया, "विवाह करने का इरादा कब तक है ?'

"जब आप अनुमति दें।" प्रशांत ने सिर झुकाये विनम्र स्वर में कहा।

प्रशांत के इस उत्तर से पिता का हृदय खिल उठा। बोले, "शुभ कार्य में देर क्यों ? कार्य जितनी जल्दी सम्पन्न हो जाय तो अच्छा है।"

"जैसी आपकी इच्छा पिताजी······किन्तु विवाह हम बहुत ही सादे ढंग से करना चाहते हैं।"

"पर बेटा, सामाजिकता का भी तो कुछ ध्यान रखना पड़ता है।"

"पिताजी, आप उन्हें सहर्ष प्रीतिभोज दे सकते हैं, हमारा विरोध तो व्यर्थ के आडम्बरों और खर्चे से है।"

"बेटा, तुम उसकी चिंता क्यों करते हो ?"

"पैसा चाहे आपका जाय चाहे मेरा, पर उसे निरर्थक क्यों बहाया जाय ?''

"हो न हो दीपा ने ही इन्हें यह सुझाया होगा।" पिता कुछ बोले, उसके पहले ही माँ ने कहा।

"ऐसी कुछ बात नहीं। सादे विवाह के सम्बन्ध में हम दोनों के विचार एक जैसे ही हैं" प्रशांत से हँसकर उत्तर दिया।

"तो तुम कोर्ट में ही जाकर कर आओ विवाह।" पिता ने संयत वाणी में रोष प्रकट किया।

प्रशांत अति नम्र होकर बोला, "आपका किसी तरह जी दुखी हो हमारा उद्देश्य नहीं है। हमारा विरोध तो बेकार की रस्मों और आडम्बरों से है।"

प्रशांत का यह आग्रह उनकी इच्छा के विपरीत था। पर वे विवश थे उसे मानने के लिए। सुयोग्य वर के मिल जाने से जैसे सारी बातें गौण तो गई थीं।

माँ ने भीतर जा कर दीपिका को हृदय से लगा लिया। माँ-बेटी दोनों की आँखों से आँसू बह रहे थे।

कुछ अति निकट के सम्बन्धियों के बीच दीपिका और प्रशांत का विवाह सादगी से संपन्न हो गया। अभी तक दीपिका यही सोचती आयी थी कि वह एक भावुक लड़की नहीं है और बहुत दृढ़ हृदय रखती है। किन्तु माता-पिता से बिदा लेते समय उसके हृदय में धीमी-धीमी पीड़ा होने लगी। उसकी आँखों के सम्मुख उसका अतीत और भविष्य झिलमिलाने लगा। माता-पिता के यहाँ बिताया भोला बचपन, स्वप्न सँजोती युवावस्था......और अब एक अनजाना, अनदेखा जीवन......पर पुरुष का साहचर्य,......नये नीड का निर्माण, प्रिय को सब कुछ निछावर कर देने की उन्मत्त कामना, प्रिय में समा जाने का सुख और पिता का घर छोड़ने का दुःख दोनों समान रूप से उसमें समा रहे थे। घर का आँगन, छत, छोटे-छोटे मिट्टी के कुण्डे और उनमें लगे पौधे तक, उसे लगा सूनी आँखों से निहार रहे हैं। स्वरुचि से सँवारा पितृगृह उसकी अश्रुपूरित आँखों में छाकर अश्रुओं में और अधिक-अधिक वृद्धि करने लगा। चलते समय माता-पिता ने जब उसे गले लगाया तो उसकी हिचकियाँ बँध गईं। दृढ़हृदय प्रशांत के भी आँसू बह निकले। जो स्त्रियाँ दीपिका की सदा टीका-टिप्पणी ही किया करती थीं, वे भी अपने आँचल से आँखें पोंछ रही थीं, और गीतिका बहन से लिपट कर रो पड़ी।

माता-पिता ने तो बहुत कुछ देना चाहा था, किन्तु दीपिका और प्रशांत ने कहा, "हम स्वयं आत्मनिर्भर हैं पिताजी, आपका सब कुछ हमारा और हमारा सब कुछ आपका है, फिर इसमें यह लेने-देने का प्रसंग क्यों ?"

"पर बेटा············?"

"नहीं······" आपको अभी लम्बी वृद्धावस्था पार करनी है। आप उसके लिए कुछ रखिए। हम तो आर्थिक दृष्टि से समर्थ हैं।" दीपिका ने मधुर शब्दों में कहा और चलते समय वस्तुतः वह अपने साथ एक कपड़ों के ट्रंक के अतिरिक्त कुछ न लायी। दीपिका नौकरी करती रहे या छोड़ दे, यह प्रश्न अब उसके सम्मुख था ? इसका निर्णय भविष्य की परिस्थितियों पर छोड़ उसने एक माह की छुट्टी ले ली। प्रशांत के घर का प्रबन्ध नौकरानी के हाथ में था। अतः वहाँ सब कुछ अस्त-व्यस्त पड़ा था। यहाँ आते ही दीपिका को प्रीति की याद आयी। उसने प्रशांत से फिर प्रीति को बुलाने के लिए कहा। प्रीति की अनुपस्थिति उसे बहुत खलती थी। एकही तो भाई, उसकी शादी में भी बहन उपस्थित नहीं। प्रशांत ने वेदनायुक्त स्वर में कहा, "उसे शायद मौसी ने न आने दिया हो।"

प्रीति का एक छोटा-सा पत्र अवश्य आया था। आज भी प्रीति को बुला लेने की बात पर प्रशांत के मुख पर दर्द उभर आया। वह कुछ यही उत्तर देकर बाहर चला गया, दीपिका ने गृहस्थी के कुछ आवश्यक सामान खरीदे। पुरानी वस्तुओं को करीने से रखा और सारे घर को सुव्यवस्थित रूप में सजा दिया। प्रशांत को हर रोज ऑफिस से आने पर अब चाय-नाश्ता टेबुल पर तैयार मिलता। घर की सजावट में कुछ-न-कुछ नयापन मिलता। तेल, कंघा, टावेल, कपड़े आदि सब सुव्यवस्थित मिलते। इसके अतिरिक्त अपनी मंद मुस्कान से दीपिका उसका स्वागत करती मिलती। प्रशांत अनुभव करने लगा कि अब इस वीराने में बहार नाचने लगी है। ऑफिस से आते ही कुछ करने से पहले वह दीपिका को बाँहों में भर चूम लेना चाहता। पर, छोटी मुक्ता उसका

आँचल पकड़े रहती। नौकरानी भी उपस्थित रहती। उसे रात तक का इन्तजार बड़ा दूभर हो जाता। श्रमरता दीपिका को वह भाव विभोर हो एकटक देखा करता।

अपने अर्जित धन का अधिकांश दीपिका के पास ही था। माता-पिता ने उसे छुआ तक न था। एक तो शेष और दूसरे लड़की की कमाई, दोनों ही कारण थे उसमें वैसे उन्हें कमी भी नहीं थी। जिस दिन उसने प्रशांत के सम्मुख अपना सारा धन रख दिया प्रशांत भाव विह्वल हो उठा। उसे कुछ कहते न बना। दीपिका को अंक में भर चुम्बनों से भिगो दिया। अपनी पासबुक भी उसे ही देते हुए बोला, "दीप, तुम गृहस्वामिनी हो। यह सब व्यवस्था तुम्हारे हाथ में है। मेरा जो कुछ है, उसे भी अब तुम ही सँभालो।"

दीपिका आँखें बन्द किये उसके वक्ष से सिमटी रही।

"मेरा सब कुछ तुम्हारा ही, मैं बहुत थक गया हूँ बहुत थक गया हूँ। मुझे भी सँभालो।" कहते हुए प्रशांत ने दीपिका की गोद में अपना सिर डाल दिया। दीपिका उसका सिर सहलाने लगी। प्रशांत को लगा नारी के इन हाथों द्वारा जन्म-जन्मान्तरों की ममता और निर्भयता लौट आयी है।

मुक्ता को तो दीपिका के रूप में माँ ही मिल गई थी। दीपिका के आने के दो-चार घन्टे बाद उसने अपनी भोली वाणी में मन के संदेह को व्यक्त किया—"दीदी, तुम चली जाओगी?"

"नहीं, अब मैं हमेशा तुम्हारे पास रहूँगी।" दीपिका ने उसे अंक में भरते हुए कहा था। सुनकर बालिका प्रसन्नता से चकित रह गई और यह शुभ समाचार देने अपने भाई के पास दौड़ पड़ी, "भैया तुम्हें मालूम है अब दीप दीदी यहाँ से कभी नहीं जायँगी।"

"अँ-हँ, मुझे तो नहीं मालूम।" कहते हुए प्रशान्त ने उसे चूम लिया और हँसता हुआ दीपिका के पास आ गया। बालिका तालियाँ बजा कर नाचने

लगी। प्रशान्त और दीपिका जोर-जोर से हँसने लगे। छोटा-सा सूना घर बहारों से सदा चमन बन गया।

प्रशान्त ने मुक्ता से कहा, "मुक्ता, अब तुम इन्हें दीदी नहीं, भाभी कहा करो, तभी ये यहाँ हमेशा रहेंगी।"

"अच्छा दीदी भाभी।" वह फिर प्रसन्नता से सारे घर में डोलने लगी और अपने इस शुभ समाचार को प्रत्येक को सुना देनें को आतुर हो उठी।

प्रीति की बातें संक्षिप्त, किन्तु प्यार-भरे पत्र आते रहते। दीपिका को यह एक विचित्र रहस्य-सा लगा, जिसे वह सुलझा नहीं पायी। प्रशांत को विपरीत-सा देख उसने इस विषय को फिर कभी नहीं उठाया।

नयी गृहस्थी में सामानों की बड़ी कमी थी। इसलिए प्रशान्त और दीपिका दोनों ने मिलकर यह निश्चय किया कि अभी दीपिका नौकरी न छोड़े अकेले प्रशान्त की तनख्वाह में घर का खर्च और गृहस्थी के लिए सामान जुटा लेना संभव न होगा। दीपिका नौकरी पर जाने लगी उनका यह निश्चय सबसे अधिक नन्हीं मुक्ता को खलता। दिन भर घर फिर पहले की तरह सूना-सूना रहने लगा। न भैया, न भाभी। केवल नौकरानी। दीपिका को अपार स्नेह ने मुक्ता की नजर में नौकरानी के महत्त्व को शून्य कर दिया। घर की व्यवस्था भी ढीली पड़ने लगी। नौकरी से थक कर आने के बाद दीपिका घर की ओर ध्यान न दे पाती। पाँच बजे प्रशांत ऑफिस से घर लौटता। यह समय दीपिका की नौकरी में अधिक महत्व का होता। घर आकर वह कुर्सी पर पड़ रहता। आँखें बन्द करता, तो दीपिका के मधुर चित्र सामने आ जाते। पर आँखें खोलने पर न मेज पर चाय, न नाश्ता, न मुस्कराती हुई दीपिका। कभी-कभी तो मुँह-हाथ धोने के लिए पानी तक न रहता। वह झुंझला कर बिना कपड़े उतारे ही पलंग पर पड़ा रहता। बत्ती तक न जलाता। मुक्ता खिड़की में बैठी अँधेरा हो जाने के बाद तक भाभी के आने की राह देखा करती। कभी-कभी ऊँघते-ऊँघते लुढ़क जाती।

प्रशान्त नारी-स्वतन्त्रता का पक्षपाती होते हुए भी घर की अव्यवस्था से अप्रसन्न हो उठा। नारी-स्वतन्त्रता का अर्थ नौकरी करने में ही तो नहीं? वह दीपिका को नौकरी छोड़ देने के लिए जोर देने लगा। दीपिका अपने घर को अच्छी वस्तुओं से सजा लेना चाहती थी और साथ ही आड़े समय के लिए कुछ पैसे भी पास रखना चाहती थी। उसे आज के सुख और भविष्य की भी चिन्ता वह दूरदर्शिता थी। गृहस्थी का बोझा आगे बढ़ने पर यह पैसा उनका सहारा रहेगा। इसलिए वह प्रशान्त की बात पर ध्यान रखना चाहती थी। किन्तु उसकी नौकरी का समय सुबह और शाम या प्रशान्त का ऑफिस दोपहर में, काम की कुछ अव्यवस्था के साथ प्रशान्त को यह बात बहुत खलती थी कि वे सुबह से बिछुड़ते हैं और रात तक नहीं मिल पाते। न साथ चाय पी सकते, न खाना खा सकते, न बातें ही कर सकते। थकी-क्लान्त दीपिका जल्दी ही सोना चाहती और प्रशान्त कसमसा कर रह जाता। नारी और नौकरी को लेकर प्रायः दोनों में बहस हो जाया करती।

"नौकरी उन स्त्रियों को करनी चाहिए, जिन पर घर-गृहस्थी का भार न हो।" प्रशान्त का मत रहता।

दीपिका कहती, "नौकरी का उद्देश्य पैसा प्राप्त करने से है, और गृहस्थी के भार के साथ खर्च का भार भी बढ़ता है।"

"हाँ, यदि पति बेकार हो तो?"

"बेकार होने की बात नहीं प्रशांत, तुम तो नाराज हो जाते हो। देखो, दोनों के नौकरी करने से घर-खर्च सुविधापूर्वक चलता है और नयी-नयी वस्तुएँ खरीद कर उसे सजाया भी जा सकता है।"

"पर मैं कहता हूँ इस सजे घर में दिन भर ताला ही लटकता रहे तो फिर क्या लाभ? तुम नौकरी करती हो और बहुत-सी जरूरतमंद गरीब स्त्रियाँ नौकरी के लिए बेकार मारी-मारी फिरती हैं।" प्रशांत के स्वर में उत्तेजना आ गयी थी।

"जिस दिन तुम मेरे सामने ऐसा स्त्री सही कर दोगे, जिसे नौकरी की

जरूरत मुझसे अधिक होगी, मैं इस्तीफा दे दूँगी।" दीपिका कुछ क्रोध के साथ कह देती।

प्रशांत चुप हो जाता।

दीपिका नौकरी पर जाते समय हर क्षण यह अनुभव करती कि यहाँ वह प्रशांत की इच्छा का आदर नहीं कर रही है।

●●●

२४

दीपिका और प्रशांत के परिचितों एवं सम्बन्धियों को उनके विवाह पर उतना आश्चर्य नहीं हुआ, जितना विवाह की सादगी पर। इस सादगीपूर्ण विवाह पर लोग तरह-तरह की टीका-टिप्पणी करते थे। कुछ ही ऐसे होंगे जिन्होंने दबी जबान से इसकी सराहना की हो। कुछ ने प्रशांत को निरा मूर्ख साबित कर दिया, तो कुछ ने मोहनलाल को नीचा दिखाने की चाल चला। कुछ ने कहा, "बूढ़ा-बुढ़िया मरेंगे, तो सब इन्हीं का रहेगा। कितना चतुर है लड़का।"

रबीन और मोहनलाल दीपिका से जले-भुने थे। कहने लगे, "लड़की बड़ी तेज है। मुफ्त में ही लड़के को फाँस लिया।" दीपिका और प्रशांत ऐसी बातें सुनने के आदी हो गये थे। उन्हें इसकी कोई रंजोगम नहीं था, कुछ मित्रों ने उनकी खूब प्रशंसा की। डॉ० द्विवेदी का आशीर्वाद और समीर तथा नीलिमा का शुभकामना-संदेश भी उन्हें मिला। हेमा, कंचन और प्रशांत के मित्रों ने अनेक उपहार भेजे थे। मोहनलाल ने भी दिखावटी बधाई दे ही दी थी।

सबसे अधिक प्रोत्साहन उन्हें हेमेन्द्र से मिला था। वह तो उनकी प्रशंसा में कविताएँ ही लिख लाया था। उसके मन में अभी तक कंचन और उसके वर्ग

के प्रति रोष उबल रहा था। हालांकि कविताएँ उसने प्रशांत और दीपिका पर लिखीं थीं, किन्तु दो-चार पंक्तियों के बाद ही उनमें वर्षा भावना का रोध प्रकट हो आया था। वह अपने मन की गहराइयों में झाँकता तो आभास होता कि कंचन से प्रेम के अतिरिक्त वह उसके वैभव और उसकी कुलीनता को मन में अधिक महत्व दे बैठा था। इस आत्मोद्घाटन से उसे अपने विभाजित व्यक्तित्व से बड़ा रोष हो जाता। वह आत्मभार्त्सना करने लगता कि यह ऐसी लड़की की ओर आकृष्ट ही क्यों हुआ। कभी सोचता कि वह स्वयं को ही ठीक समझ नहीं पा रहा है। कंचन इस बीच उसे एक-दो बार मिली थी। प्रशांत की शादी में तथा एक-आध बार बाजार में भी। उसने बोलना चाहा, किन्तु······उसकी नितांत उपेक्षा कर दी। प्रशांत से उसकी घनिष्ठ मित्रता थी। यह प्रायः उसके घर आ जाया करता था। प्रशांत के प्रोत्साहन से उसने अब कुछ शृङ्गार रस की कविताएँ लिखना आरम्भ कर दी थी। उसके मित्रों में प्रशांत ही एक ऐसा श्रोतामित्र था, जो उसकी कविताएं बिना किसी आलोचना के सुना करता था।

× × ×

अब कंचन स्पष्ट अनुभव करने लगी थी कि उसके प्रति रबीन की उदासीनता दिन-प्रति-दिन बढ़ती ही जा रही है। वह कभी डांट-डपट या लड़ाई-झगड़ा नहीं करता था। न उसे किसी भी कार्य के लिए रोकता ही था। उनका व्यवहार बहुत शिष्ट और भद्र होता था। पर, वह जान गयी थी कि यह शिष्टता और भद्रता मात्र नाटक है। इसमें बेहद बनावटीपन है। यह एक ऐसा नकली चेहरा है, जिसके नीचे घिनौनी भावनाएँ छिपी हुई हैं। यह अत्यन्त सुचारु व्यवहार और औपचारिकता उच्चवर्गीय जीवन का 'मेसर्स' है, जो आयासपूर्वक सँवारी गयी है। यदि हम उस बाह्य आवरण हटावें तो उसके नीचे क्या·········एक नितांत खोखलापन, संवेदनहीनता, ईर्ष्या-द्वेष, उदासी, प्रतियोगिता, घृणा, उपेक्षा, लापरवाही, स्वार्थ और आत्मकेन्द्रीयता का भाव होगा। जब-जब उसे इन सबका ध्यान आता, वह अपने हृदय में एक निस्सीम, अन्तहीन शून्यता का अनुभव करती।

उसका शरीर शिथिल पड़ जाता। जैसे मानो किसी ने उसका रक्त चूस लिया हो। वह बेजान-सी होकर बिस्तर पर पड़ जाती। उसमें कुछ करने अथवा कहीं आने-जाने की भी शक्ति नहीं रह जाती। कभी उसके मन में विचार उठता कि हेमा से साफ़-साफ बात कर ले, किन्तु वह स्वभाव से ही भीरु थी और उचित कारण होते हुए भी किसी से विवाद खड़ा करने में डरती थी। रबीन से कुछ भी कहना बेकार था। वह उसे बात बढ़ाने का अवसर तो न देता, पर वही चतुराई से उसके संदेहों के उत्तर अवश्य दे देता। वह इतने ठंडे और विनम्र ढंग से बातें करेगा कि कंचन को वास्तविक प्रश्न को पकड़ने का अवसर ही नहीं मिलेगा। रबीन ऊपरी तौर पर यह सिद्ध करने का प्रयत्न करेगा कि कंचन का संदेह निर्मल है। वह स्वयं शांत करेगा। कभी आवेश में नहीं आवेगा, न कभी भविष्य में इस विषय को उठाएगा। सबसे अधिक शिकायत उसे राजेन्द्र से थी। उसका सगा भाई होते हुए भी वह उसकी सुख-शांति और नवीन गृहस्थी को चौपट होते देख रहा है। अपनी पत्नी को अपने बहनोई से मिलने की सारी छूट दे रखा है। कंचन अपने विचारों के आवेग में इतनी त्रस्त थी कि उसने यह सोचा ही नहीं कि राजेन्द्र शायद चाहने पर भी हेमा को इस स्वच्छंद आचरण से रोक न सके कि वह स्वयं अनेक स्त्रियों से सम्बन्ध बनाये हुए है। किन्तु रबीन हेमा से विमुख भी हो जाय तो अपनी भ्रमर-प्रकृति को छोड़ देगा क्या ? आदि-आदि।

वह पलंग पर पड़ी-पड़ी ऊब गयी फिर सहसा वह दीवार पर लगे आदमकद शीशे के सम्मुख आकर खड़ी हो गयी······या उसके रूप में बिल्कुल भी आकर्षण नहीं ? इतना भी नहीं कि वह रबीन को बाँध रखे ? अपने मुख पर उसने एक आलोचक की दृष्टि डाली। दुःख और उदासी के कारण इस समय उसका व्यक्तित्व फीका-फीका मुरझाया-सा लग रहा था, किन्तु तब भी उसमें से अनिन्द्य सौन्दर्य झाँकता था, उसकी आँखों में गहराई न थी। एक भोली निश्छलता थी। उसमें से एक सरल प्रेमपूर्ण हृदय झाँकता था। उसकी घनी धनुषाकार बरौनियों से उसकी आँखों का सौंदर्य बड़ा लुमावना लगता था।

उसकी नुकीली नाक में बारीक हीरे की लौंग झिलमिला कर पूरे चेहरे पर सौंदर्य को निखार रहा था। अधर बहुत पतले तो न थे, पर उनमें स्वाभाविक ललाई थी। गोल मुँह और उसके नीचे सुराहीदार गर्दन, जिसका पीछे का भाग ढीली चोटी से, घुंघराले बालों से ढँका था। बाहर जाते समय जब वह ऊँचा जूड़ा करती थी, तो वह स्वयं भी अपनी इस गर्दन को देर तक शीशे में देखा करती। उसके लहरदार घने केशों की चमक उसके रूप के प्रशसंकों में चर्चा का विषय रखती थी। उसने अपनी देह पर दृष्टि डाली, कहीं किसी आर्कषण में कमी नहीं, हालांकि अब वह कॉलेज़ के समय का चुस्त पाजामा और कुर्ती नहीं पहनती थी। अब तो उसका शरीर साड़ी से ढँका रहता, ब्लाउज से पीठ का अधिकांश भाग झाँकता रहता। वह जब कभी बाहर निकलती तो साड़ी के पल्लू को पूरी पीठ ढँकने योग्य ओढ़ लेती थी, फिर भी पीली साड़ियों से उसकी सुडौल बाँहों और पीठ का सौन्दर्य बरबस लोगों की निगाहें खींच लेता। साड़ी पहनने से उसमें अधिक सौम्यता आ गयी और कुछ कद भी लम्बा दीखता था।

वह देर तक शीशे के सामने खड़ी अपने प्रतिबिम्ब की परायी और अपनी दृष्टि से देखती रह धीरे-धीरे आँचल खिसक कर नीचे आ गिरा। अपनी मांसल देह का आकर्षण उसे स्पष्ट दिखायी देने लगा, उसमें कमी कहाँ? उसमें तो और अधिक वृद्धि हो गई है। उसे लगा कि वह अपने देह से अलग उसे हटा कर खड़ी और देह कोई उससे भिन्न दूसरी वस्तु है। यद्यपि उसे वह प्रिय है, क्योंकि वह उसके लिए बहुत उपयोगी है, अनिवार्य है, आवश्यक है। कंचन जो कुछ है इस देह के माध्यम से ही है। वह स्वयं उसकी सुन्दरता पर मुग्ध है।

स्त्री अपने रूप की प्रशंसा सुन कर छली जाती थी, अपनी कल्पना में वह इसे सदा बड़ा-चढ़ा कर देखती है और दूसरों के द्वारा भी वह चाहती थी। दृश्य की प्रशंसा चाहे झूठी ही क्यों न हो किन्तु उसे शीघ्र प्रसन्न करने का एक हथियार है, खुशामद है, यह सब समझते हुए भी यह क्यों छली जाती है? कंचन ने साड़ी फेंक दी और दौड़ कर पलंग पर गिर पड़ी। तकिये में मुँह धंसाया तो वह अश्रुजल से भींगने लगा। हमारी अतिशय विवशता, दुःख,

अकेलापन, सब में यदि साथ रहता है, तो यही आँखों का पानी। हृदय की तीव्र पीड़ा के कारण कंचन के तकिये के सिरे अपनी मुट्ठियों में भींच लिये और उन्हें ऐंठने लगी। बिना सूचना दिये उसके कमरे में कोई न आता था, किन्तु नौकर और सास के सुन लेने के डर से वह खुल कर रो भी नहीं सकती थी। रोते-रोते उसकी हिचकियाँ बँध गयीं। बड़ी मुश्किल से उसने अपने को संयत किया। कुछ शांत हुई और अर्द्धचेतन-सी पड़ी रही। उस अवस्था में भी थोड़े-थोड़े समय के बाद उसे हिचकी आ जाती। वह ऊबने लगी थी कि किसी की आहट सुन कर चौंक कर उठ खड़ी हुई। रवीन गौर से उसके मुँह की ओर देख रहा था। पास आकर उसने कंचन के कंधे पर अपना दायाँ हाथ रख दिया।

"अरे तुम ऐसे क्यों पड़ी हो ? क्या बात है ?"

कंचन उससे छूट कर साड़ी लपेटने लगी।

रवीन ने फिर कहा, "बोलती क्यों नहीं, क्या हुआ है ? लगता है रोती रही हो। सारा मेकप खराब हो गया है।"

"कुछ भी नहीं।" कंचन ने क्षीण स्वर में कहा।

रवीन स्थिति को समझ गया था। कंचन के अकेले में रोते रहने का कारण उससे छुपा नहीं रहता था। उसने अपने को एकाएक बदल लिया। क्षण भर के लिए जैसे वह कंचन के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित हो गया और उसे अपनी बाँहों में घेरता सोफे तक ले गया और बैठ कर उसकी उदासी का कारण पूछने लगा। कंचन बड़ी कठिनता से अपनी रुलायी रोक रही थी। उसने शान्त स्वर में कहा, "यों ही······मन कुछ उदास था।"

रवीन हँस पड़ा, "भई वाह, मन जरा उदास हुआ और तुम रोने लगी। मैं तो डर गया था कि कोई गम्भीर बात तो नहीं हो गयी। वैसे मैं यह भूल गया था कि औरतों के आँसू पलकों में ही अटके रहते हैं और क्षण भर में टपक पड़ते हैं कच्चे धागे में बँधे मोतियों की तरह।"

कंचन कुछ न बोली, तो वह फिर पूछने लगा, "तुम्हारी उदासी का कारण क्या था ? क्या यहाँ किसी ने कुछ कहा ?"

कंचन की स्थिति बड़ी विचित्र हो रही थी। जो बात गले तक थी, रबीन का व्यवहार के आगे जबान तक नहीं आ रही थी। उसने और भी दुखी होकर कहा, "बात तो कुछ भी नहीं, वैसे ही मन जरा खराब हो रहा था।"

रबीन ने फिर हँसने का अभिनय किया, "यह भी खूब आदत है तुम लोगों की। यों ही मन खराब हो जाता है और फिर यों ही आँसू आ जाते हैं...... सब कुछ यों ही......" कहते हुए उसने कंचन को खींच कर अपनी गोद में डाल लिया। उसके चेहरे को हाथों में सहलाता हुआ बोला, "तुम उदास मत हुआ करो। तुम्हें उदास देख कर मुझे बड़ा दुःख होता है।"

उसने कंचन की पलकों पर ओंठ रख दिये। कंचन अनुभव शून्य होकर उसकी बाँहों में पड़ी रही, फिर धीरे-धीरे उठी और बाहर चली गयी।

मुँह-हाथ धो, कपड़े बदल और शृङ्गार करके वह आयी, तब भी उसके मुँह से खिन्नता के बादल छंटे नहीं थे। यह सब तो पति-पत्नी के सम्बन्धों में साधिकार और सहज हो जाता है। इससे आत्मिक वैसी ही आत्मतृप्ति मिलती है जैसे रबर को पानी में डाल कर निकाल लिया जाये।

नौकर मेज पर चाय लगा गया था और रबीन कंचन की प्रतीक्षा कर रहा था। कंचन ने चुपचाप चाय ढाली और रबीन की ओर कप बढ़ा दी। एक कप में स्वयं भी पीने लगी। चाय का घूंट भरते हुए वह बोला, "जल्दी तैयार हो जाओ, चलो थोड़ा क्लब हो आयें। तुम्हारा जी बहल जायगा।"

वह स्वयं गाड़ी निकाल लाया और कंचन को साथ लेकर चल पड़ा। कार कोलाहल भरे रास्ते से गुजरने लगी, तो कंचन का ध्यान कुछ बँट गया। वह आश्वस्त हो गई। रबीन ने कार एक मोड़ पर घुमायी, तो उसने पूछा "इधर कहाँ जा रहे हो?"

"तुम्हारी भाभी को भी ले लें न। वे प्रायः रोज ही क्लब जाती हैं।" रबीन ने अति सहजता दरशाते हुए कहा।

कंचन के हृदय पर पुनः आघात लगा। फिर भी उसने अनिच्छापूर्वक कह दिया, "हाँ।"

कार रुकने की आवाज सुन हेमा तुरन्त बाहर निकल आयी। वह सज-धज कर तैयार थी, चहकती हुई बोली, "हेलो रबीन, आ गये?" तभी उसकी दृष्टि कंचन पर पड़ी। उसने कंचन के पास आकर कहा, "कहाँ जा रही हो कंचन? सिनेमा-सुनेमा का प्रोग्राम है क्या?"

जवाब रबीन ने दिया, "नहीं क्लब ले जा रहा था इन्हें। रास्ते में ख्याल आया, तुम्हें भी साथ लेता चलूँ।"

"कंचन के होने से बड़ी अच्छी कम्पनी रहेगी, मैं भी जाने ही वाली थी। ड्राइवर गाड़ी लेने गया है।" कहते हुए हेमा कार का दरवाजा खोल पिछली सीट पर बैठ गई। उसने कंचन को भी अनुरोधपूर्वक अपने पास बुलाते हुए कहा, "तुम्हें पास बिठा कर क्या मिस्टर रबीन ठीक के गाड़ी चला पायेंगे?"

रबीन हँस पड़ा, कंचन बिना कुछ बोले पिछली सीट पर आकर बैठ गयी। हेमा ने उससे बोलने का प्रयत्न किया, किन्तु उसकी अन्यमनस्कता देख कर चुप रह गई।

क्लब में पहुँचने पर रबीन परिचितों से जैसे घिर गया। हेमा कंचन को लेकर एक ओर चली गई। उसने उसका परिचय अनेक स्त्री-पुरुषों से कराया, कंचन देख रही थी कि हेमा वहाँ बहुत लोकप्रिय है। उसका व्यवहार स्त्रियों से तो है ही, पर पुरुषों से भी बहुत खुला और अनौपचारिकता लिए हुए है। यद्यपि वह शिष्टाचार का सीमाओं का कठोरता से पालन करती है, पर उसके व्यवहार में कुछ ऐसी विशेषता है, जो अन्य स्त्रियाँ चाहने पर भी न ला पावेंगी। क्योंकि वे इस वर्ग के स्वच्छन्द जीवन में बहने पर भी अपनी नारी सुलभ लज्जा और झिझक का पूरी तरह परित्याग नहीं कर पाती थीं। कम-से-कम अनेक पुरुषों के बीच और सभा-समाज में उनकी झिझक दूर नहीं हो पाती थी, किन्तु हेमा इन संकोचों की सीमा से ऊपर उठ चुकी है। वह इन्हें पिछड़ापन मानती है, वह उन्मुक्त भाव से विचरण करती है, उसके जीवन-साथी से ऐसे अवसर के लिए उसे प्रोत्साहन ही मिलता रहता है। वह क्लब के किसी भी सदस्य

को देखते ही पुकार लेती है, उनसे खुलकर विनोद और परिहास करती है, खिल-खिला कर हँस पड़ती है, वह जीवन का आनंद खुल कर भोगती है।

कुछ स्त्रियाँ उसे पसन्द नहीं करतीं, पर उसके दबंग और प्रभावोत्पादक व्यक्तित्व या रोब उन पर भी छाया है। उसके सामने पड़ते ही वे हीन भावना से ग्रस्त हो जाती है। उसकी उपस्थिति से उन्हें एक चुभन-सी होती है जैसे शरीर में कहीं कोई फाँस गड़ गई है। ऐसी फाँस जो उन्हें बेचेन करती है, पर निकलती नहीं, किन्तु, हेमा के प्रति अपनी इस अरुचि को वे स्पष्ट नहीं कर पातीं, अपने व्यवहार में वे उससे बड़ी शिष्टता और घनिष्ठता का प्रदर्शन करती हैं। वे उससे मन में ईर्ष्या का भाव रखते हुए भी उसके व्यवहार, वेशभूषा और फैशन का अनुकरण करती थीं।

रबीन आकर उन्हें कैंटीन में ले गया। वैसे तो वह वहाँ ड्रिंक ही करता था यह कंचन को भी मालूम था, किन्तु आज उसके साथ होने से कोकाकोला का ही आर्डर दिया। साथ में चिप्स और कटलेट्स को भी लाने को कहा। इतने में ही एक वैरे ने आकर कहा, "मिस्टर रबीन का फोन आया है।"

रबीन ने फोन उठा कर कहा, "क्षमा करना मुझे अभी वकील से मिलना होगा उसने एक आवश्यक कार्य से बुलाया है। तुम फोन करके घर से ड्राइवर को बुलवा लेना नहीं तो हेमाजी स्वयं ड्राइव कर लेंगी।"

कंचन ने उसी समय पर चलने की इच्छा प्रकट की, तो उसने कहा, "मुझे फ़ौरन जाना होगा, और फिर तुम कुछ देर ठहरो। तुम्हें क्या जल्दी है? यहाँ थोड़ा मनोरंजन होगा।"

हेमा ने भी आग्रह कर उसे रोक लिया। रबीन चला गया। कंचन वैसे ही उदास थी। रबीन का अचानक फोन आने और उसके यों चले जाने से वह और भी खिन्न हो उठी। हेमा कहीं टिक कर नहीं बैठती थी। चहकती-फुदकती फिरती थी। साथ में कंचन को भी घसीटती बिलियर्ड सभा में जाकर

उस पर हाथ आजमाया, फिर ब्रिज खेलते एक खिलाड़ी से पत्ते लेकर दो-तीन चालें चली और उसका खेल बिलकुल बिगाड़ कर चली आयी।

× × ×

दीपिका अपने जीवन पर दृष्टि डालती, तो काफी संतुष्ट होती। लगता कि जीवन-क्षितिज से काली विषादमयी बदलियाँ छँट गई हैं, किन्तु क्या वह वास्तव में सुखी है? इस प्रश्न का उत्तर पाने में वह उलझ जाती। प्रशांत से विवाह करके तो उसने ठीक ही किया था। यह तो स्पष्ट था कि वह उससे प्रगाढ़ स्नेह रखता था, उसके नौकरी करने से वह उससे प्रति अतिरिक्त आभार अनुभव करता, यद्यपि उसे दीपिका का नौकरी करना पसन्द न था। दीपिका से वह बार-बार कहता कि नौकरी के कारण वह घर की व्यवस्था ठीक से नहीं कर पाती है। दीपिका उसके इस कथन को या नौकरी को लेकर उसके वाद-विवाद को उसका एक स्नेह ही समझती आयी थी। नौकरी वह अपने स्वयं की जिद से करती जा रही थी।

दीपिका को जीवन में अनेक अभाव, अनेक अपूर्णताएं खलती, स्टोर का कार्य उसे थका देने वाला लगता। विशेषतः सुबह और शाम घर पर भी कार्य-व्यस्त रहने के कारण अब प्रशांत की भाँति वह भी अनुभव करती थी कि उसे अपने घर को ओर अधिक ध्यान देना चाहिए। रात को वह अँधेरा होने पर ही घर लौटती, तब वह थकान से इतनी भरी होती कि गिलास भर पानी पीने का भी मन नहीं करता। कहीं घूमने-फिरने जाने की तो बात ही दूर। आते ही घर की बिखरी वस्तुओं को ठीक करके खाना बनाती, काम की भाग-दौड़ में साढ़े नौ-दस बज जाते। प्रशान्त बातें करना चाहता, पर वह ऊँघने लगती। वह झुंझला उठता।

अब दोनों ही स्पष्ट अनुभव करने लगे थे कि उसमें दूरी बढ़ती जा रही है। स्नेह की वह प्रगाढ़ता, वह माधुर्य घटता जा रहा है। इस मनःस्थिति का एक मुख्य कारण दीपिका की नौकरी है, यह स्पष्ट समझते हुए भी अब वे नौकरी को

लेकर कोई बात नहीं करते थे। अब घर का आर्थिक ढाँचा इस प्रकार बन चुका था कि वे समझने लगे थे एक अकेले के वेतन पर गृहस्थी सुचारु रूप से नहीं चल सकेगी। दीपिका देखती कि यौवन की सभी उमंगें, सभी सलोनी कल्पनाएँ, सभी मधुर स्वप्न, यथार्थ की सिल पर पिसे जा रहे हैं। जीवन की विषमताएँ न उनके लिए समय छोड़ती हैं, न शक्ति। छात्र जीवन में उसकी बड़ी मधुर कल्पनाएँ और आकाक्षाएँ थीं। छोटी-सी शान्तिपूर्ण गृहस्थी होगी। साफ-सुथरा और हवादार घर होगा। स्वस्थ्य-सुन्दर-हँसमुख और अनुरागी पति होगा। दो-चार वर्ष बाद गोद में.........शादी के तुरन्त बाद वे सुरम्य पहाड़ी स्थानों की सैर करने जायेंगे और फिर हर साल, दो साल में बर्फ पर दौड़ते हुए प्रिय उसे पकड़ लेगा। कभी किसी झरने के नीचे दोनों भाग उठेंगे। कभी समुद्र की लहरों में हाथ पकड़ कर चलते जायेंगे। कभी शीतल चाँदनी में मखमली घास पर वह पति की गोद में लेटी होगी। उसके पास बहुत-सा अवकाश होगा जिसमें वह अपने नृत्य और संगीत के शौक पूरे कर लेंगे। पर, सपने 'सपने' ही रहे हैं।

वह नौकरी पर जाते समय रास्ता तय करती, तब ये सारी बातें उसकी सारी-सहेलियाँ बन उसके आसपास घूमने लगती। उसे कभी-कभी खीज होती, क्यों उसने अपने विवाहित जीवन के लिए इतने सुखद स्वप्न देखे? किन्तु सपने न तो पकड़े जा सकते हैं और न भुलाये ही जा सकते हैं। संघर्ष, वह संघर्षमय जीवन की आदी हो चुकी थी। बड़े प्रयत्न से उसने अपने स्वभाव की प्राकृतिक मृदुलता को बनाये रखा, आशा और साहस को कभी नहीं छोड़ा। सान्त्वना के लिए जब वह अन्य लोगों के जीवन पर दृष्टिपात करती, तो उसे कोई संतोष नजर न आता। प्रशान्त जिस घर में रहता था, वह बुरा तो नहीं था, किन्तु सर्वसुविधासम्पन्न न था। मकान पुराना था, जिसमें एक आगे का कमरा ही पक्का था, बाकी कमरे कच्चे थे। दीपिका कई बार घर बदलने को कहती पर प्रशान्त ध्यान न देता। एक तो उसे इस घर से, इस जगह से कुछ विशेष मोह था। बचपन से लेकर आज तक का संघर्षमय जीवन उसने यहीं बिताया था।

दूसरे, मकान का किराया कम था। नये मकान के लिए वेतन का एक बड़ा भाग किराये में चला जायेगा। फिर तो वह दीपिका से नौकरी छोड़ने को कह ही न सकेगा।

आज दीपिका स्टोर से लौटी तो बेहद थकी थी। उसका सारा अंग-अंग टूट रहा था। घर तक भी वह बड़ी मुश्किल से चल कर आ सकी थी। घर आयी, तो प्रशान्त नहीं था। मुक्ता खिड़की में बैठी ऊँघ रही थी। नौकरानी पास-पड़ोस में कह कर चली गई थी। वह कहाँ तक रुकती। 'मुक्ता', दीपिका ने आवाज दी तो वह उठ कर दौड़ी और भाभी से लिपट गयी। भाभी ने स्नेह से गले लगाया, तो उसकी रुलायी फूट पड़ी। दीपिका उसे गोद में बिठा कर सहलाती रही। काफी देर में बच्ची स्वस्थ्य हुई तो बोली, "कितनी देर कर देती हो भाभी।"

"तुम्हारे भैया नहीं आये ?"

"हाँ।" मुक्ता का संक्षिप्त उत्तर था।

दीपिका सोचती आ रही थी कि घर जाकर वह एकदम बिस्तर पर सो जायगी और प्रशान्त से आज पहली बार चाय बना कर देने के लिए कहेगी। चाय पीने से शायद वह कुछ शक्ति का अनुभव करे। पर, यह क्या ? प्रशान्त तो अभी तक आया ही नहीं। सवा आठ बज रहे हैं। इतनी देर कैसे ? उन्हें घर की चिन्ता ही नहीं। मेरे आने के बाद से ही लापरवाह हो गये थे। किन्तु अब तो यह लापरवाही बढ़ती ही जा रही है। मालूम है कि मैं अँधेरा होने से पहले नहीं आ सकती। नौकरानी पाँच बजे के बाद पाँच मिनट भी रुकने को तैयार नहीं रहती। छोटी-सी मुक्ता पूरे घर में अकेली शीघ्र ही उसका क्रोध चिन्ता में बदलने लगा। आज इतनी देर कैसे हुई उन्हें ?

मुक्ता को खिला-पिला कर उसने सुला दिया। स्वयं बिना कपड़े बदले ही पलंग पर पड़ गयी। बार-बार उसकी आँखें दरवाजे की ओर उठ जातीं। कान किसी के पैरों की आहट के लिए आकुल। शरीर शिथिल।

घर में घुसते ही प्रशान्त ने देखा, सारा घर अस्त-व्यस्त पड़ा है। दीपिका सुबह जो साड़ी पहन कर गयी थी, उसे ही पहने सो रही है। वह बड़े धीमे कदमों से अन्दर आया था दीपिका तन्द्रा की दशा में जान न पायी। चौका-चूल्हा भी ठंढा पड़ा था। यह सब देख वह अपने जूते तक उतारने को भूल गया। दीपिका के पलंग पर बैठ उसने धीरे से पुकारा—"दीप!"

दीपिका ने आँखें खोली और फिर क्षण भर में बन्द कर ली। आँखों के किनारों से बहता गरम जल गालों तक आ गया। प्रशान्त ने उसके सिर पर हाथ रखा, "अरे तुम्हें तो बुखार है ?"

"हाँ।" दीपिका के मुँह से कुछ अस्पष्ट शब्द निकले।

"दीप! आज मुझे बहुत देर हो गयी। एक तो ऑफिस में अधिक काम था, दूसरे वहाँ से निकला तो हेमेन्द्र मिल गया। वह अपने घर ले गया...... कब से आया बुखार ?" दीपिका का सिर और गरदन सहलाते हुए उसने पूछा।

अति क्षीण स्वर में दीपिका ने उत्तर दिया, "अभी शाम से......वैसे तो दोपहर से ही बदन टूट रहा था।"

दीपिका के मना करने पर भी वह उसका बदन सहलाता रहा। मना करने पर भी उसने उसे चाय बना कर दी। बुखार कम होने के लिए एकाध टैबलेट भी खिलायी।

वह कपड़े बदल कर उसके पास फिर आ बैठा। धीरे-धीरे उसका बदन सहलाता रहा। दीपिका के बार-बार मना करने पर भी वह उसके पास से नहीं हटा।

दीपिका दो-तीन दिन बुखार में ही पड़ी रही। पर काफी कमजोर हो गयी। दो-तीन दिन प्रशान्त ऑफिस से छुट्टी लेकर उसके पास ही रहा। दोनों ने अनुभव किया कि बीमारी ने उनके बीच बढ़ते हुए फासले को कम कर दिया है।

प्रशान्त ने दीपिका का सिर सहलाते हुए कहा, "दीप, अब मेरी एक बात......"

दीपिका ने प्रश्न भरी नजरों से उसे देखा।

"दीपिका, अब तुम सर्विस छोड़ दो तो कैसा रहे ?"

दीपिका चुप रही। वह स्वयं अब अनुभव कर रही थी कि नौकरी के कारण उसका घर तो अस्त-व्यस्त रहता ही है, प्रशान्त भी दूर होता जा रहा है। किन्तु, बिना नौकरी के घर का आर्थिक ढाँचा कैसे जम पायगा ? वह इसी उलझन में थी। नौकरानी छुड़ा देंगे, तब भी कितने की बचत होगी। मुक्ता को अच्छे स्कूल में भेजना चाहें, तब भी पैसे अधिक चाहिए। अभी तो गृहस्थी में ही कितनी चीजों की कमी है। यदि प्रीति आ जाय तो घर तथा मुक्ता को सँभाल लेगी। इस स्थिति में वह कुछ दिन और नौकरी कर सकेगी। प्रीति की बात तो उसके मन में कई बार उठी, किन्तु प्रशान्त को यह प्रसंग अप्रिय जान उसने नहीं उठाया। आज साहस करके उसने फिर प्रीति की बात छेड़ी, "क्यों नहीं हम प्रीति को बुला लें ?"

प्रीति का नाम आते ही प्रशान्त के मन पर उदासी छा गयी। उसने उदास शब्दों में ही कहा, "दीप, अब तुमसे क्या छिपाना ? प्रीति को यहाँ लाना अब बड़ा कठिन है।"

दीप विस्फारित नेत्रों से उसकी ओर देखने लगी। वह आगे की बात जानने के लिए व्याकुल-सी हो रही थी।

प्रशान्त ने दुःख में डूबे शब्दों में कहा, "प्रीति, कुँआरी माँ बन चुकी है। अब उसका एक लड़का है। उसे मौसी के यहाँ यह कह कर छोड़ रखा है कि वह विधवा है......और मैं कर भी क्या सकता था। रबीन के पास जाने का तो कोई अर्थ ही नहीं था......वह तो उल्टे और बदनाम ही करता। अपना दोष तो देखता ही नहीं।"

दीपिका को यह सुन कर आश्चर्य बिलकुल नहीं हुआ, पर प्रीति के लिए दुःख बहुत हुआ। वह करुणा में भर कर बोली, "पर बेचारी प्रीति क्या जन्म भर यह सजा भोगती रहेगी ?"

"फिर क्या करूं ? मेरे तो कुछ समझ में नहीं आता।"

"क्यों नहीं, हम प्रीति की शादी कर दें।"

"शादी के लिए प्रयत्न भी करें, तो बच्चे का प्रश्न है और यदि सब कुछ सच बता दें, तो शादी होना कठिन है।"

दीपिका कुछ देर तक चुपचाप सोचती रही। फिर बोली, "समस्या तो कठिन है, किन्तु उसके लिए कुछ करना तो होगा ही। प्रीति को इस तरह घुटा-घुटा कर क्यों मारा जाय।"

प्रशान्त चुपचाप बैठा शून्य में ताकता रहा।

दीपिका बोली, "सबसे पहले प्रीति को तुम यहाँ बुलाओ। हम प्रयत्न करके उसकी कहीं नौकरी लगवा देते हैं।"

"नौकरियाँ इतनी आसान कहाँ दीप?"

"प्रयत्न करने पर मिल ही जायगी। शायद मेरे स्टोर में एक जगह खाली होने वाली है।"

"और बच्चे का क्या होगा?"

"कुछ दिन बच्चे को मौसी के पास ही छोड़ दीजिए। जब प्रीति कुछ जम जायगी, तब उसे बुला लेंगे।"

"लोग जब उसका परिचय पूछेंगे, तो क्या कहेंगे?"

"कह देंगे, मौसी का कोई रिस्तेदार है। इसी तरह कुछ भी।"

"मैं सोचता हूँ कि हेमेन्द्र से प्रीति की शादी की बात चलायी जाय, तो कैसी रहे?"

इसके लिए आप जल्दी मत करिए। पहले प्रीति को आत्मनिर्भर होने दीजिए। साथ ही एम० ए० भी कर लेने दीजिए। हो सकता है, तब हमें हेमेन्द्र से भी अच्छा कोई और मिल जाय।"

कुछ सोच-विचार करने के उपरान्त तथा दीपिका के बार-बार आग्रह करने पर प्रशान्त स्वयं जाकर प्रीति को ले आया। बच्चे को कुछ दिनों के लिए मौसी के पास ही छोड़ दिया। मौसी ने पहले तो आपत्ति की, किन्तु बाद में राजी हो गई, विशेषकर जब प्रशान्त ने बच्चे के लिए इतना खर्च भेजने की बात कही,

जितने में मौसी का भी काफी काम चल सकता था। प्रीति बड़े उदास मन से बच्चे को छोड़ पायी थी। हालांकि रवीन की बेवफाई का जब भी ध्यान आता, वह बच्चे से घृणा कर उठती। पर, यह घृणा उसके सूने जीवन में अधिक देर न टिक पाती। किलकता शिशु उसके मन में शीघ्र ही ममता भर देता। आठ-दस महीनों का वीरान जीवन उसने इस शिशु के सहारे ही तो काटा था।

जब वह प्रशान्त के घर आयी तो उसे अपना ही घर नया और पराया-सा लग उठा। अपनी दीदी को पाकर मुक्ता की प्रसन्नता का ठिकाना नहीं रहा। वह हर समय उसका पल्लू पकड़े रहती। उसे सदा यह भय बना रहता था कि कहीं दीदी फिर उसे छोड़कर न चली जाय। दीपिका प्रीति को अधिक से अधिक प्यार देती। उसे भरसक प्रसन्न रखने का प्रयत्न करती। पर प्रीति अब पूरी तरह बदल चुकी थी। अब यह कॉलेज के दिनों की खिलखिलाती चंचल युवती छात्रा नहीं थी। अब तो वह धीर, गम्भीर और विषाद से ढकी प्रतिमा मात्र थी! गहरे-से-गहरे मजाक पर भी बहुत थोड़ा-सा मुस्करा पाती। प्रशान्त और दीपिका दोनों ही प्रीति को पहले की सी हँसमुख बनाने के लिए काफी प्रयत्न करने लगे। हेमेन्द्र भी प्रीति के पास देर तक बैठा रहता और दुनिया भर की बातें करता रहता। उसे प्रीति से विशेष सहानुभुति थी। वह उसके दुःख को स्पष्ट तो नहीं समझ पाया था, किन्तु कोई गहरा दुःख प्रीति को है, इसका ज्ञान उसे अवश्य था।

हेमेन्द्र भी नौकरी लग जाने के बाद अपने स्वभाव को काफी बदल चुका था। धनी वर्ग से उसे घृणा तो अब भी थी, किन्तु अब उनकी आलोचना में घंटों नहीं बिताता था। प्रीति के सम्पर्क में आकर उसके शुष्क हृदय में प्यार की हलकी-सी धारा बह निकली थी। वही उसे मृदु बनाये जा रही थी। अक्सर अपने खाली पीरियड में वह प्रशान्त के घर आ जाता।

आज जब उसने प्रशान्त के घर में प्रवेश किया तो घर बिल्कुल खाली था। मुक्ता तक नहीं थी। प्रीति आँखें बन्द किये सो रही थी। शायद तन्द्रा में थी।

हेमेन्द्र के आने का उसे ज्ञान न था। वह चुपचाप कुर्सी पर बैठ गया। प्रीति की ओर एकटक देखने लगा। प्रीति का भोला और उदास चेहरा नींद में और भी अधिक भोला लग रहा था। पुतलियों पर ढँकी झीनी पलकें, लम्बी बरौनियाँ आँखों के सौन्दर्य का आभास दे रही थीं। अस्त-व्यस्त बाल, साँसों के साथ सीने का उठना और गिरना, गोरे-गोरे नाजुक पैर देखकर हेमेन्द्र की आँखें जैसे जाम हो गईं। वह पलक झपकाना भूल गया। कवि हेमेन्द्र का हृदय कविता से भर उठा—मृदु कविता से। इतने मधुर क्षणों का अनुभव उसने आज तक नहीं किया। कंचन के प्रस्ताव पर वह मृदु अवश्य हुआ था, पर आज का वह अनुभव कुछ और ही था। उसका हृदय गुदगुदी से भरने लगा। वह उठा और प्रीति के काफी नजदीक आ खड़ा हुआ। प्रीति ने धीरे से पलकें ऊपर उठा दीं। उसे हेमेन्द्र के आने का ज्ञान था। हेमेन्द्र ने अपना हाथ उसके सिर पर रख दिया। यह विशेष स्नेह पाकर प्रीति की आँखों से दो बूंदें लुढ़क गयीं। हेमेन्द्र उन्हें ओठों से पीना ही चाहता था कि दरवाजे पर किसी की आहट सुन पीछे हट गया। प्रीति उठ कर बैठ गयी।

असल में इनके यहाँ कोई नहीं आया था। शायद कोई पास के मकान में आया हो। भावनाओं का ज्वार ठण्डा पड़ चुका था। अब हेमेन्द्र कुर्सी पर और प्रीति पलंग पर बैठी थी। कुछ क्षण यों ही बीते। हेमेन्द्र ने धीरे से कहा—"प्रीति!"

प्रीति ने उत्तर में उसकी ओर नजरें उठाती तो हेमेन्द्र ने आगे कहा, "इस तरह चुप क्यों हो? कुछ बातें करो ना।"

प्रीति फिर भी चुप रही।

"इस तरह हमेशा चुप रहने से कैसे चलेगा प्रीति?"

"चल तो रहा है।"

"ना, इसे चलना नहीं कहते।" फिर अति मृदु होकर हेमेन्द्र बोला, "क्या तुम अपनी सारी बातें, सारी उदासी मुझे नहीं सुना सकतीं?"

"कुछ है ही नहीं तो क्या सुनाऊँ?"

"तुम झूठ भी बोलती हो ?"

"आप कुछ भी समझिए।"

हेमेन्द्र अति स्नेहिल स्वर में बोला, "प्रीति, तुम अपने मन की व्यथा कह कर तो देखो। मैं जनम भर तुम्हारा साथ देने को तैयार हूँ।"

"ऐसा कुछ नहीं, कहो तो अच्छा है हेमेन्द्र !"

प्रीति के मन में पिछली कोई कसक उठी जिसने उसे मथ कर रख दिया। रवीन ने भी तो उसे लूटते समय ऐसा ही कहा था। उसके मुख पर कुछ कठोर रेखाएं खिच आयीं।

हेमेन्द्र ने उसके इस भाव की ओर ध्यान नहीं दिया और फिर कहा, "प्रीति, सच में मैं चाहता हूँ कि जीवन में तुम जैसी साथिन मिले।"

प्रीति हेमेन्द्र की ओर ऐसे देख रही थी मानो उसके शब्दों की सच्चाई को तौलना चाह रही हो। फिर दृढ़ स्वर में बोली, "ऐसी बातें करके पुरुष अपना मूल्य घटाया करते हैं।"

"तुम्हें मुझ पर विश्वास नहीं होता प्रीति ?"

"केवल तुम पर अविश्वास करने की बात नहीं हेमेन्द्र, मैं तो पुरुष मात्र की बात कहती हूँ।"

"क्या तुम सारे पुरुषों को एक ही श्रेणी में रखती हो ?"

"ऐसा भी नहीं है। पर......पर अब तो मैं इतना जानती हूँ कि जीवन से समझौता करते समय नारी को अधिक सतर्क होना चाहिए। जीवन के महासागर में ये शब्दजाल तो बुलबुलों की तरह सो जाते हैं।"

"प्रीति, तुम तो बिल्कुल फिलासफर बन गयी हो।" कहते हुए हेमेन्द्र उसे एकटक देखे जा रहा था।

"क्या सच में तुम मुझे चाहते हो हेमेन्द्र ?"

"सच प्रीति !"

"क्या तुम यह जान कर कि मैं एक बच्चे की माँ हूँ, फिर भी ?"

हेमेन्द्र सन्नाटे में आ गया। उसकी आँखें फैली-की-फैली रह गयीं।

प्रीति भावावेश में बात तो कह गयी, किन्तु कुछ क्षण बाद ही उसे अफ़सोस होने लगा। शायद उसने हेमेन्द्र से यह बात कह कर भारी भूल कर डाली है। कहीं ऐसा न हो कि आज तक की छिपी बात दूसरों को भी पता चल जाय। हेमेन्द्र का साथ तो छूट ही जायगा, साथ ही भाभी और भैया ······ ? उनकी इज्जत पर आँच आयगी।

अपनी बहन गीतिका का हाल जानने के लिए दीपिका बहुत विकल थी। वह जानती थी कि गीतिका ससुराल में सुखी नहीं है। हेमेन्द्र, जो अब मोहन लाल के पड़ोस में ही रहने चला गया था गीतिका के समाचार दिया करता था। दीपिका इतनी भावुक तो न थी, पर अपनी एकमात्र बहन के लिए उसके मन में असीम प्यार और संवेदना थी। उसने स्वयं ही तो गीतिका के घर जाना छोड़ ही दिया था। उसे कंचन का ध्यान आया और उसने कंचन से गीतिका का समाचार लाने को कहा।

गीतिका के घर से कंचन जब दीप के घर आयी तो वह कार्य में व्यस्त थी। कंचन भी काम में उसका हाथ बँटाने लगी।

कंचन बहुत बुद्धिमान न थी, किन्तु दिल की साफ थी। वह सदा नयी खिली कली की भाँति प्रफुल्लित रहती थी। बल्कि उसके स्वभाव में किसी सीमा तक चंचलता का समावेश भी था। आज दीपिका ने उसे अप्रत्याशित रूप में गंभीर पाया। वह बहुत धीरे और सोच-सोच कर बातें कर रही थी।

दीपिका ने कहा, "कंचन, आज तुम पहले वाली कंचन नहीं जान पड़ती ?"

कंचन ने दृष्टि ऊपर उठायी। दीपिका उस पर दृष्टि गड़ाये थी। वह स्वयं दीपिका के सम्मुख अपना हृदय खोल कर रखना चाहती थी। पर कहते हुए उसका अहं सामने आ खड़ा होता था। दीपिका ने अपनी व्यस्तता के कारण कभी उससे कुछ पूछा न था। अब उसकी मुद्रा में जिज्ञासा, स्नेह और सहानुभूति लक्ष्य करके उसने उसे सब कुछ बताने का निश्चय किया।

वह बोली, "गीता की तरह दुर्भाग्य से मैं भी ग्रसित होती जा रही हूँ दीप! नारी के भाग्य में उपेक्षा, प्रताणना और तिरस्कार ही लिखा है शायद।

पुरुष का प्रेम और आदर उसे प्राप्त हो, यह उसका सौभाग्य ही है ...... किन्तु सौभाग्य तो हर एक के हिस्से में नहीं आता ।"

उसका कंठ-स्वर उत्तेजनारहित, किन्तु संवेदनशील था । दीपिका ने उसके मुख पर एक तीखी, भेद जाने वाली दृष्टि डाली । अपना काम छोड़ कर वह उसके पास आ खड़ी हुई । उसका हाथ पकड़ कर उसे सोफे तक ले गई । उसे बिठा कर वह स्वयं भी उसके पास बैठ गई । कंचन के शरीर में हल्का-सा कंपन हो रहा था और उसका निचला ओंठ थरथरा रहा था । आज दीपिका से आत्मीयता पा कर उसकी रुद्ध भावनाओं का प्रवाह फूट पड़ा था । उसने बिना किसी के परामर्श लिए रवीन से विवाह किया था । अब वह माता-पिता से भी कुछ कहने योग्य न रही थी । किसी सखी अथवा सम्बन्धी से भी वह अपनी व्यथा न कह पायी थी । ऐसा करने में उसे अपना अपमान प्रतीत होता था । विशेषतः इसलिए कि यह उसकी अपनी भावुकता का परिणाम था । वह स्वाभिमानिनी भी थी और अपने दुर्भाग्य का रहस्य उद्घाटित कर सबकी चर्चा का विषय न बनाना चाहती थी । किन्तु, दीपिका पर विश्वास किया जा सकता था ।

दीपिका अब अपनी बहन का हाल तो भूल ही बैठी थी, कंचन का हाथ अपने हाथ में लेकर बोली, "क्या हुआ है कंचन तुम्हें ? मुझसे भी छिपायेगी क्या ?"

कंचन ने बोलने का प्रयत्न किया, किन्तु उसके थरथराते ओठों से ध्वनि न निकल सकी । उसकी आँखों में आँसू आ गये और शरीर में तीव्र कंपन की एक लहर दौड़ गयी ।

दीपिका विस्मित थी । वह उसके सिर पर हाथ फेरती हुई उसके आँसू भी पोंछने लगी । वह बोली, "अरे तू तो रोने लगी ! क्या बात है कंचन, बता तो ?"

कंचन ने यत्नपूर्वक अपने आँसू रोके और स्वस्थ होने का प्रयत्न करने लगी । फिर भी वह कई मिनटों तक कुछ न बोल पायी । अन्त में उसने रवीन

की बढ़ती हुई उदासीनता और उपेक्षा तथा हेमा से उसकी घनिष्ठता की सारी कथा कह सुनायी।

दीपिका सुन कर विचारमग्न हो गई। बहन के दुर्भाग्य का विषय अभी उसके मस्तिष्क पर बोझ ही बना हुआ था कि प्रिय सखी की यह नयी बात सामने आ गयी। रवीन के विषय में तो उसकी कभी अच्छी धारणा नहीं रही, पर हेमा को वह ऐसा नहीं समझती थी। ऐसी घटना निःसंदेह बड़ी दुःखद होती है। पति की उपेक्षा से बढ़ कर पत्नी को और क्या दुःख हो सकता है।

कंचन फिर से रो पड़ी और बोली, "मैं क्या करूं दीप? अब मुझे कुछ नहीं सूझता। रवीन के घर उसके साथ रहने को जी नहीं चाहता।"

दीप् ने कंचन को सांत्वना देते हुए कहा, "धीरज से काम लो कंचन! सब ठीक हो जायेगा।"

"अब तो मुझसे नहीं सहा जाता दीप!"

"इस तरह घबड़ाते से तो कुछ नहीं हो सकता कंचन!" कुछ देर ठहर कर वह फिर बोली—"ऐसा क्यों नहीं करतीं कि तुम स्वयं ही हेमा से सारी बातें स्पष्ट कर लो। उसका तुमसे कैसे सम्बन्ध है?"

ऊपरी सम्बन्ध तो ठीक है, पर वह जो मुझसे विश्वासघात कर रही है तो उससे भला क्या आशा की जाय। मुझे डर है कि कहीं इससे कोई झगड़ा न उठ खड़ा हो।"

"कुछ न होगा। मैं समझती हूँ हेमा अत्याधुनिक संस्कृति में बही जा रही है। उसे यह ध्यान ही न होगा कि उसके बहाव में कोई सुन्दर उद्यान उजड़ रहा है ...... और फिर यदि थोड़े झगड़े के बाद स्थिति संभलती भी है तो ऐसे झगड़े में कोई बुराई नहीं।"

कंचन चुप और विचारमग्न थी। थोड़ी देर चुप रहने के बाद बोली—"मैं तुम्हें सुनाने आयी थी गीतिका के हाल और सुना बैठी अपने। उसके तो सुनो।"

"अब किस-किस का हाल सुनूं।" दीपिका ने बड़े अन्यमनस्क भाव से कहा। उसकी अन्तर्दृष्टि एक बार अपने ही चारों ओर घूम गयी। ननद प्रीति

का दुःख, वृद्धावस्था में माता-पिता के अकेलेपन का दुःख, गीतिका का दुःख, घर की आर्थिक दशा का दुःख और कंचन जिसे वह सुखी समझती थी, उसका दुःख। सारे-के-सारे दुःख उसके मन में समा कर उसे मथने लगे। दीपिका का संवेदनशील हृदय और विचारशील मस्तिष्क अपने आसपास के इन स्नेहीजनों के दुःख-निवारण की समस्या में उलझने लगा।

"मैंने तुम्हें अपनी बात कह कर गलती की दीप!" स्वाभिमानी कंचन ने दीपिका के उत्तर से कुछ अपमानित-सा अनुभव करते हुए कहा।

"ऐसी बात नहीं कंचन!" उसने कंचन के दोनों हाथ अपने हाथों में लेते हुए कहा, "बात असल यह है कि मैं स्वयं इन दिनों बहुत परेशान-सी हूँ।"

"तु···तुम्हें क्या हुआ ?" कंचन कुछ विस्मित-सी हो कर बोली।

कंचन तो दीपिका को बहुत अधिक भाग्यशालिनी समझती थी। जिसका पति इतना अधिक चाहता हो, उसे भला क्या परेशानी हो सकती है ? कंचन ने अपने जीवन में केवल एक ही दुःख का अनुभव किया था और उसे ही वह सबसे बड़ा दुःख समझती थी।

"नहीं, ऐसा कुछ हुआ नहीं है।" दीपिका इतना कह कर चुप हो गयी।

"फिर भी ? तुम मुझसे छिपाती हो दीप! छिपाने लायक तो कुछ भी नहीं।"

"फिर ?"

"कहने लायक भी कुछ नहीं।"

इतने में ही दरवाजे पर आहट हुई। फिर दोनों ने देखा वहाँ प्रशान्त खड़ा था। उसने टोका, "सहेलियाँ बातों में ऐसी लगी थीं कि मुझे तो भूल ही गयी।"

"वाह, आप भी कहीं भूले जा सकते हैं ? मैं भूलूँ तो भूलूँ, मेरी सहेली आपको कभी नहीं भूल सकती!" मुस्कराते हुए कंचन ने कहा।

"अरे, मुझे याद करने की इन्हें अब फुर्सत कहाँ ?" प्रशान्त के सहज ही निकले शब्दों से दीपिका के मन में कहीं सुई-सी चुभ गई। प्रशान्त दीपिका का

सान्निध्य जितना चाहता है उतना वह उसे नहीं पाती। इसमें उसका क्या दोष? आठ घंटे की नौकरी फिर घर का काम, उसके साथ ही मानसिक तनाव भी। भला वह क्या करे? फिर भी दीपिका ने परिस्थितियों के साथ अपने को ढालना सीखा है। वह सहज ही विचलित नहीं होती। इतनी ज्यादा थक जाने पर भी अब वह प्रशान्त के साथ रात को बैठ कर कुछ बातें कर ही लेती है। अब उनकी बातें युवक-युवतियों-जैसी प्रेम-प्यार भरी या स्वप्न भरी नहीं होतीं। अब तो वे भी प्रौढ़ उम्र के दम्पतियों जैसी घर गृहस्थी, पढ़ाई-लिखाई और ब्याह-शादी की बातें करते रहते हैं। पर, उस रिक्तता का कोई हल नहीं जिसे वे दोनों अपने में अनुभव करते हैं।

कंचन ने प्रशान्त की बात पर कोई टिप्पणी नहीं की। वह दीपिका के चेहरे को एकटक देखती रही। शायद प्रशान्त की बात का उत्तर वह दीपिका के चेहरे पर पढ़ना चाह रही हो।

कुछ देर रुक कर कंचन चली गई।

"गीतिका के बारे में कुछ बताया कंचन ने?" प्रशान्त ने दीपिका से पूछा।

"क्या बताती, वह बेचारी तो अपने में ही उलझी है।"

"हाँ, रवीन जैसे भ्रमर-प्रवृत्तिवाले पति को पाकर कोई भी स्त्री सुखी नहीं रह सकती।"

"फिर पति कैसा होना चाहिए?" दीपिका ने बोझिल वातावरण को कुछ हल्का करने के लिए पूछा।

"इसका उत्तर तो पत्नियाँ ही दे सकती हैं। मैं तो स्वयं अपने को सफल नहीं समझता।"

दीपिका ने तो वातावरण हल्का करना चाहा था। पर वह और बोझिल होता नजर आया। वह उठ कर अन्दर काम करने चली गयी।

प्रशान्त अपनी बात के उत्तर में दीपिका से कोई अच्छा-सा उत्तर सुनना चाहता था। उसकी इस तरह बिना कुछ कहे चले जाना उसे अच्छा नहीं लगा। वह अन्दर ही अन्दर क्षुब्ध हो उठा।

यद्यपि प्रशान्त कठोर यथार्थ पर चल कर खड़ा हुआ था, फिर भी पत्नी के लिए उसकी अपनी कल्पनाएँ थीं। साफ-सुथरा, व्यवस्थित घर होगा और उसकी पत्नी हर समय उसकी प्रतीक्षा करती रहेगी चाहे वह दस मिनट के लिए बाजार सब्जी लेने ही क्यों न गया हो, चाहे दिन भर ऑफिस में ही रहा हो। रात को नित्य उसका सिर सहलाते हुए घंटों प्यार की बातें होंगी। उसका सारा ध्यान, सारी क्रिया, सारे काम सब उसके लिए होंगे। किन्तु दीपिका ? नारी-स्वातन्त्र्य के पक्षपाती प्रशान्त ने भी अपने में पत्नी के लिए ऐसी कल्पना सँजोयी थी। दीपिका जब खाना लेकर आयी तो प्रशान्त चुप बैठा था।

"अरे, अभी तक आपने कपड़े भी नहीं बदले ?"

प्रशान्त फिर भी बाहर की ओर देखता चुप बैठा रहा।

"आज खाना खाने का विचार नहीं है क्या ?" दीपिका ने उसके कंधे छूते हुए कहा।

"हाँ, कुछ भूख नहीं है।"

"भूख नहीं है ? जल्दी खा लेते तो अच्छा था।"

"क्यों ?" प्रशान्त ने कुछ रुखायी और गुस्से से पूछा।

"फिर मुझे जरा स्टोर जाना है।"

"आज तो छुट्टी है।"

"छुट्टी तो है, पर आजकल स्टॉक-चेकिंग चल रहा है। उसके लिए सभी को बुलाया गया है।"

"तुम हो जाओ। मैं खा लूंगा।"

दीपिका को जाने की जल्दी हो रही थी, इसलिए वह प्रशान्त के व्यवहार से नाराजगी को पकड़ नहीं पायी। उसने उसकी बात को सहजता से लिया और खाना खा कर चली गई।

शाम को आ कर उसने देखा कि प्रशान्त घर में नहीं है और खाना ज्यों-का-त्यों रखा हुआ है। प्रशान्त ने खाना क्यों नहीं खाया ? उसके मन में कुछ चिंता-सी उठी। उसने प्रीति से पूछा, "आज तुम्हारे भैया ने खाना क्यों नहीं खाया प्रीति ?"

"पता नहीं भाभी ! मैंने कॉलेज से आकर भैया से पूछा था तो उन्होंने उत्तर दिया, भूख नहीं है।"

"कहाँ गये हैं ?"

"पता नहीं।"

प्रीति और मुक्ता खाना खा कर सो गईं। दीपिका प्रशान्त की राह देखते हुए बहुत देर तक जागती रही, फिर बहुत थकी होने के कारण उसे भी नींद आ गयी। प्रशान्त मन में यह भावना लेकर घर में घुसा कि दीपिका निश्चय उसके इन्तजार में जागती हुई बैठी होगी। भावना के विपरीत स्थिति को पा कर उसके मन में कुछ रोष भर आया। दिन भर से क्षुब्ध तो था ही। कुछ आहट से दीपिका की आँखें खुलीं तो उसने प्रशान्त को कपड़े बदलते हुए देखा। वह उठ बैठी।

"खाना ले आऊँ ?"

"भूख नहीं है।" प्रशान्त ने धीमे से कह दिया।

"सुबह भी तो नहीं खाया तुमने ?"

"यों ही जरा भूख नहीं थी।"

"भूख क्यों नहीं ? थोड़ा-सा खा लो।" कहते हुए वह खाना लाने चली गयी। खाना सामने देख अब प्रशान्त अपनी भूख को रोक न सका।

खाना खाकर दोनों अपने-अपने बिस्तर पर सो गये। दोनों एक-दूसरे के पास आना चाहते थे, पर पहले कोई भी नहीं कर रहा था। दीपिका प्रशान्त की मन:स्थिति समझ रही थी। फिर पास जाने और बातें करने में कटु स्थिति न पैदा हो जाय इसलिए वह अपने ही बिस्तर पर लेटी रही। पूरे सप्ताह में मिली छुट्टी का अन्त इस तरह मानसिक तनाव के बीच हो गया।

सोमवार से शनिवार तक के दिन रविवार की इस छुट्टी की प्रतीक्षा में बीते, घूमने-फिरने, साथ रहने, खाने की सारी ही बातें रविवार की प्रतीक्षा में अस्त-व्यस्त छोड़ दी जाती थीं।

दीपिका जिन्दगी को जितनी सहज बनाना चाहती थी, वह उतनी ही उलझती जा रही थी। उसने समझा था, प्रीति को बुला लेने पर वह घर-गृहस्थी के भार से काफी मुक्त हो जायगी। प्रीति घर देख तो लेती थी, किन्तु वह एम० ए० की तैयारी कर रही थी, दूसरे उसका स्वास्थ्य भी बहुत गिर चुका था। थोड़ा ही काम का भार होने पर वह बीमार हो जाती और दीपिका का बहुत सारा समय उसकी देखभाल में लग जाता। जवान लड़की के माता-पिता की तरह प्रीति की शादी की चिन्ता भी अब प्रशान्त और दीपिका दोनों के मन में समा गयी थी। प्रशान्त को दीपिका का नौकरी करना अच्छा न लगते हुए भी वह अब कुछ नहीं कह पाता था। गृहस्थी, दो बहनें और मौसी को खर्च भेजना, इतना भार निश्चित ही वह अपने वेतन से पूरा नहीं कर सकता। इस तरह प्रशान्त की स्थिति भी अजीब हो गयी थी। यह कारण भी था कि वह अधिक क्षुब्ध रहता था। शादी के साल भर के अन्दर ही ये ऐसे हो गये जैसे दस साल से गृहस्थी की गाड़ी खींच रहे हों। यौवन की मृदु मादकता मानो बरसों पीछे छूट गयी हो।

अब एक नहीं, कई रविवार इसी तरह नीरस बीतने लगे थे। दीपिका रोज रात को नौकरी से त्यागपत्र देने का निश्चय करके सोती और सुबह उठ कर नौकरी पर चली जाती। नौकरी से त्यागपत्र देना अब इतना सहज नहीं था। पर यह नौकरी ही थी, जिसने दोनों के बीच की दूरी बढ़ा दी थी, जिसे दोनों ही नहीं सह पा रहे थे। उसे छोड़ कर भी दीपिका को अब जिन्दगी सहज होते नहीं दिखाई देती थी।

●●●

२३

दिन इसी तरह बीतते गये। हेमेन्द्र के साथ प्रीति की शादी करने का प्रशांत और दीपिका निश्चय-सा कर चुके। हेमेन्द्र से अच्छा लड़का और कहाँ मिल सकेगा ? प्रशान्त तो बिलकुख इस पक्ष में था, हालांकि दीपिका इससे सहमत नहीं थी। किन्तु, अधिक दौड़-धूप का दोनों के पास अवकाश न होने के कारण वह हेमेन्द्र के लिए ही मान गयी थी। हेमेन्द्र ने एकाएक प्रशान्त के घर आना बन्द कर दिया, दोनों ही इस उलझन में थे। प्रशान्त कहता, "हेमेन्द्र मनमौजी है। कहीं जाने लगता है तो महीनों नित्य जाता है। नहीं जाता, तो फिर हफ्तों दर्शन नहीं होते।"

"दीपिका प्रशान्त की इस बात से सहमत नहीं होती। हेमेन्द्र के एकाएक आना बन्द कर देने में कोई राज़ है। वह यही कहा करती।"

प्रशान्त को जहाँ कहीं भी हेमेन्द्र मिलता, वह उसे घर चलने का आग्रह करता। हेमेन्द्र हर बार कोई बहाना बना कर 'फिर आऊंगा' कह कर टाल देता।

हार कर प्रशान्त ने प्रीति के विवाह के लिए विज्ञापनों का सहारा लिया। एक अच्छे लड़के को देखभाल कर बड़ी सादगी के साथ प्रीति की शादी निपटा दी। प्रीति की शादी के बाद प्रशान्त और दीपिका दोनों ने ही अपने को काफी हद तक मानसिक रूप से स्वस्थ पाया। लेकिन शादी का कुछ कर्ज बढ़ जाने के कारण दीपिका नौकरी छोड़ देने के अपने विचार को कार्यान्वित न कर पायी। उसे अपना जीवन काफी नीरस-सा लगने लगा। यहीं बात प्रशान्त भी अनुभव कर रहा था। दीपिका जब भी किसी बेबी का चित्र देखती, उसके मन

में कहीं कोई अभाव खटक जाता। ······पर यदि अभी तक बेबी हो जाता, तो उस छोटे से बच्चे के साथ नौकरी करना कितना कठिन हो जाता। अब इस नीरस जिन्दगी में मातृत्व का यह प्यास उसे अधिक विकल कर देता। कोई किलकता शिशु निश्चय ही उसके और प्रशांत के बीच की खाई को पाट देगा। उसे पूर्ण विश्वास हो आया। प्रशान्त उसकी इस भावना को महत्व नहीं देता था। कैसे होते हैं ये पुरुष? दीपिका अपने मन में सोचती और तिलमिला उठती। अब दीपिका को जीवन बड़ा बोझ-सा लगने लगा। कॉलेज के दिनों में की गयी सुखद कल्पनाएँ बार-बार याद आ कर उसे बेचैन-सी कर जातीं। न कल्पना का सुन्दर सजा-सजाया घर था, न प्रेम-प्यार करने के लिए अवकाश ही। महीनों के अन्तराल पर दोनों शहर के ही किसी बगीचे में कभी घूमने भी गये हैं, तो मुक्ता साथ रहती है तथा घर लौट कर बहुत से काम निपटाने की चिन्ता। कई बार किसी हिल-स्टेशन पर जाने का कार्यक्रम भी बनाया तो बजट ने गवाही नहीं दी और अब तो कहीं बादलों के बीच जाकर इस तरह हनीमून मनाने की इच्छा और उत्साह दोनों मर चुके थे। केवल उनकी स्मृति ही टीस जाती थी। इतने दिनों में वह घर को भी अपनी कल्पना के अनुसार नहीं सजा पायी थी। अब दोनों आपस में बातें भी बहुत कम करते थे। अब उन्हें सोचना पड़ता था कि क्या बात करें। जो बातें कई बार कर चुके, उन्हीं को दुहराना निरर्थक लगता। दीपिका को लगता, उसका अस्तित्व समाप्त हो गया है। अब वह प्रशान्त की पत्नी, मुक्ता की भाभी और स्टोर की सेल्स-गर्ल मात्र है।

× × ×

रविवार को सुबह दीपिका अपनी माँ के यहाँ जाने की तैयारी करने लगी। माँ से मिले उसे बहुत दिन हो गये थे। उसने प्रशान्त से भी चलने को कहा। प्रशान्त ने उसे अकेली ही हो आने के लिए कहा। मुक्ता और प्रशान्त घर रह गये। दीपिका ने भी अधिक आग्रह नहीं किया। दामाद के सामने माँ खुल

कर बात नहीं कर पाती थी, हालांकि प्रशान्त-जैसे दामाद से कुछ भी नहीं छिपा था ।

माँ के घर गीतिका को देख दीपिका को बड़ा आश्चर्य हुआ । गीतिका उदास थी और उसका चेहरा पीला पड़ चुका था । दीपिका को देखते ही वह 'दीदी' कह कर उससे लिपट गयी । दीपिका ने उसे बाँहों में भर कर गले लगा लिया । बहन का स्नेहपूर्ण व्यवहार पा कर गीतिका के आँसू बह निकले । काफी देर रो लेने के बाद वह स्वस्थ हो पायी । उसके साथ माँ भी रोने लगी थीं । दीपिका मन में गहरा दुःख अनुभव करते हुए भी आँसू नहीं गिरा सकी । यदि वह भी माँ और गीतिका-जैसी भावुक होती तो रोये बिना न रहती ।

जब माँ-बेटी के आँसू थम गये तब तीनों में वार्त्तालाप आरम्भ हुआ । बात दीपिका ने ही आरम्भ की ।

"तुम यहाँ कब से हो गीतिका ?"

"तीन दिनों से ।" माँ ने उत्तर दिया ।

"इस बार बड़ी कृपा की तुम्हारे ससुराल वालों ने…!"

"हाँ कृपा ही की है ।" माँ ने ही उत्तर दिया । गीतिका चुप सिर झुकाये बैठी थी ।

दिन भर की बातों से दीपिका को सारी स्थिति का पता चल गया । मोहनलाल गुस्से में आ कर रक्ताल्पता रोग से ग्रस्त पत्नी को यहाँ छोड़ गया था । साथ ही रोष के साथ उसने गीतिका की बहुत-सी बुराइयाँ भी की थीं । मोहनलाल के अनुसार गीतिका को समाज में रहने का कोई भी ढंग नहीं आता । उसने कहा, "यहाँ तक कि मेकप और मैंचिग तक नहीं । यह सब भी मैं सह लेता, पर अब यह हमेशा बीमार रहती है और घर में भी किसी काम की नहीं । मेरे लिए तो यह घर दोनों के लिए बेकार है ।"

दीपिका समझ गयी कि ऐसी स्थिति में कोई भी स्त्री अपना स्वास्थ्य कैसे बना कर रख सकती है ।

"गीतिका, मेरी बात मानो, ऐसे निर्दय पति से तलाक ले लो ।"

"क्या कहती हो दीदी !" गीतिका ने अत्यन्त आश्चर्यपूर्वक कहा।

"सच कहती हूँ गीतिका ! इस तरह तो तुम जनम भर घुलती रहोगी।"

"नारियाँ तो जन्म-जन्मान्तर से ऐसी उपेक्षाएँ सहती आयी हैं, यही उनका धर्म भी है।"

"इस तरह के अत्याचार को यदि तुम धर्म समझती रहोगी तो तुम्हारा कभी उद्धार नहीं होगा। तुम इतनी दब्बू क्यों हो ?"

"दीदी, मुझे चाहे जो कहो, पर तलाक की सलाह मत दो।"

"कभी-कभी घाव को अच्छा करने के लिए छुरे का प्रयोग और उसका दर्द सहना पड़ता है गीतिका ! तुम स्वाभिमान से क्यों नहीं जीना चाहती ?"

"दीदी, क्या पति को त्यागने में ही स्वाभिमान है ?"

"पति यदि पत्नी को बराबरी का सम्मान देता हो, उसकी भावनाओं की कद्र करता हो, उसका अस्तित्व समझता हो तो उसे त्यागने का प्रश्न ही कहाँ उठता है। विवाहित जीवन एक सुखद समझौता है, और यह समझौता तभी तक टिक सकता है जब तक कि दोनों पक्ष परस्पर बराबरी का व्यवहार करें। तुम अकेली हो, कहाँ तक सहती रहोगी, जबकि तुम्हारा पति तुम्हारी भावनाओं की कदर सड़क की धूल बराबर भी नहीं करता।"

गीतिका अपनी बहन के कथनों को चुपचाप आश्चर्य में भरी सुने जा रही थी। भारत में और उसके घर में पैदा होकर पली कोई भी लड़की ऐसी बात कह सकती है। इस पर गीतिका को बहुत आश्चर्य हो रहा था। वह यह तो जानती थी कि दीपिका रूढ़िवादी विचारों को नहीं, पर उसके विचार यहाँ तक आधुनिक हैं, उसे ज्ञात न था। उसने धीमे से कहा, "दीदी, हमारे यहाँ तो औरत यह सब सदा से सहती आयी हैं।"

"सदा से सहती आयी हैं, तो सहती ही रहें, यह तो आवश्यक नहीं ?" दीपिका कुछ चिढ़ कर बोली, "हमें समस्या का हल सोचना चाहिए यह नहीं कि उसी में रो-रो कर मर-खप जाना चाहिए।"

गीतिका चुप थी। माँ भी अपनी विद्रोहिणी लड़की की बातें आश्चर्य से सुन रही थी। साथ ही यह भी सोच रही थी कि गीतिका तो मोहनलाल के साथ किसी प्रकार रही है, यदि उसके साथ दीपिका व्याह दी जाती तो क्या होता?

दीपिका जब चलने लगी तो उसने अपनी माँ को अच्छी तरह समझाया कि गीतिका को अब ससुराल मत भेजना और जल्दी ही कहीं इसकी नौकरी लगवा दो, ताकि यह अपने को कुछ स्वतन्त्र अनुभव कर सके।

"क्या नौकरी करके तू बहुत सुखी है?" माँ के इस प्रश्न का उत्तर दीपिका एकाएक खोज नहीं पायी। फिर भी उसने कहा, "गीतिका को इस स्थिति में तो नौकरी आवश्यक है। तुम बूढ़ी हो चुकी हो और गीतिका का भविष्य अन्धकारमय है। नौकरी करके वह अच्छी तरह रह सकेगी, पहन-ओढ़ सकेगी, खा-पी सकेगी। उसे अपनी जिन्दगी भार नहीं लगेगी।"

"पति-सुख के बिना यह सब कैसे अच्छा लग सकता है दीप?" माँ ने अपने ही संस्कारों की बात कही।

"माँ, तुम एक ही बात को पकड़ कर कब तक रोती-धोती रहोगी? जिन्दगी में जो कुछ मिल रहा है, उसी को अच्छा बनने दो।"

दीपिका अपने ही विचारों में खोयी हुई चली जा रही थी कि पीछे से किसी ने उसे आवाज देकर रोका।

"अरे, कंचन तुम?"

"हाँ, मैं तुम्हारे ही घर से आ रही हूँ। प्रशान्त ने बताया तुम माँ के यहाँ गयी हो।"

"पर कंचन; आज तुम पैदल कैसे? गाड़ी कहाँ गयी?"

"गाड़ी घर है। मैं पैदल चलने का अभ्यास कर रही हूँ।"

"क्यों भला?" दीपिका ने साश्चर्य पूछा।

"इसलिए कि मेरी अपनी तो कोई गाड़ी है नहीं, ससुराल में गाड़ी रवीन की है और पीहर में गाड़ी भैया-भाभी की।"

"कैसी बातें करती हो कंचन! क्या रवीन की गाड़ी तुम्हारी अपनी नहीं?"

"अरी दीप, यह सब औरत की भूल होती है कि वह पति की हर वस्तु को अपनी समझ लेती है।"

"इसमें औरत की कोई भूल नहीं। वह ठीक ही समझती है। घर की सभी वस्तुओं पर पति-पत्नी दोनों का अधिकार होता है।"

"अधिकार तो होता है, पर जिस अधिकार में अपनत्व न हो, उसे पाने में कोई सुख नहीं मिलता दीप!" कंचन बड़ी उदासी से बोलती जा रही थी। वे दोनों साथ-साथ धीमे कदमों से आगे बढ़ती रहीं।

कंचन ने अपनी जिन्दगी के लिए आज तक किसी से कभी कोई परामर्श नहीं लिया। अपने स्वाभिमानी स्वभाव के कारण स्वयं की अन्तर्व्यथा भी किसी के आगे नहीं कही थी। वह यदि कुछ खुलती भी थी, तो केवल दीपिका के सामने। कुछ देर चुपचाप चलते रहने के उपरान्त वह बोली, "दीप, अब मैंने निश्चय कर लिया है।"

"किस बात का?"

"रबीन का घर छोड़ देने का।" कंचन के स्वर में निश्चय की दृढ़ता थी।

यद्यपि कंचन के निश्चय पर उसे आश्चर्य नहीं था। फिर भी दीपिका एकाएक कुछ कह न सकी। कुछ क्षण बाद बोली—"एकाएक ऐसा निश्चय कर लेना कहाँ तक ठीक है कंचन?"

"मैं ऐसी अपमानजनक स्थिति में अधिक दिन नहीं रह सकती।"

"क्या तुमने रबीन या हेमा से स्पष्ट बात की है?"

"स्पष्ट बात किस आधार पर करूँ? वे तो इन बातों को उच्च वर्ग की सभ्यता समझते हैं। ऊपर से व्यवहार में ऐसे रँगे सियार हैं कि किसी को शिकायत करने का अवसर ही न दें।"

"देखो कंचन, थोड़ा धैर्य से काम लो। तुम्हारी-जैसी लड़की को इतनी जल्दी पति से अलग हो जाने का निश्चय कर लेना ठीक नहीं। जहाँ तक हो सके, आपस में एडजेस्ट होने का प्रयत्न करना चाहिए।"

"यह मैं जानती हूँ दीप, रवीन से मैंने अपनी इच्छा से शादी की थी, और अब इतनी जल्दी सम्बन्ध-विच्छेद कर लेना सभी की दृष्टि में ठीक नहीं होगा। पर मैं क्या करूँ दीप ?" कहते-कहते उसका गला भर आया। यदि यह रास्ता नहीं होता तो वह दीप के गले लग कर खूब रो लेती।

"कंचन, मैं भी यही चाहती हूँ कि जो कदम हम स्वयं उठाते हैं, या हमने उठाया है, उसे अंत तक निभाने का प्रयत्न करें। यदि बीच में ही डगमगा जायगे तो हमारे अपने विचारों का क्या मूल्य रह जायगा ?"

"दीप, अपने स्वाभिमान में जीनें का भी तो कोई सुख होता है। रवीन और मैं तो नदी के दो तट हैं जिनके मिलने की आशा करना व्यर्थ है।"

"कंचन यह सब समझते हुए भी मैं तुम्हें एकाएक पति का घर छोड़ देने का परामर्श नहीं दे सकती। क्योंकि तुम अपने स्वाभिमान के प्रति, अपने अधिकारों के प्रति, अपने अस्तित्व के प्रति जागृत हो। गीतिका-जैसी नहीं जो अपने को मिटा देने में ही अपना अस्तित्व समझती है।"

"तुम्हें पता नहीं दीप, मैं रवीन का घर छोड़ चुकी हूँ। केवल कोर्ट के कागजों पर सम्बन्ध-विच्छेद बाकी है।

"ऐं"......फिर अब कहाँ रहती हो ?" प्रश्न के साथ दीपिका चौक पड़ी।

"अलग कमरा लेकर।"

दीपिका जानती थी कि कंचन हेमा भाभी के कारण पिता के घर नहीं जा सकतीं। दूसरा कारण कंचन का अपना स्वाभिमान और अपनी इच्छा से किये विवाह का असफल होना भी उसे पिता के घर नहीं जाने दे सकता। कंचन के अपने नाम पर बहुत-सा पैसा जमा है, उसी से उसका खर्च चल सकता है। कंचन को पैसे की कभी कमी नहीं रही और न आगे रहेगी। पर जिन्दगी का एकाकीपन प्यार के लिए तड़पते अतृप्त मन की उलझन का हल वह इस पैसे में कैसे खोज सकेगी ? दीपिका सोचती हुई घर की सीढ़ियाँ चढ़ रही थी। कंचन रास्ते से ही अपने घर चली गई थी।

डा. दिल्ली रमण
कल्याणी रेस्मी स्मारक
पुस्तकालय

• • •

२४

दीपिका घर पहुँची तब अँधेरा हो चुका था। मुक्ता गुड़िया से खेलते-खेलते चटाई पर ही सो गई थी। प्रशान्त कोई चिट्ठी पढ़ रहा था।

दीपिका को देखते ही बोला, "बड़ी देर कर दी दीप ?"

"हाँ, रास्ते में कंचन मिल गई थी। बातों में बड़ी देर हो गयी।" कहते हुए दीपिका ने ध्यान से प्रशान्त का चेहरा देखा। वह बड़ा उदास जान पड़ता था। दीपिका ने मन-ही-मन सोचा, रविवार को भी उसके दिन भर बाहर रहने से प्रशांत उदास हो गया है। फिर चिट्ठी को देखती हुई बोली, "किसकी चिट्ठी है, प्रीति की ?"

"नहीं, मौसी की।"

"आज छुट्टी के दिन आयी है ?"

"हाँ, एक्सप्रेस है।"

"क्या लिखा है ?" दीपिका किसी अज्ञात आशंका से कांप उठी। चिट्ठी स्वयं पढ़ने के बजाय प्रशांत से ही दुबारा पूछने लगी, "क्या लिखा है ?"

"दीप, मौसी ने लिखा है कि बच्चे को लीवर हो गया है। वे स्वयं भी बीमार रहती हैं। बच्चा अब उनसे सँभाला नहीं जाता।"

प्रशान्त का चेहरा उदासी से स्याह हो गया। दीपिका मौन हो गई। बच्चों की किलकारियों से गूँजते घर की कल्पना करती रहने वाली दीप एक बच्चे का घर में आने का सुन कर पुलकित होने के बजाय उदासी और उलझन से भर उठी। आह, एक नन्हें शिशु की कल्पना कितनी सुखद लगती थी उसे ; उसका

दृढ़ विश्वास था कि नन्हा शिशु उनके बीच बढ़ते हुए को अलगाव अवश्य दूर कर देगा। इस समतल और नीरस जिन्दगी में वह एक मधुर झरना होगा। उसने प्रशान्त की ओर देखना चाहा पर उसकी आँखें उधर न उठ सकीं। प्रशान्त का उदास चेहरा देखना उसके लिए असह्य हो गया। वह रसोईघर चली गई।

दीपिका खाना बना चुकी थी। दोनों ने खाना खाया। मुक्ता को उठा कर खिलाया। रात का सारा काम निपटा कर दीपिका ने बिस्तर लगा दिये। इन सारे कामो के बीच कोई भी एक शब्द नहीं बोला। मुक्ता सो गई थी। प्रशान्त और दीपिका अपने-अपने विस्तरों पर चुपचाप पड़े थे। दीपिका के मन में अनेक बातें उठ-गिर रही थीं। गीतिका, कंचन, माँ, हेमा, प्रीति, रबीन, प्रीति का बच्चा सभी उसके चारों ओर घेरा बना कर खड़े थे। इस घेरे को तोड़ कर उसका मन बार-बार कॉलेज के दिनों की जिन्दगी में लौट जाने को विकल था। वर्तमान के दुःख में विगत सुख की स्मृतियाँ भी कितनी प्यारी लगती हैं। यदि व्यक्ति का बस चलता, तो वह अपनी जिन्दगी को यहीं ठहरा लेता। उस समय आज के जीवन की कल्पना कितनी सुखद लगती थी। सुन्दर घर, प्यारा पति, किलकता हुआ शिशु···आगे वह कुछ न सोच सकी। उसे लगा, आँखों के किनारे भींग आये हैं। स्टोर पर आते अनेक बच्चे उसकी आँखों में घूम गये। कोई माँ की उँगली पकड़े, कोई पिता की, कोई तुतला कर बोलता, क्रोध, लज्जा से नीचे देखता। सब प्यारे-प्यारे, भोले-भाले, सभी बच्चे एक-जैसे अपना तो हमें इसलिए अधिक प्यारा हो जाता है कि हम दिन-रात उसके साथ रहते हैं।

दीपिका उठ कर प्रशान्त के पास आ गयी। प्रशान्त ने उसकी ओर करवट ली। दीपिका ने प्रशान्त के सीने पर अपना सिर रख दिया। उसकी पलकों पर ओंठ रखते हुए प्रशान्त बोला, "दीप, मैं तुम्हें कोई सुख नहीं दे सका।"

उसका स्वर बहुत आर्द्र था।

"मुझे कोई दुःख नहीं प्रशान्त !" दीपिका आगे कहना चाहती थी कि बस तुम्हारा प्यार मिलता रहे। पर, उसका गला भर आया।

"मैं तो समस्याओं से जूझता आया हूँ दीप! पर मैंने तुम्हें भी इसी में डाल दिया।"

प्रशान्त का हाथ दीपिका के सिर पर घूम रहा था।

"ऐसा मत कहो प्रशान्त, मैं तो हर सुख-दुःख में तुम्हारे साथ हूँ।"

प्रशान्त की उँगलियाँ धीरे-धीरे दीपिका के बालों में घूम रही थीं। दीपिका एक नये शिशु के साथ नयी जिन्दगी की कल्पना में खो जाने का प्रयत्न कर रही थी। उसे याद आ रहे थे अपनी किशोरावस्था के वे दिन, जब वह प्रत्येक व्यक्ति के सुख-दुःख को नित्य अपनी बाँहों में भर लेने का संकल्प किया करती थी। धरती से उछल कर आकाश छू लेना चाहती थी। तब आकाश उसे कितना नजदीक लगता था। ऐसे ही, जैसे आज प्रशान्त। वह प्रशान्त से और सट गयी।

!! समाप्त !!

● ● ●

Reg. 6233
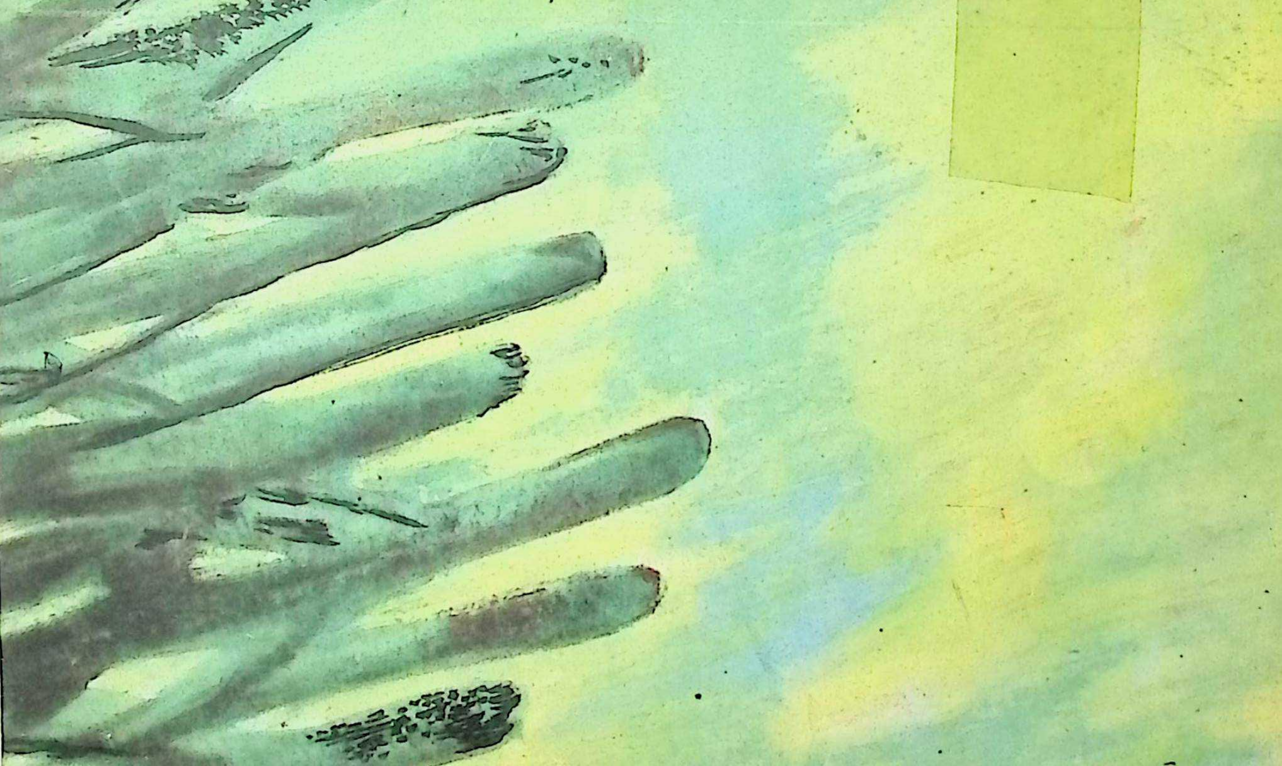
वन और पगडण्डियां • उर्म्किृष्ण